प्रकाशकीय

साधुमार्गी जैन परम्परा मे महान् क्रियोद्धारक आचार्यश्री हुक्मीचदजी म सा की पाट–परम्परा मे षष्ठ युगप्रधान आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा विश्व–विभूतियो मे एक उच्चकोटि की विभूति थे। अपने युग के क्रातदर्शी, सत्यनिष्ठ, तपोपूत सत थे। उनका स्वतन्त्र चिन्तन, वैराग्य से ओत–प्रोत साधुत्व, प्रतिभा–सम्पन्न वक्तृत्वशक्ति एव भक्तियोग से समन्वित व्यक्तित्व स्व–पर–कल्याणकर था।

आचार्यश्री का चिन्तन सार्वजनिक, सार्वभौम और मानव मात्र के लिए उपादेय था। उन्होने जो कुछ कहा वह तत्काल के लिए नही, अपितु सर्वकाल के लिए प्रेरणापुज बन गया। उन्होने व्यक्ति, समाज, ग्राम, नगर एव राष्ट्र के सुव्यवस्थित विकास के लिए अनेक ऐसे तत्त्वो को उजागर किया जो प्रत्येक मानव के लिए आकाशदीप की भॉति दिशाबोधक बन गये।

आचार्यश्री के अन्तरग मे मानवता का सागर लहरा रहा था। उन्होने मानवोचित जीवनयापन का सम्यक् धरातल प्रस्तुत कर कर्तव्यबुद्धि को जाग्रत करने का सम्यक् प्रयास अपने प्रेरणादायी उद्‌बोधनो के माध्यम से किया।

आगम के अनमोल रहस्यो को सरल भाषा मे आबद्ध कर जन–जन तक जिनेश्वर देवो की वाणी को पहुचाने का भगीरथ प्रयत्न किया। साथ ही, प्रेरणादायी दिव्य महापुरुषो एव महासतियो के जीवन वृत्तान्तो को सुबोध भाषा मे प्रस्तुत किया। इस प्रकार व्यक्ति से लेकर विश्व तक को अपने अमूल्य साहित्य के माध्यम से सजाने–सवारने का काम पूज्यश्रीजी ने किया है। अस्तु! आज भी समग्र मानव जाति उनके उद्‌बोधन से लाभान्वित हो रही है। इसी क्रम मे उदाहरणमाला भाग–3 किरणावली का यह अक पाठको के लिए प्रस्तुत है। सुज्ञ पाठक इससे सम्यक् लाभ प्राप्त करेगे।

युगद्रष्टा, युगप्रवर्तक ज्योतिर्धर आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा का महाप्रयाण भीनासर मे हुआ। आपकी स्मृति को अक्षुण्ण रखने और आपके कालजयी प्रवचन साहित्य को युग–युग मे जन–जन को सुलभ कराने हेतु समाजभूषण कर्मनिष्ठ आदर्श समाजसेवी स्व सेठ चम्पालालजी बाठिया का चिरस्मरणीय श्लाघनीय योगदान रहा। आपके अथक प्रयासो और समाज के उदार सहयोग से

श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर की स्थापना हुई। सस्था जवाहर साहित्य को लागत मूल्य पर जन–जन को सुलभ करा रही है और पण्डित शोभाचन्द्रजी भारिल्ल के सम्पादकत्व मे सेठजी ने 33 जवाहर किरणावलियो का प्रकाशन कर एक उल्लेखनीय कार्य किया हे। वाद मे सस्था की स्वर्ण जयन्ती के पावन अवसर पर श्री वालचन्दजी सेठिया व श्री खेमचन्दजी छल्लाणी के अथक प्रयासो से किरणावलियो की सख्या वढाकर 53 कर दी गई। आज यह सैट प्राय बिक जाने पर श्री जवाहर विद्यापीठ मे यह निर्णय किया गया कि किरणावलियो को नया रूप दिया जावे। इसके लिए सस्था के सहमत्री श्री तोलाराम वोथरा ने परिश्रम करके विषय अनुसार कई किरणावलियो को एक साथ समाहित किया और पुन सभी किरणावलियो को 32 किरणो मे प्रकाशित करने का निर्णय किया गया।

ज्योतिर्धर श्री जवाहराचार्यजी म सा के साहित्य के प्रचार–प्रसार मे जवाहर विद्यापीठ भीनासर की पहल को सार्थक और भारत तथा विश्वव्यापी वनाने मे श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ, वीकानेर की महती भूमिका रही। सघ ने अपने राष्ट्रव्यापी प्रभावी सगठन और कार्यकर्ताओ के वल पर जवाहर किरणावलियो के प्रचार–प्रसार और विक्रय प्रवन्धन मे अप्रतिम योगदान प्रदान किया हे। आज राघ के प्रयासा स यह जीवन निर्माणकारी साहित्य जैन–जैनेतर ही नही, अपितु विश्व धराहर वन चुका हे। सघ के इस योगदान के प्रति हम आभारी हैं।

धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती राजकुवर वाई मालू धर्मपत्नी स्व डालचन्दजी मालू द्वारा आरम्भ म समस्त जवाहर साहित्य प्रकाशन के लिए 60 000 रु एक साथ प्रदान किय गये थे जिससे पूर्व मे लगभग सभी किरणावलियॉ उनके सौजन्य से प्रकाशित की गई थी। सत्साहित्य प्रकाशन के लिए वहिनश्री की अनन्य निष्ठा चिरस्मरणीय रहेगी।

प्रस्तुत किरणावली का पिछला सस्करण श्रीमान् मोहनलालजी चोरडिया मद्रास के सौजन्य से प्रकाशित किया गया और प्रस्तुत किरण 18 (उदाहरणमाला भाग–3) के अर्थ सहयोगी श्री सुन्दरलाल दुगड कोलकाता हैं। सस्था सभी अर्थ–सहयागियो के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

निवेदक

चम्पालाल डागा — अध्यक्ष

सुमतिलाल बांठिया — मत्री

आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा.

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	थादला, मध्यप्रदेश
जन्म तिथि	वि स 1932, कार्तिक शुक्ला चतुर्थी
पिता	श्री जीवराजजी कवाड
माता	श्रीमती नाथीबाई
दीक्षा स्थान	लिमडी (म प्र)
दीक्षा तिथि	वि स 1948, माघ शुक्ला द्वितीया
युवाचार्य पद स्थान	रतलाम (म प्र)
युवाचार्य पद तिथि	वि स 1976, चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्य पद स्थान	जैतारण (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	वि स 1976, आषाढ शुक्ला तृतीया
स्वर्गवास स्थान	भीनासर (राज)
स्वर्गवास तिथि	वि स 2000, आषाढ शुक्ला अष्टमी

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा.

आचार्य श्री जवाहर–ज्योतिकण

+ विपत्तियो के तमिस्र गुफाओ के पार जिसने सयम साधना का राजमार्ग स्वीकार किया था।
+ ज्ञानार्जन की अतृप्त लालसा ने जिनके भीतर ज्ञान का अभिनव आलोक निरतर अभिवर्द्धित किया।
+ सयमीय साधना के साथ वैचारिक क्राति का शखनाद कर जिसने भू–मण्डल को चमत्कृत कर दिया।
+ उत्सूत्र सिद्धातो का उन्मूलन करने, आगम–सम्मत सिद्धातो की प्रतिष्ठापना करने के लिए जिसने शास्त्रार्थो मे विजयश्री प्राप्त की।
+ परतत्र भारत को स्वतत्र बनाने के लिए जिसने गाव–गाव, नगर–नगर पाद–विहार कर अपने तेजस्वी प्रवचनो द्वारा जन–जन के मन को जागृत किया।
+ शुद्ध खादी के परिवेश मे खादी–अभियान चलाकर जिसने जन–मानस मे खादी–धारण करने की भावना उत्पन्न कर दी।
+ अल्पारभ–महारभ जैसी अनेको पेचीदी समस्याओ का जिसने अपनी प्रखर प्रतिभा द्वारा आगम–सम्मत सचोट समाधान प्रस्तुत किया।
+ स्थानकवासी समाज के लिये जिसने अजमेर सम्मेलन मे गहरे चितन–मनन के साथ प्रभावशाली योजना प्रस्तुत की।
+ महात्मागाधी, विनोबाभावे, लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल, प श्री जवाहर लाल नेहरू आदि राष्ट्रीय नेताओ ने जिनके सचोट प्रवचनो का समय–समय पर लाभ उठाया।
+ जैन व जैनेतर समाज जिसे श्रद्धा से अपना पूजनीय स्वीकार करता था।
+ सत्य सिद्धातो की सुरक्षा के लिये जो निडरता एव निर्भीकता के साथ भू–मडल पर विचरण करते थे।

"हुक्म संघ के आचार्य"

1 आचार्य श्री हुक्मीचंदजी म सा – दीक्षा वि स 1870, स्वर्गवास वि स 1917

ज्ञान-सम्मत क्रियोद्धारक साधुमार्गी परम्परा के आसन्न उपकारी।

2 आचार्य श्री शिवलालजी म सा – दीक्षा वि स 1891, स्वर्गवास वि.स. 1933

प्रतिभा–सम्पन्न प्रकाण्ड विद्वान, परम तपस्वी, महान शिवपथानुयायी।

3 आचार्य श्री उदय सागरजी म.सा – दीक्षा 1918, स्वर्गवास वि स 1954

विलक्षण प्रतिभा के धनी, वदीमान–मर्दक विरक्तो के आदर्श विलक्षण।

4. आचार्य श्री चौथमलजी म सा – दीक्षा 1909, स्वर्गवास वि स. 1957

महान क्रियावान, सागर सम गभीर, सयम के सशक्त पालक, शात–दात, निरहकारी, निर्ग्रन्थ शिरोमणि।

5 आचार्य श्री श्रीलालजी म सा – दीक्षा 1944, स्वर्गवास वि स 1977

सुरा–सुरेन्द्र–दुर्जय कामविजेता, अद्भुत स्मृति के धारक, जीव–दया के प्राण।

6 आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा – दीक्षा 1947, स्वर्गवास वि स 2000

ज्यातिर्धर, महान क्रातिकारी, क्रातदृष्टा युगपुरुष।

7 आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा – दीक्षा 1962, स्वर्गवास वि स 2019

शात क्राति के जन्मदाता, सरलता की सजीव मूर्ति।

8 आचार्य श्री नानालालजी म सा – दीक्षा 1996 स्वर्गवास वि स 2056

समता–विभूति, विद्वद्शिरोमणि, जिनशासन प्रद्यातक, धर्मपाल प्रतिबोधक समीक्षण ध्यानयोगी।

9 आचार्य श्री रामलालजी म सा – दीक्षा 2031, आचार्य वि स 2056 से

अगमज्ञ तरुण तपस्वी तपोमूर्ति उग्रविहारी सिरीवाल प्रतिबोधक व्यसनमुक्ति के प्रबल प्ररक बालब्रह्मचारी प्रशातमना।

अर्थ–सहयोगी परिचय

उदारमना, समाजसेवी, संघ समर्पित, शिक्षा और चिकित्सा सेवा में अग्रणी, दानवीर श्री सुन्दरलालजी दुगड

कर्मवीरो, शूरवीरो और दानवीरो की पुण्यभूमि मरुधरा की पावनभूमि, मा करणी की लीला स्थली देशनोक मे ई 1954 मे श्री मोतीलालजी दुगड के ज्येष्ठ पुत्र के रूप मे आपने जन्म लिया। स्वनाम धन्य स्व श्री मोतीलालजी दुगड धर्मनुरागी, दानवीर तथा शिक्षा प्रेमी थे। समाज और गाव मे आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। श्री सुन्दरलाल जी दुगड ने अपनी प्रारभिक शिक्षा देशनोक मे ही प्राप्त की। श्री करणी उच्च माध्यमिक विद्यालय, देशनोक से हायर सैकण्डरी परीक्षा उतीर्ण कर आप 1971 ई मे कोलकाता आ गए। कोलकाता मे आपने अपने पैतृक व्यवसाय स्टेशनरी और मनिहारी को सभाला। 1972 ई मे आपका पाणिग्रहण सस्कार बीकानेर निवासी सुश्रावक श्री केवलचन्दजी सेठिया की सुपुत्री कुसुमदेवी के साथ हुआ।

कालान्तर मे आपने रेडीमेड कपडे व कपडो की खुदरा दुकानदारी की तथा 1983 ई मे आपने हावडा मे भवन निर्माण का कार्य प्रारभ किया। इस क्षेत्र मे आपने शिखर की ओर आरोहण किया। 1994 ई मे आपने औद्योगिक कार्यो के तहत सिगरेट फैक्ट्री, जूट मिल और दैनिक बगला अखबार का प्रकाशन प्रारभ किया। वर्तमान मे आप टोबैको, प्लास्टिक, जूट फैक्ट्री, ऑटोमोबाइल, भवन निर्माण तथा प्लाईवुड उद्योग से जुडे हुए है। सन् 1994 ई से आपके इकलौते पुत्र श्री विनोद दुगड ने व्यवसाय के क्षेत्र मे प्रवेश किया और आप तब से निरन्तर सफलतापूर्वक व्यवसाय के क्षेत्र मे अग्रसर हैं। श्री विनोद दुगड ने अपने कौशल और नवीन योजनाओ से पिता के कार्य मे कधे से कधा लगाकर सफलता के सोपान चढे है। श्री दुगड पिता पुत्र द्वारा निर्मित भवनो की कोलकाता महानगर मे विशिष्ट ख्याति है।

श्री सुन्दरलालजी दुगड की पुत्री रूपरेखा का विवाह मई 2002 मे श्री आलोक झाबक (जैन) के साथ धूमधाम से हुआ। अपनी पुत्री के विवाह मे श्री दुगड ने हृदय खोलकर अतिथि सत्कार किया और उच्चकोटि के वैवाहिक प्रबन्धन के नवीन प्रतिमान स्थापित किए। आपको अपनी सुपुत्री रूपरेखा से सामाजिक कार्यो मे अर्थ समर्पण की अनन्त प्रेरणा प्राप्त हुई। श्री सुन्दरलालजी के वर्तमान मे दो सुपोत्रिया यशस्वी और मनस्वी दुगड तथा एक दोहित्र श्री जीत झाबक है।
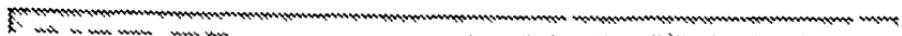
श्री सुन्दरलालजी दुगड का सार्वजनिक जीवन प्रेरणादायी है। दीन–दुखियो की सेवा करना, कलाकारो, साहित्यकारो पत्रकारो और बुद्धिजीवियो का सम्मान करना, अभावग्रस्त परिवारो की कन्याओ के विवाह मे सहयोग करना तथा असाध्य रोगो के उपचार मे सहायता करना आपका सहज स्वभाव हे। आप अपने अधीनस्थ कर्मचारियो से भ्रातृत्व करते हैं।

श्री सुन्दरलालजी दुगड अनेकानेक लोकमगलकारी सस्थाओ मे विभिन्न पदो को सुशोभित कर रहे है। श्री जैन विद्यालय हावडा के आप यशस्वी सभापति हे। आप श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता के कार्यकारिणी सदस्य, श्री जैन सभा कोलकाता के पूर्व उपसभापति तथा कार्यकारिणी सदस्य, जैन दर्शन समिति के पूर्व उपसभापति एव कार्यसमिति सदस्य, श्री करणी गौशाला देशनोक के पूर्व अध्यक्ष, जैन कल्याण सघ कोलकाता के सरक्षक, महेन्द्र मुनि मिशन कोलकाता के न्यासी बीकानेर कार्डिक केयर फाउण्डेशन कोलकाता के न्यासी, देशनोक नागरिक सघ कोलकाता के सभापति, श्री जैन श्वे सघ कोलकाता के न्यासी और कार्यकारी अध्यक्ष, आदिनाथ जेन श्वे टैम्पल ट्रस्ट हावडा के न्यासी, श्री अ भा साधुमार्गी जेन सघ के पूर्व उपाध्यक्ष ओर वर्तमान कार्यकारिणी सदस्य राजस्थान परिषद् कोलकाता के उपाध्यक्ष, जवाहर विद्यापीठ कानोड (राज) के सभापति पश्चिम वग प्रा मारवाडी सम्मेलन के सरक्षक ओर आर्यन्स स्कूल अगरपाडा के न्यासी सहित अनेकानेक सस्थाओ मे पदाधिकारी हे।

लोक कल्याण हेतु, शिक्षा, चिकित्सा समता भवन आदि के लिए आपने स्थायी भवनो के निर्माण मे गजब का अर्थ विन्यास किया हे। आपन इन स्थायी कार्यों के साक्षी रूप नागोर, नोखा, श्रीडूगरगढ, उदयपुर मगलवाड चोराहा भीलवाडा, कानोड, मोरवन, जोधपुर दाताग्राम नानेश नगर, जरानाथधाम कतरियासर सुहरसा (जिला भिवानी), सिलचर, तेजपुर, कटिहार, महात (जिला धनवाद) क्षत्रियकुण्ड शिखरजी, वीरायतन, रतलाम, कपासन रताना खिरकिया कानवन हावडा देशनोक, कोलकाता गगासर आदि सुवासित है।

एस एल दुगड चेरिटेवल ट्रस्ट कोलकाता के माध्यम से आप अहर्निश सवारत रहते हे। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती कुसुमजी भी परम्परा ओर प्रतिभाशालिता का समुज्ज्वल रूप हैं। आप धर्मपरायण आस्तिक ओर उदारमना हैं।

ऐसे यशस्वी दानवीर समाजसेवी श्री सुन्दरलाल दुगड पर परिवार समाज ओर सघ को गोरव हे।

अनुक्रम

1 : अध्यवसाय

एक नगर मे दो मित्र रहते थे। उसी नगर मे कुछ महात्मा भी आये थे और वेश्या भी आयी थी। एक ही समय पर एक जगह तो महात्मा का उपदेश होने वाला था और दूसरी जगह वेश्या का नाच। एक मित्र ने दूसरे मित्र से कहा कि चलो, उस नयी आई हुई वेश्या का नाच देखने चले। दूसरे मित्र ने कहा– नही, मै नाच देखने नही चलूगा, मै महात्मा का उपदेश सुनने जाऊगा। दोनो मित्र अपनी–अपनी रुचि के अनुसार दोनो स्थानो पर गये।

वेश्या का नाच हो रहा था। वेश्या चारो ओर घूम–घूम कर कटाक्षपूर्वक सब की ओर देखती हुई नाच रही थी। लोग वेश्या की प्रशसा के पुल बाध रहे थे। उसी समय वह मित्र उस नाच की महफिल मे पहुचा। वेश्या को इस प्रकार नाचते और लोगो को उसकी प्रशसा करते देखकर उस मित्र को विचार हुआ कि आत्मा तो इस वेश्या की भी शुद्ध है परन्तु न मालूम किन पापो के कारण इसकी आत्मा पर अज्ञान का आवरण है। इसी से यह अपने इस सुन्दर शरीर को विषय–भोग मे लगा रही है और थोडे से धन के लोभ मे अपना शरीर कोढी को सौपने मे भी सकोच नही करती है। हाय ! हाय !! यह तो साक्षात ही नरक की खान है। ये देखने वाले भी कैसे मूर्ख हे जो इसके चारो ओर इस प्रकार लगे हुए हे जैसे मरे हुए पशु को कुत्ते घेर लेते हैं। यद्यपि यह वेश्या किसी व्यक्ति विशेष को नही देखती है–सबको उल्लू बनाने के लिये उनकी तरफ देखती है–फिर भी ये सब लोग अपने–अपने मन मे यही समझ रहे है कि यह मुझे ही देख रही है। मै इस पापस्थान मे कहॉ आ गया ! मित्र ने कहा था फिर भी मे महात्मा का उपदेश सुनने के लिये नही गया। धन्य हे मित्र जो इस समय महात्माओ के पास बेठा हुआ धर्मोपदेश श्रवण कर रहा होगा और अपना कल्याण साधता होगा।

वेश्या की महफिल मे गया हुआ मित्र तो इस प्रकार विचार कर रहा हे तथा महात्माओ का उपदेश सुनने के लिये गये हुए मित्र को धन्य मान

रहा हे, परन्तु जो मित्र महात्मा के समीप गया था वह कुछ आर ही विचारता हे। जिस समय वह महात्माओ के समीप पहुचा उस समय महात्मा लोग विषयो के प्रति घृणोत्पादक वेराग्य का उपदेश सुना रहे थे। इस मित्र को महात्माओ का उपदेश रुचिकर नही लगा, इससे वह अपने मन मे कहने लगा कि मे कहा आ गया ! मित्र ने कहा था, फिर भी मे नाच देखने नही गया। धन्य हे मित्र को जो इस समय महफिल मे बेठा हुआ आनन्द रो नाच देख रहा होगा ओर गाना सुन रहा होगा।

दोनो मित्र इस प्रकार अपने-अपने मन मे विचार कर रहे हे ओर अपनी निन्दा करते हुए दूसरे मित्र की प्रशसा कर रहे हे। वेश्या के यहा गया हुआ मित्र वेश्या के नाच को घृणापूर्वक देखता हे, उसका मन साधुओ के उपदेश मे लगा हुआ हे, और साधुओ के यहा गये हुये मित्र का मन वेश्या क नाच मे लगा हुआ हे तथा वह नाच देखने के लिये गये हुए मित्र की प्रशसा कर रहा हे। इस तरह वेश्या के नाच- जो पापस्थान हे मे वेठा हुआ मित्र तो पुण्य-प्रकृति वाध रहा हे ओर साधु के स्थान-जो धर्मस्थान हे मे वेठा हुआ मित्र पाप-प्रकृति वाध रहा हे। क्योकि पाप पुण्य या धर्म अध्यवसाय पर निर्भर ह। वेश्या के नाच मे वेठे हुए मित्र के अध्यवसाय अच्छे तथा साधुओ क उपदश स्थान मे वेठे हुए मित्र के अध्यवसाय वुरे हे।

2 : सज्जन–स्वभाव

एक ब्राह्मण गगा के किनारे खडा हुआ था। किनारे के वृक्ष पर एक बिच्छू चढा था। वह गगा के जल मे गिर पडा और तडपने लगा। यह देखकर ब्राह्मण को दया आ गई। उसने एक पत्ता लेकर बिच्छू को उठाया। लेकिन बिच्छू हाथ पर चढ गया और उसने हाथ मे डक मार दिया। डक लगते ही ब्राह्मण का हाथ हिल गया और बिच्छू फिर पानी मे गिर पडा। ब्राह्मण ने बिच्छू को फिर उठाया लेकिन फिर भी ऐसा ही हुआ। ब्राह्मण ने तीन–चार बार बिच्छू को उठाया लेकिन हर बार बिच्छू ने उसे काटा। यह हाल देखकर वहा खडे कुछ लोग कहने लगे–यह ब्राह्मण कितना मूर्ख है ! बिच्छू इसे बार–बार काटता हे और यह उसे बार–बार उठाता है ! उसे मरने क्यो नही देता ?

इन लोगो के कथन के उत्तर मे ब्राह्मण ने कहा– बिच्छू अपना स्वभाव प्रकट कर रहा है और मै अपना स्वभाव दिखला रहा हू। जब बिच्छू अपना स्वभाव नही त्यागता तो मै अपना स्वभाव कैसे त्याग दू?

3 : हृदयबल

सुना है, एक अमेरिकन पुरुष भारत मे आया। एक भारतीय से उसकी मित्रता हो गई। अमेरिकन अपना कार्य समाप्त करके अमेरिका लोट गया। उसका वह भारतीय मित्र जव अमेरिका गया, तव उसने अपने अमेरिकन मित्र से मिलने का विचार किया। वह उसके घर पहुचा। साहव उस समय घर नही था। उसकी पत्नी ने भारतीय अतिथि का सत्कार करके उसे विठाया। भारतीय ने पूछा–साहव कहा गये हे ? मेम साहिवा ने कहा–आप वेठिये, अव उनके लोटने मे कुछ ही समय वाकी हे। आते ही होगे।

भारतीय सज्जन वेठे रहे। थोडी देर वाद ही उन्होने देखा कि साहव आ रहे ह मगर उनके दोनो कन्धो पर दो कुदाल रखे हे ओर व मिट्टी से लथपथ हैं। भारतीय सज्जन मन ही मन सोचने लगा–भारत मे यह इतने ऊचे पद पर कार्य करता था ओर वडे ठाट से रहता था। यहा इसका यह कैसा हाल ह ? क्या इसका दिवाला निकल गया हे? इस प्रकार सोचते हुए वह भारतीय उससे मिलने के लिए आगे वढे। उन्होने साहव का अभिवादन किया। मगर साहव उससे कुछ भी न वोले। जव साहव की [illegible] पानी दिया और साहव स्नान करके अपनी वेठक म आये तव वह अपने मित्र

इस पकार की विचारधारा हृदयबल से ही उत्पन्न होती है। भारतीय लोग हृदयबल को जल्दी भूल जाते है। इस कारण जहा कोई बी ए एल एल बी होता है कि दो–चार आदमियो के लिए भी भारभूत हो जाता है। कारण यही है कि उसका हृदयबल दब जाता है और मस्तिष्क का बल उमड जाता है।

4 : शिक्षा

एक राजा था। उसके एक लडका था, जो गुरुकुल मे शिक्षा प्राप्त करता था। इधर राजा को अपने शरीर पर कुछ ऐसे चिह्न दिखाई दिये जो वृद्धावस्था के द्योतक थे। उन चिह्नो को देखकर राजा ने विचारा कि बुढापे का नोटिस आ गया है, इसलिये मुझे कोई ऐसा काम करना चाहिये जो भावी सन्तान के लिए आदर्श–रूप भी हो और जिसके करने से मेरी आत्मा का भी हित हो। इसलिये मुझे राजपाट राज–पुत्र को सौप कर दीक्षा ले लेनी उचित है।

इस प्रकार निश्चय कर राजा ने प्रधान को बुलाकर अपने विचार प्रकट करते हुये राजकुमार के राज्याभिषेक की तैयारी करने का हुक्म दिया। सारे नगर मे यह समाचार फैल गया कि राजा अपने राजपाट का भार पुत्र को सौप कर दीक्षा ले रहा हे। होते–होते यह खबर उस गुरुकुल मे भी पहुची जिसमे कि कुमार पढ रहा था। कुमार को पढाने वाले शिक्षक ने विचार किया कि राजकुमार कल राजा बनेगा, लेकिन अभी इसे वह शिक्षा तो देनी रह ही गई है जिस शिक्षा से जनता का हित होने वाला हे। आज तो मे इसका गुरु हू और यह मेरा विद्यार्थी है। आज मै इसे जेसी ओर जिस तरह चाहू शिक्षा दे सकता हू, परतु कल जब कि यह राजा हो जाएगा, इसे कुछ न तो कह ही सकूगा, न यह मानेगा ही। इसे जो शिक्षा देनी हे वह कई दिनो मे दी जाने की हे ओर यह मेरे पास केवल आज भर हे। कल तो चला ही जाएगा। अव वहुत दिनो मे दी जाने वाली शिक्षा इसे आज ही केसे दे दू ?

शिक्षक इस चिन्ता मे पड गया। सोचते–सोचते उसने वह उपाय सोच लिया जिससे कुमार को वह आज ही मे शेप शिक्षा दे सके। उसने कुमार को एकान्त मे बुलाकर उसके हाथ–पेर वाध दिये ओर एक वेत से खूव पीटा। राजकुमार एक तो सुकुमार था दूसरे उसने मार के नाम पर कभी एक थप्पड

भी नही खाया था इसलिये उसे शिक्षक का उक्त व्यवहार बहुत दु खदायी हुआ। उसके शरीर की चमडी निकल आई। वह अपने मन मे दु ख कर के ही शिक्षक के विषय मे बहुत से बुरे सकल्प कर रहा था। यद्यपि इस मार से राजकुमार को बहुत पीडा हुई परन्तु शिक्षक ने उसे इतने मे ही नही छोडा अपितु एक अन्धेरी कोठरी मे बन्द कर दिया। निश्चित समय तक राजकुमार को एक कोठरी मे बन्द रखकर शिक्षक ने उसे कोठरी से निकाला और अपने शिष्यो के साथ उसे उसके घर भेजकर राजा से कहलवा दिया कि तुम्हारा पुत्र सब शिक्षा पाप्त कर चुका है अत शिक्षक ने इसे आपके पास लौटा दिया है।

राजकुमार अपने पिता के पास पहुचा। अपने शरीर को बताते हुए उसने राजा से शिक्षक के निर्दयतापूर्ण व्यवहार की शिकायत की। पुत्र के शरीर पर मार के चिह्न देख और उसकी शिकायते सुनकर राजा को शिक्षक के ऊपर बहुत ही क्रोध हुआ। उसने उसी क्रोधावेश मे यह आज्ञा दी कि शिक्षक को पकड कर फासी लगा दी जावे।

राजा की आज्ञा पाकर राज–सेवक शिक्षक को पकड लाये। शिक्षक अपने मन मे समझ गया कि यह सजा राजकुमार को शिक्षा देने की ही है। उसने राजकर्मचारियो से पूछा कि मैं क्यो पकडा जाता हू? उन्होने उत्तर दिया कि यह हम नही जानते परन्तु राजा की आज्ञा तुम्हे फासी देने की है। अत तुम फासी पर चढने को तैयार हो जाओ।

फासी के समय नियमानुसार शिक्षक से उसकी अन्तिम इच्छा पूछी गई। शिक्षक ने कहा कि मेरी इच्छा केवल यही है कि मै राजा से मिलकर एक बात पूछ लू। अधिकारियो ने शिक्षक की इस इच्छा की सूचना राजा को दी। राजा ने पहिले तो यह कह कर कि ऐसे आदमी का मुह नही देखना चाहता शिक्षक से मिलना अस्वीकार कर दिया, परन्तु अधिकारियो के समझाने–बुझाने पर उसने शिक्षक से मिलना और उसकी बात का उत्तर देना स्वीकार कर लिया।

शिक्षक को राजा के सामने लाया गया। राजा को शिक्षक का प्रसन्न चेहरा देखकर आश्चर्य हुआ। शिक्षक के चेहरे से यह ज्ञात होता था कि जैसे इसे मरने का दु ख नही, किन्तु सुख है। राजा ने शिक्षक से कहा कि तुम क्या कहना चाहते हो कहो । शिक्षक ने कहा कि मे आपके पास प्राण–भिक्षा के लिये नही आया हू। मुझे फासी लगने का किचित भी भय नही है। मे केवल आपसे यह जानना चाहता हू कि आपने मुझे किस अपराध पर फासी का हुक्म

दिया हे ? सव को मेरा अपराध मालूम हो जाना अच्छा हे नही तो मुझ पर यह कलक रह जायेगा कि शिक्षक ने न मालूम कोनसा गुप्त अपराध किया था, जिससे उसे फासी दे दी गई।

शिक्षक की इस वात ने तो राजा का आश्चर्य ओर भी वढा दिया। वह विचारने लगा कि यह भी केसा विचित्र आदमी हे, जो मरने से भय नही करता है। उसने शिक्षक की वात के उत्तर मे कहा कि क्या तुमको अपने अपराध का पता नही हे ? तुमने कुमार को वडी निर्दयतापूर्वक पीटा ओर कोठरी मे बन्द कर दिया, फिर अपराध पूछते हो?

राजा के उत्तर के प्रत्युत्तर मे शिक्षक ने कहा कि मेने तो कुमार को नही मारा । शिक्षक की यह बात सुनकर राजा का आश्चर्य क्रोध मे परिणत हो गया। वह शिक्षक तथा वहा पर उपस्थित लोगो को कुमार का शरीर दिखाकर कहने लगा कि मै शिक्षक की अब तक की बात से तो प्रसन्न हुआ था, परन्तु अब यह मरने के भय से झूठ बोलता हे। देखो, इसके शरीर पर अब तक मार के चिह्न मोजूद है, फिर भी यह कहता हे कि नही मारा।

राजा ने कुमार के मुह से घटना की समस्त वाते कहलवाई। सव लोग शिक्षक की निन्दा करते हुए कहने लगे कि वास्तव मे इसने फासी का ही काम किया है। शिक्षक ने कहा कि मेने इसे मारा जरा भी नही हे। जिसे आप मार कहते है, वह तो मैने शिक्षा दी हे। यदि शिक्षा देने के पुरस्कार मे ही आप मुझे फासी दिलवाते हे तो यह आपकी इच्छा। मुझे आपसे इतनी वात कहनी थी, अव आप मुझे फासी लगवा दीजिये।

शिक्षक की वात ने तो सभी को आश्चर्य मे डाल दिया। राजा ने शिक्षक से कहा कि तुम्हारी इस वात का अर्थ समझ मे नही आया कि तुमने इसको इतना कष्ट दिया और फिर कहते हो कि मेने मारा नही, किन्तु शिक्षा दी हे ? वतलाओ, तुम्हारे इस कथन का रहस्य क्या हे ? शिक्षक कहने लगा कि मुझे मालूम हुआ कि राजकुमार कल राजा होगा। मेने विचारा कि कुमार अव तक सुख मे ही रहा हे, दु ख का इसे किचित भी अनुभव नही हे। इससे यह राज्याधिकार मे उन्मत्त होकर विना विचार किये ही प्रजा मे से किसी को केद करने की आज्ञा देगा। यह इस बात का विचार नही करेगा कि मारने वाधने ओर केद करने से इसे केसा दु ख होगा । इस प्रकार विचार कर मेने निश्चय किया कि कुमार को इसका अनुभव करा दिया जाए जिससे यह आज्ञा देते समय अपने अनुभव से दूसरे के कष्ट को जान सके ओर विचार कर आज्ञा दे। यद्यपि यह म पहिले ही जानता था कि कुमार को म जो शिक्षा

दे रहा हू, इसके बदले मे सम्भव हे कि मुझे फासी की सजा भी मिले। लेकिन इसके लिए मेने यही निश्चय किया कि मेरी फासी से अनेक आदमी कष्ट से बचेगे इसलिए मुझे फासी का भय नही करना चाहिये और कुमार को शिक्षा दे देनी चाहिये। यही विचार कर मेने कुमार को शिक्षा दी है, कुमार को मारा नही है।

शिक्षक की बात सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। वह शिक्षक की प्रशसा करने लगा कि तुमने वह काम किया हे, जिसके विषय मे मुझे अब तक चिन्ता थी। तुमने मुझे चिन्तामुक्त कर दिया। यद्यपि तुम्हारे इस कार्य से प्रसन्न होकर मेरे लिए उचित था कि मे तुम्हे पुरस्कार देता, परन्तु मै इस रहस्य को अब तक न जान सका था, इसलिए मैने तुम्हे फासी देने की आज्ञा दे दी। अब मे तुम्हे फासी देने की अपनी आज्ञा को वापिस लेता हू और दस गाव की जागीर देकर तुम्हारे सिर पर यह भार देता हू कि जिस तरह इस बार तुमने अपने प्राणो की परवाह न करके कुमार को शिक्षा दी है, इसी प्रकार सदा शिक्षा देते रहना। राजा की बात के उत्तर मे शिक्षक ने कहा कि आपकी यह आज्ञा शिरोधार्य हे परन्तु मै जागीर नही ले सकता। यदि जागीर लूगा तो फिर आपकी आज्ञा का पालन नही कर सकूगा क्योकि तब मै शिक्षक न रहूगा किन्तु गुलाम होऊगा। मुझे अपनी जागीर छिन जाने का सदा भय बना रहेगा, जिससे मै सच्ची बात न कहकर ठकुर–सुहाती बात कहूगा।

5 : प्यासा

एक आदमी गगा किनारे खडा रो रहा था। वह इतने जोर से रो रहा था कि राहगीरो को भी उस पर दया आ जाती थी। किसी राहगीर ने उससे पूछा–भाई, रोते क्यो हो ? तुम्हे क्या कष्ट है ?

वह आदमी रोते–रोते बोला– मुझे जोर की प्यास लग रही हे।

राहगीर–तो रोने से मतलब ? सामने गगा बह रही है। निर्मल जल है। शीतल है, मधुर है। पी ले। प्यास बुझा ले।

रोने वाले ने कहा–हाय ! गगा–जल पीऊ कैसे ? गगा की धारा इतनी चौडी है और मेरा मुह जरा–सा हे। यह धारा मुह मे समाएगी केसे ?

राहगीर का करुण–रस हास्य–रस मे परिवर्तित हो गया। उसने हसते हुए कहा–मूर्खराज, तुझे अपनी प्यास मिटाने से मतलब हे या गगा की धारा मुह मे भरने से ? अगर तू इसी विचार मे डूबा रहेगा तो प्यास का मारा प्राण खो बेठेगा। न गगा की धारा इतनी छोटी होगी कि तेरे मुह मे समा जाये न तेरा मुह इतना बडा होगा कि वह उसे अपने भीतर घुसेड सके।

तात्पर्य यह हे कि आजकल अनेक लोग तो हिसा की व्यापकता को देखकर उससे जरा भी निवृत्त होने की चेष्टा नही करते ओर कुछ लोग सूक्ष्म हिसा को अपनी जवाबदेही समझते हें। ऐसे लोग न स्थूल हिसा से बच पाते हें, न सूक्ष्म हिसा से ही। वे न इधर के होते हें, न उधर के रहते हे।

6 : कुम्भकलश

एक मनुष्य ने एक सिद्ध की सेवा करके उसे प्रसन्न किया। सिद्ध ने पसन्न होकर उस मनुष्य से कहा कि मेरे पास कुम्भकलश है और कुम्भकलश बनाने की विधि भी मै जानता हू। कुम्भकलश मे यह गुण है कि किसी भी वस्तु की इच्छा करने पर वह वस्तु उस कुम्भकलश से उसी समय प्राप्त हो जाएगी और कुम्भकलश बनाने की विधि जानने पर जब चाहो तभी कुम्भकलश बन सकता हे। यदि तुम चाहो तो मुझ से कुम्भकलश ले सकते हो और यदि चाहो तो कुम्भकलश निर्माण की विधि सीख सकते हो।

सिद्ध की बात सुनकर सिद्ध के सेवक ने विचार किया कि प्रत्यक्ष लाभ को छोडकर अप्रत्यक्ष लाभ के पीछे दौडना मूर्खता है। कुम्भकलश से तो मे अभी ही लाभ उठा सकता हू परन्तु कुम्भकलश बनाने की विधि सीखने पर अभी लाभ नही उठा सकता। इसके सिवाय क्या ठीक है कि उस विधि ा से कुम्भकलश बन ही जाएगे। इसलिये यही उत्तम है कि मै सिद्ध के पास वाला कुम्भकलश ले लू।

इस प्रकार विचार कर उसने सिद्ध से कुम्भकलश ले लिया और प्रसन्न मन घर को आया। घर आकर उसने अपने सब कुटुम्बियो से कह दिया कि अब अपने को न तो कोई काम करने की ही आवश्यकता है, न चिन्ता करने की ही। इस कुम्भकलश से जो वस्तु चाहेगे, यह वही वस्तु देगा। इसलिए अब कोई काम मत करो ओर जो कुछ चाहिए, वह कुम्भकलश से मागकर आनन्द उडाओ।

कुटुम्ब के सभी लोग कुम्भकलश के आश्रित हो गये। उन्होने खेती–बाडी पीसना–कूटना वाणिज्य–व्यापार आदि सब कुछ छोड दिया। सभी लोग अकर्मण्य बन कर उस कुम्भकलश से माग–माग कर खाने लगे ओर इस प्रकार से जीवन को आनन्द मानने लगे। कुम्भकलश से वे जो कुछ चाहते कुम्भकलश उन्हे वही वस्तु देता।

एक दिन सब ने उस कुम्भकलश से अच्छी से अच्छी मदिरा मागी। कुम्भकलश से मिली हुई मदिरा को सब लोगो ने खूब पिया ओर उसके नशे मे मस्त बन गये। फिर उस कुम्भकलश को एक आदमी के सिर पर रखकर लोग नाचने लगे। शराब से मस्त होने के कारण उस समय उन लोगो को त्रैलोक्य की भी परवाह नही थी तो कुम्भकलश की परवाह वे क्यो करने लगे। । कुम्भकलश को सिर पर रख कर उपेक्षापूर्वक नाचने ओर आपस मे धौल–धप्पे करने से कुम्भकलश सिर पर से गिरकर फूट गया। कुम्भकलश के फूटते ही उन लोगो का नशा भी उतर गया। जिस कुम्भकलश की कृपा से अब तक कार्य चल रहा था, वह तो नष्ट हो गया और जिन उपायो से कुम्भकलश मिलने के पहले जीवन–निर्वाह होता था, उन्हे वे लोग भूल गये थे तथा उनके साधन भी नष्ट हो गये थे, इसलिये वे सब लोग एक साथ ही कष्ट मे पड गये।

मतलब यह है कि जो कुम्भकलश फूट गया है उसके बनाने की विधि यदि उन लोगो मे से किसी को मालूम होती, तो उन लोगो को कष्ट मे न पडना पडता। इसलिए पदार्थ देकर सुख देने की अपेक्षा सुख–प्राप्ति का उपाय बताना बहुत बडा उपकार है। साधु लोग यही उपकार करते है। वे पदार्थ द्वारा सुख देकर अकर्मण्य नही बनाते किन्तु धर्म सुनाकर सुख–प्राप्ति का उपाय ही बता देते है, जिससे फिर दु ख हो ही नही। वे लोग आध्यात्मिक विद्या सिखाते है। सब ऋद्धि इस विद्या को जानने वाले की दासी है। यह विद्या जानने वाले को किसी भी प्रकार की कमी नही रहती।

7 : सच्चा सुख

सुख के लिए कही भी बाहर की तरफ नजर फैलाने की जरूरत नही हे। अपनी ही ओर देखने से अपने मे ही लीन होने से सुख की पाप्ति होगी। बाह्य वस्तुए सुख नही दे सकती। उनसे जो सुख मिलता मालूम होता है, वह सुख नही सुखाभास है। शहद लपेटी हुई तलवार की धारा चाटने से क्षणभर सुख सा प्रतीत होता हे मगर उसका परिणाम कितना दु खप्रद है ? यही बात ससार की समस्त सुख–सामग्री की हे। अन्तत राजपाट, महल–मकान, मोटर–गाडी भोजन वस्त्र कुटुम्ब–परिवार आदि सभी पदार्थ धोखा देने वाले हे अथवा इनमे मनुष्य का जो अनुराग हे वह चिर–दु ख का कारण है। अतएव इन सबसे निरपेक्ष होकर एकमात्र आत्मपरायण बनना ही सुख का सच्चा मार्ग हे।

जहा बाह्य पदार्थो का ससर्ग होगा वहा व्याकुलता होना अनिवार्य हे और जहा व्याकुलता हे वहा सुख नही है। निराकुलता ही सुख है और निराकुलता तभी आती हे जब सयोग–मात्र का त्याग कर दिया जाता है।

एक व्यक्ति सुख रूपी पुरुष को पकडने दौडा। सुख रूपी पुरुष भागा। पकडने वाला उसके पीछे–पीछे दौडा और सुख आगे–आगे भागता ही गया। आखिर सुख हाथ न आया। पकडने के लिए दौडने वाला पुरुष थक गया। वह अशक्त होकर एक झरने के समीप, वृक्ष की छाया मे बैठकर सुख न पा सकने की चिन्ता मे मग्न हो गया। सुख को न पा सकने से उसे इतना दु ख हुआ कि उसे अपने कपडे ओर यहा तक कि शरीर भी भारी मालूम होने लगे। उसके पास खाने को था मगर चिन्ता के कारण उसे खाना न सूझा।

इतने मे ही उधर से एक मनुष्य निकला। उसने इस चिताग्रस्त पुरुष से चिल्लाकर कहा– मुझे सुख दे।

यह चिन्ताग्रस्त पुरुष आश्चर्य मे डूब गया। सोचा—यह कोन हे जो मुझ से सुख माग रहा हे ? अगर मेरे पास सुख होता तो इतना भटकने की जरूरत ही क्या थी ? उसने उसकी ओर मुड कर देखा तो एक दरिद्र—सा पुरुष उसे नजर आया। उस दरिद्र ने फिर उससे कहा— 'मुझे सुख दे।

इसने उत्तर दिया—मेरे पास सुख कहा है ? मैं कहा से तुझे सुख दू?

दरिद्र ने कहा—तेरे पास सुख न होता तो मैं मागता ही क्यो ?

पी ले प्याला हो मतवाला, प्याला प्रेम—दया रस का रे।
नाभिकमल बिच है कस्तूरी, कैसे भरम मिटे मृग का रे।।
।। पी ले।।

दरिद्र पुरुष ने फिर कहा—मृग की नाभि मे ही कस्तूरी होती है। फिर भी वह कस्तूरी की खोज मे इधर—उधर भागता फिरता है और यह नही जानता कि कस्तूरी मेरी ही नाभि मे है। इसी प्रकार तू सुख के लिए दौड—दौड कर थक गया परन्तु तुझे यह पता नही कि सुख तो तेरे ही पास है। और वह सुख भी थोडा नही, अनन्त है, असीम है, अद्भुत है। दरिद्र पुरुष की यह बात सुनकर वह आश्चर्य मे आ गया। वह सोचने लगा—क्या यह मेरी हसी करता हे ? फिर उससे पूछा—मेरे पास सुख कहा है ?

दरिद्र ने कहा—मैं बता सकता हूँ। तुम्हारे पास यह जो खाना पडा है, यह मुझे दे दो तो मै बतलाऊ।

सुख के अभिलाषी पुरुष ने अपना खाना उसे दे दिया। दरिद्र खाना खाकर हसते हुए चेहरे से उसके सामने आ खडा हुआ। फिर कहने लगा—अब देख ! मै कितना सुखी हो गया हू। यह सब तेरा ही प्रताप हे। तूने मुझे सुख दिया इसी कारण मैं सुखी हो गया हू।

दरिद्र पुरुष की वात सुनकर वह कहने लगा—अब मे समझ गया। वास्तव मे दूसरे से सुख मागने मे सुख नही हे किन्तु दूसरे को सुख पहुचाने मे सुख है। सुख भिखारी को नही, दाता को होता हे।

8 : सांप का जहर

सर्प के जहर ने आपके शरीर मे प्रवेश किया। दूसरा, आपका जहर आपके शरीर मे विद्यमान हे। दोनो के मिलने से जहर की शक्ति बढ जाती है और वह आपको मारने वाला हो जाता हे। साप के काटने पर आपको तनिक भी क्रोध न आएगा तो जहर नही चढेगा।

विहार प्रान्त मे एक आदमी घास का छप्पर बाध रहा था। एक सर्प छप्पर मे बध गया ओर उसने उस आदमी को काट खाया। आदमी को खबर न हुई। उसने समझा–कोई काटा चुभ गया है। अगले साल जब वह आदमी छप्पर खोलकर नये सिरे से बाधने लगा तो उसे मरा सर्प दिखाई दिया। उसे गत वर्ष की घटना याद आ गई। सोचा–अरे। जिसे मैने काटा समझा था, वह काटा नही साप था। क्रोध आते ही जहर ने असर किया और वह आदमी मर गया। सोचिये, इतने दिनो तक जहर कहा छिपा बेठा था ?

9 : धर्म का फल

अगर तुम्हारी आशा पूरी नही होती तो यह धर्म का दोष नही है तुम्हारी करनी मे ही कही कमी है। अतएव आकाक्षा पूरी न होने के कारण धर्म को मत छोडो। आकाक्षा ही तुम्हारी मुराद पूरी नही होने देती। आकाक्षा ही तुम्हे धर्म–श्रद्धा से डिगा देती है। अतएव जहा तक हो सके, आकाक्षा को ही छोडने का प्रयत्न करो। निष्काक्ष हो जाने पर तुम्हारी समस्त आकाक्षाए पूरी हो जाएगी। एक वृद्धा स्त्री की बात कहता हू–

किसी वृद्धा को धर्म से बडा प्रेम था। वह सदा साधु–सन्तो के दर्शन करने जाती और उनका धर्मोपदेश सुनती। इतना ही नही, वह आस–पास की स्त्रियो को भी साथ ले जाती। स्त्रियो मे धर्म–भावना फैलाती। उन्हे सीख देती।

एक दिन उसे विचार आया–मै इतना धर्म–ध्यान करती हू। धर्म के लिए उद्योग करती हू। अतएव मेरे पोता अवश्य होगा। इसके बाद पोता होने की आशा मे दिन पर दिन और वर्ष पर वर्ष बीत गये परन्तु पोता नही हुआ। पोता न होने से उसकी धर्म–भावना मन्द पडने लगी। वह विचार करने लगी–"यह कोनसा धर्म है जो मेरी साधारण सी अभिलाषा भी पूरी नही करता। जो धर्म पोता नही दे सकता वह मोक्ष क्या देगा ? इस प्रकार वृद्धा की श्रद्धा घटने लगी। ठीक ही कहा हे "श्रद्धा परम–दुर्लभा।" सब कुछ सरल हो सकता है मगर श्रद्धा कायम रहना बहुत कठिन हे। उस वृद्धा की श्रद्धा जोखिम मे पड गई। धीरे–धीरे उसे धर्म के प्रति इतनी अरुचि हो गई कि स्वय साधु–सन्तो के समीप न फटकती ओर जो जाती उन्हे भी हटकती। कहती–क्या रखा हे दर्शन करने मे ! क्यो घर के काम का नुकसान करती हो ? वहा कुछ लाभ होता तो मे ही क्यो छोड बेठती ?

वृद्धा जहा की थी, वहा अक्सर साधु पहुचा करते थे। एक पुरान साधु वहा गये। वहुत–सी वहिने दर्शन करने आई। मगर साधु ने वृद्धा को न

देखा। वह किसी समय महिला–समाज मे अगुआ थी। धर्म मे उसे बडा उत्साह था। अतएव साधुजी ने पूछा– बहिनो ! यहा एक धर्मशीला वृद्धा बाई थी। वह आज दिखाई नही दी। क्या कही गई है ?

एक स्त्री ने मुह मटका कर उत्तर दिया– 'महाराज वह तो मिथ्यात्विनी हो गई। खुद नही आती और दूसरो को भी आने से रोकती है।'

साधु–अच्छा यह बात हे ! उससे जरा कह देना कि अमुक मुनि आये है। व्याख्यान सुनना। अगर इच्छा न हो तो भी जैसे मिलने वालो से मिल जाते है उसी पकार समझ कर व्याख्यान सुनना।

यह समाचार वृद्धा के पास पहुच गया। वह कहने लगी–मैने बहुत दर्शन किये। कई व्याख्यान सुने। कोई मुराद पूरी नही हुई। अब वहा जाकर क्या करूगी ?

साधु प्राणीमात्र का भला चाहते है। उन्हे किसी पर क्रोध नही होता। उन्होने वृद्धा को सन्मार्ग पर लाने के उद्देश्य से एक बार फिर कहला भेजा।

वृद्धा आई। अनमनी होकर, हाथ जोड नीचा सिर किये गुमसुम बैठ गई।

साधुजी ने कहा–बहिन, आजकल तुम धर्मध्यान नही करती। पहले तो बहुत धर्मक्रिया करती थी। क्या कारण है ?

लम्बी सास लेकर वृद्धा बोली–क्या कहू, महाराज !

साधु–नही नही, बहिन कुछ कहो ! बात क्या है ? क्या श्रद्धा हट गई ?

वृद्धा–पूछ कर क्या करोगे, महाराज !

साधु–बन सकेगा तो उपाय करेगे।

वृद्धा (उत्सुक होकर) –आप सुनना चाहते है ?

साधु–हा बहिन !

वृद्धा–तो सुनिये। मेरा लडका हे। आप जानते ही है कि मै पहले केसा धर्म करती थी ओर केसी सेवा बजाती थी। मै समझती थी कि धर्म के प्रताप से मेरे पोता होगा। आशा ही आशा मे कई वर्ष व्यतीत हो गए, किन्तु पोता नही हुआ। धर्म वह जो आशा पूरी करे। वहुत धर्म करने पर भी आशा निराशा मे पलट गई। पोते का मुह देखने को न मिला। इस कारण धर्म मे आस्था घट गई।

साधुजी ने समवेदना दिखलाते हुए कहा–वहिन, सच कहती हो। जो धर्म आशा पूरी न करे वह केसा धर्म !

अपने पक्ष का समर्थन होते देखकर वृद्धा कहने लगी—महाराज, आप सच फरमाते है। झूठ कहती होऊ तो आप बताइये।

साधु—नही वहिन, तुम झूठ नही कहती। अच्छा, एक बात तुमसे पूछता हू। धर्म ने पोता नही दिया यह मैने माना। मगर बहिन, ससार-सम्बन्धी ऐसी कुछ बाधाए भी होती है कि धर्म भी बेचारा क्या करे ? अगर अकेला धर्म ही पोता दे देता तो तुम घर मे बहू आने से पहले ही मागती। पर ऐसा नही, ससार-सम्बन्धी भी कुछ कारण मिलते है, तब पोता होता है।

वृद्धा सिर हिलाकर— बात सच है।

साधु फिर कहने लगे—मुझे तो ऐसा मालुम होता है कि इसमे कोई सासारिक बाधा ही कारण होगी।

वृद्धा— नही महाराज, सासारिक बाधा कुछ भी नही है।

साधु—बहिन, हो सकता है कि तुम्हे मालूम ही न हो। मान लो पति-पत्नी मे मेल-मिलाप ही न हो तो ?

वृद्धा—नही महाराज, दोनो मे इतना प्रेम है जितना सीता और राम मे था।

साधु—सभव है बहू रोगिणी हो। रोगिणी के भी बच्चा नही होता।

वृद्धा—अजी, उसके तो नख मे भी रोग नही हे, वह खूब भली-चगी हे।

साधु—तुम्हारे लडके मे कोई त्रुटि नही हो सकती ?

वृद्धा—यह भी नही है। ऐसा होता तो सन्तोष कर लेती कि जब लडके मे कमी है तो पोता कैसे हो ? पर वह तो बलिष्ठ ओर सुन्दर है। देखती हू, कई लडके खाट पर पडे रहते हे, पर मेरा ऐसा नही है। वह पहाड-सा बलवान् हे।

साधु—इसके अतिरिक्त एक बात ओर हो सकती हे।

वृद्धा—वह क्या ?

साधु—सब कुछ ठीक हो पर यदि तुम्हारा लडका परदेश चला जाता हो ओर वहू तुम्हारे पास रहती हो तो पोता केसे हो ? एक बात ओर भी हे। सभव हे पति-पत्नी साथ ही रहते हो किन्तु मनुष्य को धन की चिन्ता बहुत वुरी होती हे। इस चिन्ता से तुम्हारा लडका घुलता हो तो भी पोता न होना सम्भव हे।

वृद्धा व्यग की हसी हसकर बोली—मे ऐसी भोली नही हू। काले केश पक गये ह। ऐसा होता तो समझ जाती मगर यह सव कुछ नही है।

साधु–एक बात पूछना फिर भूल गया।

वृद्धा–वह भी पूछ लीजिए।

साधु–जो माता–पिता की सेवा नही करते, उनके भी प्राय पुत्र नही होता।

वृद्धा–महाराज, मेरा लडका और मेरी बहू मिलकर मेरी इतनी सेवा करते है कि शायद ही किसी को नसीब होती हो। सब बाते आपने पूछ ली। अब बताइये किसका दोष है ?

साधु–यह तो धर्म का ही दोष है।

वृद्धा जरा तेज स्वर मे– मै पहले कहती थी कि यह धर्म का ही दोष है। इसी कारण मेने धर्म छोड दिया। स्त्रिया मुझे मिथ्यात्विनी कहती है, कहती रहे। मेरा क्या बिगडना है ? सच्ची बात तो कहनी पडेगी।

साधु–मैं समझ गया बहिन, यह दोष धर्म का ही है। धर्म से जाकर अर्ज करनी पडेगी कि बहुत से लोग बेचारे बूढे होकर मर जाते है पर बेटे का मुह नही देख पाते। तुमने उस वृद्धा को लडका देकर और दु खी कर दिया, नही तो धर्मध्यान करती। अब पोते के बिना उसे चेन नही पडती। उसे रात–दिन चिन्ता रहती है।

वृद्धा चोक कर बोली–ऐ महाराज ! यह क्या कहते है ?

साधु–सच ही तो कह रहा हू।

वृद्धा–नही महाराज ! यह तो धर्म का ही प्रताप है। अच्छा पुण्य किया तो बेटा मिला है।

साधु–कई लोग विवाह के लिए भटकते–फिरते है। तुम्हारे लडके का विवाह जल्दी हो गया, यह बुरा हुआ ?

वृद्धा–नही अन्नदाता, यह तो धर्म का ही प्रताप है।

साधु– लोग पेसे–पैसे को मोहताज रहते हैं। तुम्हे पैसा देकर धर्म ने बुरा किया ?

वृद्धा–हुजूर, यह क्या फरमाते है ! यह भी धर्म का ही प्रताप है।

साधु–यह क्या ? सभी बातो मे धर्म ही धर्म का प्रताप बतलाती हो!

वृद्धा–सच बात तो कहनी ही चाहिये न ?

साधु–अच्छा तो पति–पत्नी की जोडी स्वस्थ मिली, यह बुरा हुआ? नही तो सन्तोष मानकर धर्म तो करती।

वृद्धा–यह भी धर्म का प्रताप है।

साधु–पति–पत्नी अविनीत, माता–पिता से झगडने वाले मिलते तो ठीक था ?

वृद्धा–जिसने खोटे कर्म किये हो, उसी को ऐसे लडका–वहू मिलते हे। आपकी कृपा से मैंने कुछ पुण्य–कर्म किया, उसी का यह प्रताप हे।

साधु–तुम सभी वाते धर्म के प्रताप से कहती हो ! ऐसा हे तो जो धर्म सभी कुछ दे, सिर्फ एक पोता न दे, उस पर इतनी नाराजी क्यो ?

वृद्धा हाथ जोडकर वोली– क्षमा कीजिये महाराज ! मुझसे भूल हुई। मैंने धर्म का उपकार न माना। मे वडी कृतघ्नी ओर पापिनी हू। अव में समझ गई। मेरा मोह दूर हो गया। आपने मुझ पर असीम दया की ठीक रास्ता दिखला दिया। अव मै फिर यथाशक्ति धर्म की सेवा करूगी।

आपने यह दृष्टान्त सुना। ऐसे विचार वाले भाई–वहिन आप मे कम नही होगे, जो अपनी आशा पूरी होते न देख कह उठते हें–वाह! धर्म ने इतना भी न किया !

इस प्रकार की तुच्छ भावना से धर्म की दुर्दशा नही, आपकी ही दुर्दशा होती है। तुम सच्चे धर्मात्मा बनो। तुम्हारी मुराद तो क्या त्रिलोकी तुम्हारे चरणो मे लोटने लगेगी।

10 : बहिरात्मा

एक देहाती मनुष्य बहुत बुद्धिमान् और होशियार आदमी था। उसने सोचा– देहात मे जैसी चाहिए, वैसी इज्जत नही होती और न कोई काम ही है। ऐसा सोचकर वह शहर मे गया। शहर मे पहुचकर वह किसी सेठ की दुकान पर गया। सेठ साहब ने उससे कुछ भी बात नही की, क्योकि वह देहाती था और सादी पोशाक पहने था। सेठ अपनी धुन मे मग्न था। दुकान पर दस–पाच मुनीम काम कर रहे थे। कोई हुडी लिख रहा था, कोई कुछ और कर रहा था। उस देहाती से किसी ने कुछ न पूछा।

आगन्तुक पुरुष देहाती होने पर भी बुद्धिमान् था। वह समझ गया कि मेरी सादी पोशाक देखकर मुझसे कोई बात नही करता। वह वहा से उठा और धोबी के पास गया। धोबी से कहा–भाई तुम्हारे पास किसी अमीर की पोशाक धुलने आई हो तो कुछ समय के लिए मुझे दे दो। मै वापिस लौटा दूगा। तुम उसे दोबारा धोकर दे देना। अपना मेहनताना चाहे पहले ही ले लो।

धोबी ने उसकी बातचीत से समझा–कोई भला आदमी है। उसने उसे कपडे दे दिये। देहाती ने कपडे पहने और कही से बढिया जूते भी खोज लिये। हाथ मे एक बेत ले लिया। अब वह अकड के साथ चलता हुआ उसी सेठ की दुकान पर जा पहुचा। उसे आता देख सेठ खडा हो गया और बोला–पधारिये साहब कहा से तशरीफ लाये हैं ? कैसे पधारना हुआ ?

देहाती बोला–आप ही से मिलने आया हू।

सेठ–ठीक विराजिये।

देहाती शान के साथ बैठ गया। सेठजी ने पूछा–आपको भोजन आदि करना होगा न ?

देहाती–हा कर लेगे। जल्दी क्या है ?

सेठजी की आज्ञा होते ही कोई नोकर रसोई की तैयारी मे लगा, कोई पानी लाने लगा। देहाती बुद्धिमान् तो था ही, इधर–उधर की दो–चार बाते बनाईं। सेठ उसकी बुद्धिमत्ता पर रीझ गया। खूब खातिर की। भोजन तैयार हो गया तो भोजन के लिए कहा। देहाती भोजन करने गया। आसन पर बैठकर दो लड्डू इस जेब मे डालने लगा और दो बर्फिया उस जेब मे। तीसरी मिठाई साफे मे बाधने लगा और कुछ सामान रूमाल मे रखने लगा। यह देखकर सेठ भौचक्का–सा रह गया। वह बोला–आप यह क्या कर रहे हैं ?

देहाती ने धीमे स्वर मे कहा–जिनके प्रताप से मुझे यह मिठाई मिली है, उन्हे तो पहले जिमा दू।

सेठ–सो कैसे ?

पहले सादी पोशाक पहन कर मै आपकी दुकान पर आया था। तब आपने मुझसे बात भी न की। जब यह कपडे पहनकर आया, तब यह खातिर हुई। वास्तव मे यह खातिर इन कपडो की हे।

सेठ बडा लज्जित हुआ और उसने क्षमा मागी।

आप मे से बहुत से भाई इसी प्रकार का आदर–सत्कार करते हैं। परन्तु यह सच्चे श्रावक का लक्षण नही हे। मित्रो ! सभ्यता सीखो। सभ्यता के बिना धर्म का पालन नहीं हो सकता।

11 : साकार से निराकार की ओर

कहा जाता है कि हमने कभी परमात्मा के दर्शन नही किये। बिना दर्शन हुए उससे प्रीति किस प्रकार की जाये ? कभी परमात्मा की बोली भी नही सुनी तो उसका स्मरण कैसे किया जाये ? यह प्रश्न ठीक है। इसका समाधान करने के लिए एक लौकिक दृष्टात उपयोगी होगा। आप अशुद्ध वस्तु को अच्छी तरह जानते हैं। उसके सहारे शुद्ध वस्तु को भी समझ जाएगे।

एक मनुष्य किसी सुन्दर महिला के रूप मे इतना मोहित हो गया कि उसके बिना उसे चैन न पडता। उसे चलते–फिरते सदैव उसी बाई का ध्यान रहता। कब उससे मेरा मिलन हो और कब मैं अपने हृदय की प्यास बुझाऊ, बस, ऐसा ही विचार उसके मन मे सदा बना रहता था। उस आदमी की बात किसी दूसरी बाई ने जानी। वह विचारशील और सदाचारिणी थी। उसने सोचा– इस मनुष्य का पतन होने वाला है। यह स्वय तो भ्रष्ट होगा ही एक मेरी बहिन को भी भ्रष्ट करेगा। अतएव इन्हे भ्रष्ट होने से बचाने का कोई उपाय करना चाहिए।

अगर आपको ऐसे भोगाभिलाषी पुरुष का पता चल जाये तो आप क्या करेगे ? आप मारेगे, पीटेगे या दुत्कारेगे। इसके सिवाय और कुछ नही करेगे। परन्तु सुधार का यह मार्ग ठीक नही है। यह तो उसे और गड्ढे मे डालने का उपाय है। किसी को दुत्कार कर, फटकार कर या किसी के प्रति घृणा करके उसे पाप से नहीं बचाया जा सकता। अगर पापी से प्रेम करो और शान्तिपूर्वक समझाओ तो वह बहुत आसानी से समझ जायेगा।

उस दूसरी बाई ने यही रास्ता अख्तियार किया। वह उस कामी पुरुष के पास जाकर बोली–भाई, तू इतनी चिन्ता क्यो करता है ? तेरे मन की बात मै जानती हू। अगर तू मेरा कहना माने तो मै तुझे उस स्त्री से मिला दूगी।

उस पुरुष ने घबराहट से कहा—ऐ, तुम मेरे मन की बात जानती हो और उससे मिला दोगी ? किसने तुमसे यह बात कही हे?

स्त्री—मै तुम्हारे हाव—भाव से समझ गई हू। फिकर मत करो। म उससे मिला दूगी।

पुरुष को कुछ तसल्ली हुई। उसने सोचा—चलो, अच्छा हुआ। अनायास ओर मुफ्त दूती मिल गई।

स्त्री ने कहा—मे तुम्हारा काम तो कर दूगी, पर तुम्हे मेरा कहना मानना होगा। कहो, मानोगे ?

पुरुष—वाह, मैं तुम्हारा कहना नही मानूगा ? अगर तुम उससे मिला दोगी तो मैं तुम्हारे लिए तन—मन—धन निछावर कर दूगा।

"तो बस, ठीक है" इतना कहकर वह वाई चली गई। वह दूसरे दिन फिर आई। उसने पुरुष से कहा—भाई, चलो।

पुरुष की प्रसन्नता का पार न रहा। उसने समझा काम बन रहा हे तो ढील क्यो की जाये। वह जल्दी—जल्दी सजकर साथ चलने को तेयार हो गया।

वह बाई उसे एक बडे सफाखाने मे ले गई। वहा कई रोगियो की चीरफाड की जा रही थी। कई सड रहे थे। कइयो के शरीर से लोहू और मवाद झर रहा था। चारो ओर दुर्गन्ध फेल रही थी।

यह सब वीभत्स दृश्य देखकर उस पुरुष ने कहा—ऐसे गन्दे स्थान पर क्यो ले आई हो ? मारे दुर्गन्ध से सिर फटा जा रहा हे। चक्कर आते हैं। चलो, जल्दी यहा से।

स्त्री—"जरा ठहरो, बस, चलती ही हू।' इतना कहकर व रोगियो से पूछने लगी—भाइयो, तुम्हे यह रोग केसे हो गये ?

रोगियो मे से एक ने कहा—वहिन, क्या वताए, यह सव हमारे ही खोटे कर्मो के फल हे। विषय—सेवन की मर्यादा न पालने से किसी का सुजाक, किसी को गर्मी, किसी को कुछ ओर किसी को कुछ रोग हो गया हे। अगर हम मर्यादा मे रहे होते, पराई स्त्रियो को माता—वहिन समझते तो हमारी यह दुर्दशा न होती। मगर क्या किया जाये। अव तो अपने हाथ की वात रही नही।

स्त्री ने अपने साथी पुरुष को लक्ष्य करके कहा—सुना आपने, यह रोगी क्या कह रहे हें ? ध्यान से सुन लीजिये।

वह वोला—हा सुना, सव सुना। तुम वाहर निकलो। मेरा सिर दुर्गन्ध के मारे फटा जा रहा ह।

दोनो बाहर निकल पडे और अपने—अपने घर चले गये। स्त्री ने सोचा—मेरी दवाई ने पूरा असर नही किया। खैर, कल फिर देखा जायेगा।

दूसरे दिन फिर वह उसके घर पहुची। चलने के लिये कहा। तब वह पुरुष कहने लगा—तुम उससे कब मिलाओगी ? चकमा तो नही दे रही हो ?

उत्तर मिला—भैया ! उसी से मिलाने के लिए तो उद्यम कर रही हू।

पुरुष—तो ठीक है। चलो।

आज वह स्त्री उसे जेलखाने मे ले गई। कोई आजन्म कैदी था, कोई आठ वर्ष की और कोई दस वर्ष की सजा पाया हुआ था।

स्त्री ने एक कैदी से पूछा—कहो भाई, तुम किस अपराध मे सजा भोग रहे हो ?

कैदी बोला—हम लोग अलग—अलग अपराधो के अपराधी है। किसी ने चोरी की, किसी ने जालसाजी की, किसी ने परस्त्री—गमन किया। इसी कारण हम लोग इस नरक मे पडे सड रहे है। किसी को भरपेट रोटी नही मिलती। कोई बहुत तग कोठरी मे रखा गया है। उसी कोठरी मे खाना और उसी मे पाखाना ! कइयो को बेत लगते है और बहुतो को चक्की पीसनी पडती है। हम लोगो को जीवित अवस्था मे ही नरक से पाला पडा है।

स्त्री ने अपने साथी से कहा—सुनो भैया, इनकी बाते। ये बेचारे कितना कष्ट पा रहे हे ! ध्यान दिया आपने ?

वह पुरुष बोला—होगा, इससे हमे क्या सरोकार है ?

स्त्री ने सोचा—अब भी मेरा उद्देश्य पूरा नही हुआ। कल दूसरा प्रयोग करूगी। यह सोच वह लोट गई।

प्रात काल होते ही वह उसे समझा—बुझा कर साथ ले गई। उसने आज कसाईखाने मे प्रवेश किया। वहा बकरो की गर्दन पर खचाखच छुरिया चल रही थी। प्राणी अपने प्राणो की रक्षा के लिए "बे—बे" चिल्लाते हुए दूर भागना चाहते थे। मगर कसाइयो के हाथ से उन्हे कैसे छुटकारा मिल सकता था ? बडा ही निर्दयतापूर्ण दृश्य था। कही किसी अन्य पशु का सिर कटा पडा था। कही कलेजा कटा पडा थर्र—थर्र कर रहा था। कही किसी जानवर का चमडा उधेडा जा रहा था। कही कोई मास को इधर—उधर ले जा रहा था। कही हड्डियो के ढेर लगे थे ओर कही आगे कटने वाले जानवर खडे थे। दुर्गन्ध की तो बात ही क्या पूछना। वह मनुष्य यह सब देखकर घबडा उठा। बोला—यह सब क्या हो रहा हे ?

स्त्री ने कहा–भैया, घडराओ नही। अभी इन आदमियो से पूछ लेती हू। इतना कहकर एक कसाई से पूछा–भाई, तुम इन जानवरो को क्यो मारते हो ?

कसाई–मारे नही तो क्या करे ? पेसा कमावे कि नहीं ? इन्हे मारकर इनका मास बेचते है और अपने बाल–बच्चो की परवरिश करते हैं।

स्त्री–भाई, इन पर कुछ दया करो न ?

कसाई–दया किस पर ? यह तो हमारे खाने के लिए ही पैदा किए गए हैं।

साथ का पुरुष बीच मे ही बोला–चलो यहा से। मुझ से यह दृश्य नही देखा जाता।

स्त्री ने सोचा–ठीक है, हृदय कुछ तो पिघला।

दोनो कसाईखाने से बाहर निकले। बाहर निकलने के बाद वह पुरुष कहने लगा–आखिर इतने पशु क्यो मारे जाते हैं ?

स्त्री–इन पशुओ ने पहले खराब काम किये होगे।

पुरुष–क्या खराब काम किये होगे, इन बेचारो ने ?

स्त्री–खराब काम यही–चोरी करना, विश्वासघात करना, किसी को ठगना, परस्त्री पर मोहित होना आदि।

पुरुष–इन कामो का फल इतना भयकर हे ?

स्त्री–सो तो तुमने अपनी आखो देखा है।

अन्त मे दोनो अपने–अपने घर चले गये। उस स्त्री ने विचार किया–ऐसे–ऐसे दृश्य दिखलाने पर भी ठीक परिणाम न निकला। वह अपनी बात के पीछे पागल हुआ जा रहा हे। क्या करना चाहिये ?

सयोग की बात हे कि जिस महिला पर वह मोहित था, उसका कुछ ही दिन वाद अचानक देहान्त हो गया। जैसे ही उस स्त्री को उसके देहान्त की खबर लगी कि वह दौडकर उस पुरुष के पास गई। जाकर उससे बोली–आज उससे मिलने का मौका हे । चलो, देरी मत करो।

वह पुरुष अतीव प्रसन्नता के साथ जल्दी तैयार हो गया। इत्र लगाकर ओर सुन्दर वस्त्र धारण करके चला।

पुरुष के साथ आने वाली बाई को सभी जानते ओर आदर की दृष्टि से देखते थे। उसे वहा आती देख लोगो ने पूछा– आज आपका यहा कैसे पधारना हुआ ?

उसने उत्तर दिया–भाइयो आज में एक महत्वपूर्ण काम से आई हू। आप सब लोग थोडी देर के लिए जरा बाहर हो जाइये।

सब लोग बाई का कहना मानकर बाहर चले गये। उन्हे विश्वास था कि यह बाई किसी न किसी धार्मिक काम के लिए ही आई है। अतएव उसका कहना मानने मे किसी को आपत्ति नही हुई।

बाई पहले अकेली अन्दर गई। मृत स्त्री को अच्छे कपडे ओढाये और आभूषण पहनाये। इत्र भी लगा दिया। फिर वह बाहर आई और उस पुरुष को अन्दर ले जाने लगी।

दोनो भीतर गये। बाई बोली—भैया, लो यह तैयार है। भेट कर लो।

वह पुरुष कुछ आगे बढा और फिर एकदम एक कदम पीछे लौटता हुआ घबडा कर बोला—यह तो मर चुकी है।

बाई बोली—मरना कैसा ? वही शरीर है। वही कान और नाक हैं। वही मुख। वही वस्त्र और आभूषण है। सभी कुछ वही तो है। फिर मर गई का क्या अर्थ ?

पुरुष—इसमे प्राण नही रहे।

बाई—तुम्हारा प्रेम प्राणो (आत्मा) से है या इस शरीर से ?

पुरुष—यह तो बडा ही भयकर है। मुझे भय मालूम होता है।

बाई—तो क्या तुम इसकी आत्मा को भ्रष्ट करना चाहते थे ? अरे पागल ! कसाई बकरा मारकर उसके शरीर के मास को लेना चाहता है और तू इसके जीते जी ही इसके मास आदि पर अपना अधिकार जमाना चाहता था ? जिसके लिए तू तडप रहा था, आज उसी से भयभीत हो रहा है ! तेरा प्रेम ऐसा ही था !

पुरुष कुछ कहना ही चाहता था कि बीच मे बाई फिर बोल उठी—अरे मेरे भाई ! जितना प्रेम तू इस शरीर पर करता था, उतना अगर आत्मा पर किया होता तो तर जाता, क्योकि सब आत्माए समान हैं। आत्मा ही अपनी दबी हुई शक्तिया विकसित करके परमात्मा बन जाता है।

12 : पर–सुख में अपना सुख

किसी समय मे एक राजा राज्य करता था। उसके पास बहुत से विद्वान आते रहते थे। वे लोग राजा मे जो दुर्गुण देखते उन्हे दूर करने का उपदेश राजा को दिया करते थे। पर राजा किसी की कुछ मानता नही था। वह विद्वान पण्डितो को अपने सुख मे विघ्न डालने वाला समझता था। अगर कोई विद्वान अधिक जोर देकर उपदेश देता तो राजा उसका अपमान करने से भी नही चूकता था। इस प्रकार किसी की बात पर कान न देने के कारण राजा के दुर्व्यसन बढते गये।

एक रोज राजा अपने साथियो के साथ घोडे पर सवार होकर शिकार खेलने के लिए जगल मे गया। वहा अपना शिकार हाथ से जाते देख उसने शिकार का पीछा किया। राजा बहुत दूर जा पहुचा। साथी बिछुड गये पर शिकार हाथ नही आया।

मनुष्य भले ही अपना कुव्यसन न छोडे, मगर प्रकृति उसे चेतावनी जरूर देती रहती है। यही बात यहा हुई। बहुत दूर–दूर चले जाने पर राजा रास्ता भूल गया। वह बुरी तरह थक गया। विश्राम के लिए किसी पेड के नीचे ठहरा। इतने मे जबर्दस्त आधी उठी और जोर की वर्षा होने लगी। थोडी ही देर मे बिजली चमकने लगी। मेघ घोर गर्जना करके मूसलाधार पानी बरसाने लगे ओर ओलो की बोछार होने लगी। राजा बडी विपदा मे फस गया। उसने इसी जगल मे न जाने कितने निरपराध पशुओ को अपनी गोली का निशाना बनाया था। आज वह स्वय प्रकृति की गोलियो–ओलो का निशाना बना हुआ था। राजा ओलो से बचने के लिए वृक्ष के तने मे घुसा जाता था पर वृक्ष ओलो से उसकी रक्षा न कर सका। घोडा थका हुआ था ही। ओलो की मार से यह ओर हाफ गया ओर अन्त मे उसने भी राजा का साथ छोड दिया। अब राजा को एक भी सहायक नजर नही आता था। उसके महलो मे सेकडो दास और

दासियो का जमघट था मगर आज मुसीबत के समय कोई खोज–खबर लेने वाला भी नसीब नही था।

विपत्ति हमेशा नही रहती। कभी न कभी टल जाती है। इस नियम के अनुसार पानी का बरसना, मेघो का गरजना और हवा का चलना बन्द हो गया। धीरे–धीरे बादल भी फटने लगे। अब राजा के जी मे जी आया। उसने चारो तरफ दृष्टि दौडाई तो जल ही जल दिखाई दिया। परन्तु दूर की तरफ नजर दौडाने पर अग्नि का कुछ प्रकाश दिखाई दिया।

प्रकाश देखकर राजा के हृदय मे तसल्ली बधी। उसने सोचा–वहॉ कोई मनुष्य अवश्य होगा। वहॉ चलना चाहिए। रास्ते मे गिरता–पडता–फिसलता हुआ धीरे–धीरे वह अग्नि के प्रकाश की तरफ बढा। वह ज्यो–ज्यो आगे बढता जाता था, एक झोपडी उसे साफ मालूम होती जाती थी। आखिर राजा झोपडी के द्वार पर जा पहुचा।

राजा शिकारी के वेष मे झोपडी के द्वार पर खडा हुआ था। झोपडी मे एक किसान रहता था। राजा को देखते ही उसने कहा– "आओ भाई, अन्दर आओ।"

अहा ! ऐसी घोर विपदा के समय यह स्नेह–पूर्ण "भाई" सम्बोधन सुनकर राजा को कितना हर्ष हुआ होगा !

किसान राजा को शिकारी ही समझे था। उसके कपडे पानी मे तर देखकर किसान ने कहा–ओह ! तू तो पानी से लथ–पथ हो गया है ! आज तुझे बडी तकलीफ उठानी पडी होगी !

किसान के सहानुभूति से भरे मीठे शब्द सुनकर राजा गद्‌गद् हो गया। भाटो ओर चारणो के द्वारा बखान की गई अपनी विरुदावली सुनने मे और अपने मुसाहिबो के मुजरे मे जो आनन्द उसे अनुभव नही हुआ होगा, वह अपूर्व आनन्द किसान के इन थोडे–से शब्दो ने प्रदान किया।

किसान ने अपनी स्त्री से कहा–देख, इस शिकारी के सब कपडे गीले हो रहे हे। इसे ठण्ड लग रही हे। अपना कम्बल उठा ला। इस को कम्बल देकर इसके कपडे निचोड कर सूखने डाल दे।

किसान की स्त्री कम्बल ले आई। राजा ने बहुत–से कीमती दुशाले ओढे होगे, पर इस कम्बल को ओढने मे उसे जो आनन्द आया, वह शायद दुशालो से नसीब न हुआ होगा।

आज राजा को यह छोटी–सी झोपडी अपने विशाल राजमहलो की अपेक्षा अधिक आनन्ददायिनी प्रतीत हुई। किसान–दम्पती की सेवा उसे

ईश्वरीय वरदान--सी प्रतीत हुई। राजमहलो को अपना मानकर वह गर्व से इतराता था। जिस वैभव पर फूला नही समाता था, आज वह सब उसे तुच्छ प्रतीत हो रहा था।

राजा ने जब कम्बल ओढ लिया, तब किसान ने घास के बिछौने की ओर इशारा करके कहा—तू बहुत थका मालूम होता है। उसे बिछाकर उस बिछौने पर विश्राम कर ले।

राजा सो गया। थकावट के मारे उसे गहरी नीद आ गई।

किसान ने स्त्री से कहा—बेचारे की ठण्ड अभी नही गई होगी, जरा आग से तपा दे। स्त्री फटे—टूटे कम्बल के चीथडो का गोटा बनाकर राजा को तपाने लगी। किसान की स्त्री अपने पुत्र के समान विशुद्ध—भाव से राजा की सेवा कर रही थी। सरल हृदय किसान—पत्नी के हृदय मे वही वात्सल्य था, जो अपने बेटे के लिए होता है।

और किसान राजा के कपडे हिला—हिला कर अग्नि के ताप से सुखाने मे लगा हुआ था।

जब राजा अगडाई लेता हुआ उठ खडा हुआ, तब किसान ने कहा—अरे, अब तो तू अच्छा दिखाई देता है। अब तेरा चेहरा भी पहले से अच्छा मालूम होता हे। पर यह तो बता, तू घर से कब निकला था?

राजा—सुबह।

किसान—तव तो तुझे भूख लगी होगी। अच्छा (स्त्री की तरह देखकर) अरी जा, इसके लिए रोटी और डूगरी पालक की तरकारी ले आ।

राजा मोटी रोटी जगली तरकारी के साथ खाने बेठा। उसने अपने ससुराल मे बडी मनुहार के साथ अच्छे—अच्छे पकवान खाये होगे। पर कहा वह पकवान और कहा आज की यह मोटी रोटी। उन पकवानो मे जड का माधुर्य था, इस मोटी रोटी मे किसान दम्पती के हृदय की मधुरता। उन पकवानो को भोगने वाला था राजा ओर इस रोटी को खाने वाला था साधारण मानव। राजा इस भोजन मे जो नि स्वार्थभाव भरा हुआ पाता था, वह उन पकवानो मे कहॉ ?

रात वहुत देर हो गई थी। किसान—दम्पती ओर उसके वाल— वच्चे सो गये। राजा भी उसी झोपडी मे फिर सो गया। मगर राजा को नीद नही आ रही थी। मन ही मन वह किसान की सेवा पर लटटू हो रहा था। पडितो के उपदेश ने उसके हृदय पर जो प्रभाव नही डाला था। किसान की सेवा ने वह प्रभाव उसके हृदय पर डाला। एक ही रात मे उसका सारा जीवन पलट

गया। अब तक वह निरा राजा था, आज किसान ने उसे आदमी भी बना दिया।

पात काल राजा ने अपने कपडे पहने और किसान से जाने की आज्ञा मागी। किसान को क्या पता था कि जिसके नाम–मात्र से बडो– बडो का कलेजा काप उठता था, वे महाराजाधिराज ये ही है। उनकी निगाह मे वह साधारण मनुष्य था। किसान ने यही समझते हुए कहा–"अच्छा भाई, जा। यह झोपडी तेरी ही है। फिर कभी आना।"

इस आत्मीयता ने राजा के दिल मे हलचल मचा दी। वह किसान के पैरो मे गिर पडा। किसान को अपना गुरु मान वह वहा से चल दिया।

राजा अपने महल मे पहुचा। राजा के पहुचते ही मुसाहबो ने मुजरा किया। रानियो ने आदर–सत्कार कर कुशल–क्षेम पूछी। पर राजा को यह सब शिष्टाचार फीका मालूम हुआ। राजा के दिल मे किसान की सेवा–परायणता, किसान–पत्नी की सरलता और उन दोनो की सादगी एव वत्सलता ने घर कर लिया था। वह उसे भूल नही सका। बार–बार वही याद करके वह प्रफुल्लित हो जाता था।

विद्वानो ने उसे बहुतेरे उपदेश दिये थे, पर उनका कुछ भी असर नही हुआ था। किसान की सरल और नि स्वार्थ सेवा ने राजा पर ऐसा जादू डाला कि उसका सारा जीवन–क्रम ही बदल गया। राज्य मे त्रुटिया थी, उसने उन्हे दूर कर दिया और अपने तमाम दुर्व्यसनो को तिलाजलि दे दी।

एक गरीब की प्रेम–पूर्ण सेवा ने सारे राज्य को सुधार दिया। राजा उस किसान को अपना आदर्श और महापुरुष मानने लगा। जब भी उसे किसान का स्मरण हो आता, तभी वह किसान के चरणो मे अपना सिर झुका देता।

मित्रो । दूसरे के सुख मे अपना सुख मानने वाले का प्रभाव कैसा होता है, यह इस कहानी से समझो। वास्तव मे वही सच्चे सुख का अधिकारी होता है, जो दूसरे के सुख को ही अपना सुख मानता है।

13 : जिंदगी के गुलाम

एक शहर मे डाके बहुत पडते थे। वहा के महाजनो ने सोचा– हमेशा की यह आफत बुरी है। चलो, सब मिलकर डाकुओ का पीछा करे उन्हे पकडे। सब महाजन तैयार हुए। शस्त्र बाध कर शाम के समय जगल की तरफ रवाना हुए। रास्ते मे विचार किया–डाकू आधी रात को आएगे। सारी रात खराब करने से क्या लाभ है ? अभी सो जाए और समय पर जाग उठेगे।

सब महाजन पक्तिवार सो गये। उनमे जो सबसे आगे लेटा था, वह सोचने लगा–"मै सबसे आगे हू। अगर डाकू आए तो मेरा पहला नम्बर होगा। सबसे पहले मुझ पर हमला होगा। मै पहले क्यो मरू ? डाका तो सभी पर पडता हे ओर में पहले मरू, यह कोन–सी बुद्धिमत्ता हे ? अच्छा, मैं उठकर सब के पीछे चला जाऊ !"

वह सब के अन्त मे जाकर सो गया। अब तक जिसका दूसरा नम्बर था, उसका पहला नम्बर हो गया। उसने भी सोचा–"पहले मे क्यो मरू ?' और वह उठा ओर सब के अन्त मे सो गया। इसी प्रकार बारी–बारी सब खिसकने लगे। सुबह होते–होते जहा थे, वही वापस आ गये।

लडाई का काम वीरो का हे। वीर पुरुष ही न्याय की प्रतिष्ठा ओर अन्याय के प्रतिकार के लिए अपने प्राणो की चिन्ता न करके जूझ पडते है। डरपोक उसमे फतह नही पा सकते ओर अपने अपमान का कडवा घूट चुपचाप पी सकते हे। वे महाजन जीवन के गुलाम थे। इसी कारण वे लडाई के लिए निकल कर भी ठिकाने पहुच गये।

मित्रो ! जो कदम आपने आगे रख दिया हे उसे पीछे मत हटाओ। तभी आप विजयी होगे।

14 : सोऽहं

एक गुरु के दो शिष्य थे। दोनो को सोऽह का पाठ पढाया गया और उस पर स्वतन्त्र विचार–अनुभव करने के लिए कहा गया।

दोनो शिष्यो मे एक उद्दण्ड स्वभाव का था। उसने साधना तो कुछ की नही और सोऽह–मै ईश्वर हू, इस प्रकार कह कर अपने आप परमात्मा बन बैठा। वह अपने परमात्मा होने का ढिढोरा पीटने लगा। जो मिला, उसी से कहा–मै ईश्वर हू। लोगो ने उसकी मूर्खता का इलाज करने के लिए उसके हाथो पर जलते अगारे रखने चाहे। तब वह बोला–है ! क्या करते हो ? हाथ पर अगारे रखकर मुझे जलाना क्यो चाहते हो ?

लोगो ने कहा–"भले आदमी ! कही ईश्वर भी जलता होगा ?" फिर भी वह मूर्ख शिष्य अपनी मूर्खता को न समझ सका। वह अपने को ईश्वर कहता ही रहा। एक आदमी ने उसके गाल पर चाटा मारा। वह बोला– तुमने मुझे चाटा क्यो मारा ?

वह आदमी–मूर्ख ! कही ईश्वर के भी चाटा लगता है ?

मगर उसकी मूर्खता का रग इतना कच्चा नही था। वह चढा रहा। वह लोगो के विनोद का पात्र बन गया। उससे अधिक वह कुछ न कर सका। पर दूसरा शिष्य साधना मे लगा। वह एकान्तवास करने लगा और सोचने लगा–मे अनेक प्रकार के रूप देख रहा हू, यह आखो का प्रभाव है। मैं अनेक काव्य सुनता हू, यह कानो की शक्ति है। नाना प्रकार के रसो का आस्वादन करना जिह्वा का काम हे। मेने जो गध सूघे है, सो नाक के द्वारा। अत अब मै इस निष्कर्ष पर पहुचता हू कि ये इन्द्रिया ही सोऽह है।

वह अपना निष्कर्ष लेकर प्रसन्न होता हुआ गुरुजी के पास पहुचा और गुरुजी से बोला–महाराज मेने सोऽह का पता पा लिया है।

गुरुजी–केसे पता पा लिया ?

शिष्य—जो इन्द्रिया है, वे ही सोऽह हैं।

गुरुजी—जाओ, अभी और साधना करो। तुम्हे अभी तक सोऽह का ज्ञान नही हुआ।

शिष्य चला गया। उसने सोचा—मैं अब तक सोऽह का पता न पा सका। खैर, अब फिर प्रयत्न करता हूँ।

वह फिर साधना मे जुट गया। विचार करने लगा—गुरुजी ने कहा—इन्द्रिया सोऽह नही है। वास्तव मे इन्द्रिया सोऽह कैसे हो सकती हैं ? इन्द्रिया सोऽह होती तो अस्थिरता कैसी होती ? इसके अतिरिक्त मैंने भूतकाल मे अनेक शब्द सुने थे। उनका आज भी मुझको ज्ञान है, यद्यपि वे वर्तमान मे नही बोले जा रहे हैं। भूतकाल मे मैने जो विविध रूप देखे थे, वे आज दिखाई नही दे रहे है। फिर भी उनका मुझे स्मरण है। अगर इन्द्रिया ही जानने वाली होती तो वर्तमान मे भूतकालीन विषयो को कौन स्मरण रखता ? इससे यह स्पष्ट जान पडता है कि इन्द्रियो से परे कोई ज्ञाता अवश्य है। तब फिर वह कौन है ?

उसने समस्या पर गहराई के साथ विचार किया। तब उसे जान पडा कि इन सब क्रियाओ मे मन की प्रेरणा रहती है। अतएव मन ही सोऽह होना चाहिए। इस प्रकार निश्चय करके वह गुरुजी के पास आया और बोला—गुरु महाराज, मैं सोऽह का मतलब समझ गया।

गुरुजी—क्या समझे ?

शिष्य—यह जो मन है, वही सोऽह है।

गुरुजी—जाओ ओर फिर साधना करो।

शिष्य फिर चला गया। उसने फिर साधना आरम्भ की। सोचा— मन सोऽह नही हे। ठीक है। मन को प्रेरित करने वाला कोई और ही है। उसी का पता लगाना चाहिए। उसने बहुत विचार किया। तव उसे मालूम हुआ कि मन को बुद्धि प्रेरित करती है। इसलिए मन से परे बुद्धि सोऽह हे। वह फिर गुरुजी के पास पहुचा ओर कहने लगा— गुरुजी, अव मैं सोऽह को समझ पाया हूँ।

गुरुजी—क्या हे, बताओ ?

शिष्य—मन से परे बुद्धि सोऽह हे।

गुरुजी—वत्स, जाओ अभी ओर साधना करो।

वेचारा शिष्य फिर साधना मे लगा। सोच—विचार के पश्चात उसने स्थिर किया—गुरुजी ने ठीक ही कहा है कि बुद्धि सोऽह नही हे। अगर बुद्धि

सोऽह होती तो उसमे विचित्रता—विविधता क्यो होती ? कभी वह विकसित होती है कभी उसमे मदता आ जाती है। कभी अच्छे विचार आते है, कभी बुरे विचार आते है। इससे जान पडता है कि बुद्धि के परे जो तत्व है, वही सोऽह है।

शिष्य बडी प्रसन्नता के साथ गुरुजी के पास पहुचा और बोला—महाराज, अब की बार सोऽह का पक्का पता लगा लाया हू।

गुरुजी—क्या ?

शिष्य—जो गुह्य तत्व बुद्धि से परे है, जिसकी प्रेरणा से बुद्धि का व्यापार होता है, वह सोऽह है।

गुरुजी—(प्रसन्नतापूर्वक) हा, अब तुम समझे। जो कुछ तुम हो, वही ईश्वर है। उसी को सोऽह कहते है।

मित्रो ! आत्मा का पता आत्मा के द्वारा आत्मा को ही लग सकता है।

15 : बेबुनियाद लड़ाई

चाद नाम का एक मुसलमान था। उसने अपनी बीवी से कहा– मै एक भेस लाऊगा।

वीवी वोली–वडी खुशी की वात हे। में अपने पीहर वालो को भी छाछ भेजा करूगी।

यह सुनना था कि मिया का पारा तेज हो गया। वे बिगडते हुए उठे ओर वीवी को लतियाने लगे।

वेचारी वीवी हेरान थी। उसकी समझ मे ही न आया कि मिया साहव क्यो खफा हो उठे हें ? उसने पूछा–मिया, आखिर वात क्या हे? क्यो नाहक मुझ पर टूट पडे हो ?

मिया गुस्से मे पागल हो गये। वोले–राड कही की, भेस तो लाऊगा में और छाछ भेजेगी मायके वालो को ?

इसके वाद फिर तडातड, फिर तडातड !

लोग इकट्ठे हुए। उन्हे मिया के कोप का कारण मालूम हुआ तो उन्हे भी जब्त न रहा। उन्होने मियॉ को मारना आरम्भ किया। तमाचे पर तमाचे पडने लगे।

अव मिया की अक्ल ठिकाने आई। चिल्ला कर कहने लगे–खुदा के वास्ते माफ करो भाई आखिर तुम लोग मेरे ऊपर क्यो पिल पडे हो?

लोगो ने कहा–तेरी भेंस हमारा सारा खेत खा गई हे।

मिया–भैस अभी में लाया ही कहा हू।

लोग–तेरी वीवी ने पीहर वालो को छाछ भेजी ही कहा हे ?

मिया समझे। उन्हे होश आया। अपनी भूल समझ कर शर्मिन्दा हुए।

स्त्री शिक्षा का कार्य जब आरम्भ होगा तब होगा पर उसके विरुद्ध अभी से काना–फूसी होने लगी है। जो लोग ऐसा करते है वे उक्त मियाजी का दृष्टात चरितार्थ करते है।

एक ही बात नही, अनेक बातो मे अक्सर इसी प्रकार बेबुनियाद लडाई–झगडा खडा हो जाता है और लाखो रुपया कचहरी देवी की भेट चढ जाता है। बेचारे जज हैरान–परेशान हो जाते हैं पर आप लडते–लडते थकते नही।

16 : मूल का सुधार

एक बाबाजी थली की ओर निकले। जगल का मामला था। बाबाजी को भूख–प्यास सता रही थी। ऊपर से सूरज अपनी कठोर किरणे फैक रहा था। पर विश्रान्ति के लिए न कही कोई वृक्ष आदि दिखाई दिया और न पानी पीने के लिए जलाशय ही नजर आया। बाबाजी हाफते–हाफते कुछ और आगे बढे। थोडी दूर पर रेतीले टीलो पर तुम्ब के फल की बेल दिखाई दी। बाबाजी पहले कभी इस ओर आये नही थे। इस कारण इसके गुणो और दोषो से अनभिज्ञ थे। बाबाजी इन बेलो के पास आये और पीले–पीले सुन्दर फल देखे तो बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने सोचा अब इनसे मै अपनी भूख मिटाऊगा।

बाबाजी ने एक फल तोडा और मुह मे डाला। जीभ से स्पर्श होते ही उनका मुह जहर–सा कडवा हो गया। उन्हे बडा आश्चर्य हुआ। देखने मे जो फल इतना सुन्दर है, उसमे इतना कडवापन ! मगर वे धुन के पक्के थे। उन्होने सोचा–देखना चाहिए, फल मे कटुकता कहा से आई है ? कटुकता की परीक्षा करने के लिए बाबाजी ने पत्ता चखा। वह भी कटुक निकला। फिर तन्तु का आस्वादन किया तो वह भी कटुक ! अन्त मे जड उखाड कर उसे जीभ पर रखी तो वह भी कटुक निकली। बाबाजी ने मन मे कहा–जिसकी जड ही कटुक है उसका फल मीठा कैसे हो सकता है ? फल मीठा चाहिए तो मूल को सुधारना होगा।

17 : अन्धापन

कहा जाता है, एक बार बादशाह ने अपने दरबारियो से पूछा– यहा अन्धे ज्यादा है या आख वाले ?

दरबारियो ने कहा–जहापनाह, यह तो साफ दीखता है कि अन्धे थोडे हैं और आख वाले ज्यादा हैं।

बादशाह इस उत्तर से सन्तुष्ट नही हुआ। उसने यही प्रश्न वजीर से किया। वजीर बोला–अन्धे ज्यादा हैं और ऑख वाले कम है। ऑख वाला तो हजारो–लाखो मे कोई एक निकलेगा।

बादशाह ने कहा–तुम्हे अपनी बात सिद्ध करके बतानी होगी।

वजीर–ठीक है। मै साबित कर दूगा।

एक दिन वजीर बादशाह को जमना के किनारे ले गया। उसने वहा एक स्थान बैठने के लिए विशेष तौर से बनवाया था। उस स्थान पर बादशाह को तथा अन्य साथियो को बिठला कर वजीर अपने आप एक स्वाग ले आया। जब वह स्त्री बन कर आया, तब सब लोग उसे स्त्री कहने लगे। घडी भर स्त्री का स्वाग दिखाकर फिर वह पुरुष बन आया। तब सब लोग उसे पुरुष कहने लगे। इस प्रकार वजीर ने जितने स्वाग दिखाये, लोग उसे वैसा ही कहने लगे। अन्त मे वजीर अपने असली रूप मे आया। सब लोग कहने लगे– वजीर साहब तशरीफ लाये है।

वजीर ने बादशाह से कहा–हुजूर, देखिये, सब लोग अन्धे है कि नही? मैं अभी कई–एक भेष बना कर आया था परन्तु मुझे किसी ने नही पहचाना। कोई भी मेरा असली रूप नही देख सका। सभी लोग मेरे ऊपरी भेष के अनुसार अनेक नामो से मुझे पुकारते रहे। अतएव इन सब को अन्धो की गिनती मे गिनना चाहिए। अब ये ही लोग मुझे वजीर कह रहे है, इसलिए ये भी अन्धे है। एक दृष्टि से देखा जाये तो मे आत्मा हू। स्त्री, पुरुष

या वजीर हू, तब भी क्या मनुष्य से भिन्न हू? मगर लोग असलियत नही देखते। मेरे ख्याल से जो असलियत नही देखता, वह अन्धा है।

इसी दृष्टान्त के अनुसार लोग अपने आपको और दूसरो को स्त्री, पुरुष या बच्चा कहते हैं। मगर वास्तव मे वह कथन ठीक नही है। स्त्री–पुरुष आदि तो आत्मा की औपाधिक पर्याये है। आत्मा, ईश्वर है, यह वात ही सत्य है। लोग कडे ओर कठी आदि को सोना कहना गलत मानते हें ओर सोने को कडे–कठी आदि कहना सही समझते हैं। उस प्रकार आत्मा को ईश्वर मानना झूठ दिखाई देता है और गरीब, अमीर, पुरुष, स्त्री आदि मानना सत्य मालूम होता है। इसी भ्रम के कारण आत्मा ससार के झझटो मे पडकर ईश्वर से दूर जा पडा है।

18 : कर्त्तव्य–पथ

कबूतरो की एक टोली जगल मे विचर रही थी। इस टोली का नेता चित्रग्रीव था। वैज्ञानिक कहते है कि सर्वसाधारण जनता जिन्हे अपने से बडा मानती है, उनमे कोई असाधारण गुण होता है। इस कथन के अनुसार कबूतरो ने चित्रग्रीव मे नेता योग्य गुण देखकर उसे अपना नेता बनाया था और उसकी सम्मति से सब साथ–साथ विचरते थे। विचरते–विचरते कबूतरो ने जगल मे चावल बिखरे देखे। एक पारधी ने चावल बिखेर कर उनके ऊपर जाल फैलाया था। चावलो को देखकर कुछ कबूतर कहने लगे–"चलो, चावल पडे है, उन्हे खाए।" पर राजा चित्रग्रीव ने विचार कर कहा–

इस निर्जन वन मे चावलो के दाने कहा से आये ? मुझे तो इन चावलो को खाने मे कल्याण नही जान पडता। अतएव थोडी देर राह देखो, मै जाच–पडताल कर आता हू।

परन्तु आज के युवक माने तो कबूतर माने । ऐसे थे वे कबूतर। राजा या नेता बना तो दिया जाता है, पर बहुत बार उसकी आज्ञा मानने मे कठिनाई प्रतीत होती है। इस प्रकार एक हठी कबूतर को राजा चित्रग्रीव का कथन रुचिकर न हुआ। वह बोला–विपदा के वक्त बूढो की बात माननी चाहिए। भोजन के समय बूढो की बात मानने से तो हानि होती है। यदि हम ऐसी शका करते रहेगे तो सभी जगह ऐसी शकाए उत्पन्न होगी और फल यह होगा कि तडप–तडप कर भूखो मरना पडेगा। आखो के आगे चावल पडे है, फिर भी चावल लेगे तो "यह होगा, वह होगा" इस तरह कार्य, कारण, भाव का विचार करना किस प्रकार उचित कहा जा सकता है ? राजा की यह बात हमे तो जचती नही।

आज के नवयुवक यह कहने लगते है कि हम यदि इन बूढो के कथनानुसार चलेगे तो अणु मात्र भी सुधार न हो सकेगा। कबूतर भी यही कहने लगे। पर ऐसी परिस्थिति मे नेता का क्या कर्त्तव्य है, यह देखिए।

चित्रग्रीव ने सोचा– 'सब कबूतर एक–मत हो गये है। मैं इनके मत से विरुद्ध चलूगा तो अनैक्य आ घुसेगा।" इस प्रकार विचार कर उसने कबूतरो से कहा–"यदि सभी का विचार चावल खाने का है, तो चलो। भूख तो मुझे भी लगी है" चित्रग्रीव ने यह नही कहा कि तुम लोग मेरी बात नही मानते तो तुम जानो, तुम्हारा काम जाने। मैं तो तुमसे अलग ही रहूगा। चित्रग्रीव को भली–भाति ज्ञान था कि यहा सकट है, फिर भी उसने सोचा–सकटकाल मे मुझे सब के साथ रहना चाहिए। यही मेरा कर्त्तव्य है। जब सिर पर सकट आ पडेगा, तब आप ही मेरी बात मानेगे।

यह विचार कर राजा भी सब कबूतरो के साथ चल दिया। कबूतरो ने चावल के दाने तो खाये, पर सब के पैर जाल मे फस गये। वे उडने मे असमर्थ हो गये। अब सभी कबूतर उस जवान कबूतर को कोसने लगे कि तूने राजा की आज्ञा नही मानी और सबको जाल मे फसा दिया। राजा ने सबको सान्त्वना देते हुए कहा–जो होनहार था, सो हो गया है। अब उसे कोसना छोडकर जाल से छुटकारा पाने का उपाय खोजो। उपालम्भ देने से काम नही चलने का।

राजा की यह बात सुनकर सब कबूतर कहने लगे–आप ही इसका कोई उपाय बताइए। राजा बोला–"तो, मेरी बात सब लोग मानोगे न ?" सब ने कहा–"पहले आपकी बात न मानने का कटुक फल यह भोगना पड रहा है। अब आपकी आज्ञा का पालन अवश्य करेगे और आप जो आज्ञा देगे, वही करेगे।"

सकट एक शिक्षाप्रद बोध–पाठ है। राजा ने कहा–यदि सब एक–मत हो जाओ तो हम सकट से मुक्त हो सकते है। एक भी कबूतर अगर अलग रहा तो सकट से मुक्त न हो सकेंगे। अतएव सब हिलमिल कर एक साथ उडो ओर इस जाल को साथ ही साथ उठाओ तो जाल से मुक्ति पाई जा सकेगी।'

आज भारत मे फूट हे ओर इसी फूट के कारण पारधियो की वन पडी हे। फूट न होती तो भारत किसी के जाल मे न फसता।

सब कबूतर मिलकर एक साथ जाल को लेकर आकाश मे उड चले। कबूतरो को उडते देख पारधी उनके पीछे–पीछे दोडा ओर सोचने लगा–मैं इन कबूतरो को अपने जाल मे फसाना चाहता था पर ये मेरे जाल को लेकर चलते बने। इस समय यह सब एक मत हो रहे हे पर जब इनमे फूट पडेगी तब सारे नीचे आ गिरेगे। यह सोचकर पारधी कबूतरो के पीछे–पीछे भागने लगा। पारधी को पीछा करते देख राजा ने कहा–देखो पीछे अपना शत्रु आ

रहा है। अतएव आपस मे झगडना नही और यह न सोचना कि उडने मे सब अपने बल का उपयोग कर रहे है तो मैं अपने बल का उपयोग क्यो करू ? यदि आपस मे लडोगे–झगडोगे या एक–दूसरे को सहकार न दोगे, तो हम सभी नीचे गिर पडेगे, काल का ग्रास बन जायेगे। राजा की यह चेतावनी सुनकर सब कबूतर मिलकर उडने लगे। पारधी थोडी दूर तो पीछे–पीछे दौडा पर अन्त मे वह थक गया और वापस लौट गया। पारधी को वापिस लौटा देखकर कबूतरो ने राजा से कहा–शत्रु तो लौट रहा है, अब हमे क्या करना चाहिए ? राजा ने कहा–हम लोग एक आपत्ति से मुक्त हो गये है, पर अभी जाल से मुक्त होना बाकी है। जाल को तोडने की शक्ति हम लोगो मे नही है। यह शक्ति जमीन खोदने वालो मे ही होती है। अतएव हम आगे उडते चले। हम तो सिर्फ उडना जानते हैं, हमे जाल काटना नही आता।

आज स्वतन्त्रता तो सभी चाहते है किन्तु जो लोग आकाश मे सैर–विहार करने की तरह केवल लम्बे–चौडे भाषण ही करना जानते है, उनसे परतन्त्रता का जाल कट नही सकता। परतन्त्रता का जाल तो जमीन को खोदने वाले किसान ही काट सकते है।

राजा ने कबूतरो से कहा–गडकी नदी के किनारे हिरण्यक नाम का मेरा एक मूषक (चूहा) मित्र रहता है। हालाकि मै कबूतर हू और वह चूहा है, फिर भी वक्त–बेवक्त कभी एक दूसरे को सहायता पहुचा सके, इस उद्देश्य से हमने आपस मे मित्रता की है। अतएव हम सब उसके पास चले, तो वह इस जाल के बन्धनो को काट डालेगा और हम लोगो को बन्धन–मुक्त कर देगा।

सब कबूतर उडते–उडते गडकी नदी के किनारे आ पहुचे। जाल के साथ कबूतरो को उडते आते देख हिरण्यक अचकचा गया। सोचने लगा–यह कोनसी आफत आई है। लेकिन उसने अपने बिल मे सौ द्वार बना रखे थे, इसलिए कि आपत्ति आने पर किसी न किसी द्वार से निकल कर बाहर हो सके। कबूतरो को देखकर वह चट से अपने बिल मे घुस गया।

हिरण्यक के बिल के पास आकर चित्रग्रीव ने कहा–"मित्र हिरण्यक! बाहर निकलो, मै तुम्हारा मित्र हू।" मित्र की आवाज पहचान कर हिरण्यक बाहर निकला और चित्रग्रीव से कहने लगा–"तुम इतने बुद्धिमान् हो, फिर जाल मे केसे फस गये ?" राजा ने उत्तर दिया–यह तो समय की बलिहारी है। राजा ने यह नही कहा कि इन कबूतरो ने मेरा कहना नही माना इस कारण जाल मे फस गये।

हिरण्यक यह सुनकर चित्रग्रीव मित्र का जाल काटने के लिए उसके पास आया। पर चित्रग्रीव ने कहा—मित्र ! पहले मेरे इन साथियो के वन्धन काटो। चित्रग्रीव चाहता तो पहले अपने बन्धन कटवा सकता था। पर उसने ऐसा न करते हुए अपने वन्धन काटने का आदेश नही दिया। हिरण्यक ने कहा—मित्र ! मै बहुत छोटा प्राणी हू। मै इन सबके बन्धन केसे काट सकूगा। मेरे दात भी इतने मजबूत नही है कि सबके बन्धन काट सकू। अतएव पहले तुम्हारे बन्धन काट देता हू। इसके बाद यदि मेरे दातो मे शक्ति होगी तो दूसरो के भी काट दूगा।

हिरण्यक की बात चित्रग्रीव ने स्वीकार न की। नीति कहती है—

आपदर्थे धन रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि।
आत्मानं सतत रक्षेद् दारैरपि धनैरपि।।

भावार्थ—आपत्ति के समय के लिए धन की रक्षा करनी चाहिए और धन का त्याग करके भी स्त्री की रक्षा करनी चाहिए, परन्तु आत्म—रक्षण के समय स्त्री की या धन की हानि का भी खयाल नही करना चाहिए। जब नीति यह कहती हे तो चित्रग्रीव ने अपने बन्धनो को पहले क्यो नही कटवा लिया? उत्तर यह हे कि नीति भले ही ऐसा विधान करती हो, पर धर्म तो कुछ ओर ही वतलाता हे। हिरण्यक ने अपने मित्र को जब यह नीति बतलाई तो राजा ने कहा—

नीति भले ही ऐसा विधान करती हो, पर मै तो नीति से आगे बढ गया हू। नीति मस्तक की उपज हे, जब कि धर्म हृदय से उद्भूत होता है। नीति अपने आश्रितो की परवाह न करके अपनी रक्षा करने का उपदेश देती हे, पर धर्म बतलाता हे कि स्वय कष्ट—सहन करके भी दूसरो को सुखी बनाओ। राजा ने कहा—मे तो धर्म का पालन करूगा। प्रिय मित्र ! मे तुम्हारे ऊपर अधिक बोझ लादना नही चाहता। तुम मे जितनी शक्ति हो, उसी के अनुसार मेरे इन आश्रितो के बन्धन काटो।

धर्म का यह विधान हे कि दूसरो के लिए धन ओर यहा तक कि जीवन का भी उत्सर्ग कर देना चाहिए, जब कि नीति स्वय अपना रक्षण करने के लिए कहती हे।

धर्म ओर नीति मे यही अन्तर हे। धर्म कहता हे—'लीजिए नीति कहती हे—''लाये जाओ।' नीति स्वार्थ पर नजर रखती हे धर्म परमार्थ की ओर सकेत करता हे। जिस प्रकार माता का धर्म वालक को चूमना पुचकारना ही नही ह किन्तु वालक का पालन—पोपण करना भी हे इसी प्रकार आग वढते जाइये ओर इस नीति द्वारा धर्म को हृदय मे स्थान दते चले जाइए''।

चित्रग्रीव ने कहा—मित्र । जब मै राजा हू तो राजा की हैसियत से अपने आश्रितो की रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है या नही ? मित्रता की खातिर तुम्हारा भी यह कर्त्तव्य है कि पहले मेरे आश्रितो के बन्धन काट कर फिर मेरे बधन काटो। मित्र । पहले मेरे आश्रितो के बन्धन काटकर मेरे इस भौतिक शरीर के बदले मेरे यश रूपी शरीर की रक्षा करो। यह भौतिक शरीर नाशवान् है, जब कि यश अविनश्वर है। अतएव हे मित्र। मेरे भौतिक शरीर का भोग देकर भी यश—शरीर को बचाओ।

आज के वृद्ध भी स्वार्थ मे डूबे है। इसलिए वृद्धो का कर्त्तव्य भी युवको को बताना पडता है।

मित्र की यह बात सुनकर हिरण्यक को अत्यन्त आनन्द हुआ। उस हर्ष के आवेश मे उसने सब कबूतरो के बन्धन काट फैके। हिरण्यक चित्रग्रीव से कहने लगा—मित्र । तुम्हारे उन्नत और उज्ज्वल गुण तुम्हे तीन लोक का स्वामी बनाने के लिए पर्याप्त है। वास्तव मे त्रिलोकपति वह है, जो स्वय कष्ट सहन करके दूसरो को कष्ट से बचाता है। यही मानव—धर्म है। स्वय आपत्तियो को झेलकर दूसरो को सुख—शान्ति पहुचाना ही मानव—धर्म है।

हिरण्यक ने सबके बन्धन काटकर चित्रग्रीव के बन्धन काटे। राजा ने सब कबूतरो से कहा—जो हुआ सो हुआ।

"बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेहु।"

अब उसे याद न करना, अन्यथा परस्पर लडाई होगी।

हिरण्यक ने कहा—"मै आपका क्या सत्कार करू ? मेरे पास इतनी भोजन सामग्री भी नही है कि आप सब को भोजन करा सकू ?" राजा ने उत्तर दिया—"भोजन देना कोई बडा काम नही है। तुमने हमे बन्धनो से मुक्त कर दिया है तो अब खाने की क्या चिन्ता है ?"

इसी प्रकार आप भी दूसरो को कष्टो से मुक्त करने का प्रयत्न करो और ऐसा चिन्तन करते रहो कि मै स्वय कष्ट झेलकर भी दूसरो को सुखी बनाऊ । प्राणी—मात्र को आत्म—तुल्य समझू। इसके लिये परमात्मा से ऐसी प्रार्थना करो –

दयामय । ऐसी मति हो जाय। औरो के सुख को सुख समझू, सुख का करू उपाय। अपना दु ख मै सहू किन्तु पर—दु ख न देखा जाय।

दूसरो को कष्ट से मुक्त करने के लिये तुम स्वय कष्ट—सहिष्णु बनो, दूसरो के सुख मे अपना सुख समझो।

19 : मोह का छाला

किसी राजा के हाथ मे एक छाला हो गया। उस छाले का नाम मोती–छाला था और वह बडा विषैला था। चिकित्सको ने राजा से कहा–अगर शस्त्र से इसकी चीर–फाड की गई तो आपका बचना कठिन होगा। यह छाला अगर हस की चोच से फूटे तो अच्छा हो जायेगा।

राजा ने चिन्तित होकर कहा–हस मिले और वह छाले को फोडे ऐसा योग कब और कैसे मिलेगा ?

चिकित्सको ने कहा–उद्योग करने वालो के लिए कोई बात असम्भव नही है। राजहस के मिलने का उपाय हम वतलाते है।

राजा के पूछने पर चिकित्सक ने कहा–समुद्र के किनारे, ऊची छत पर एक तख्ता कटवाकर आप उसके नीचे सोते रहिये। कटे हुए तख्ते के नीचे हाथ इस प्रकार रखिये कि केवल छाला ही वाहर दीखे–आपका शरीर ओर शेष हाथ तख्ते के वाहर न दिखाई पडे। उस छाले के आसपास मोती विखेर दीजिए ओर वहा अन्य पक्षियो का भोजन रख दीजिये, जिससे अन्य पक्षी भी वहा एकत्र हो जावे। पक्षियो को देखकर पक्षी आते हे। इस उपाय से सम्भव है, राजहस भी आ जावे ओर अपनी चोच से मोती समझकर आपका छाला भी फोड दे।

मरता क्या न करता। इस कहावत के अनुसार राजा ने ऐसा ही किया। सयोग से अन्यान्य पक्षियो की तरह एक दिन राजहस भी वहा उतर आया। मोती समझकर उसने छाले मे चाच मारी। छाला फूट गया। राजा को अत्यन्त शान्ति का अनुभव हुआ।

राजा को अन्य पक्षियो से प्रयोजन नही था। केवल राजहस की अपेक्षा थी। मगर यदि वह उदारता से काम न लता–अन्य पक्षियो को दाना न देता या उनके आने पर उन्हे मार भगाता तो क्या राजहस उसके पास फटकता?

नही ।'

राजा को जसा छाला था वेसा ही छाला आपको मोहनीय कर्म का हे। मोहनीय कर्म रूपी विपेले छाले को फोडने के लिए आपको महानिर्जरा रूपी चोच की आवश्यकता है और वह भी साधु रूपी राजहस की चोच होनी चाहिए। लेकिन जेसे राजा अगर अन्य पक्षियो को भगा देता तो राजहस उसके पास न आता इसी प्रकार आप अपने घर आये अतिथि–भिखारी का अपमान करके केवल सुपात्र साधु की इच्छा करोगे तो साधु कैसे आयेगे ? एक पक्षी को उडते देख दूसरा पक्षी भी उड जाता है। इसी प्रकार साधु जब आपको अन्य अतिथियो–भिखारियो का अपमान करते देखेगा तो वह आपके यहा क्यो आएगा?

20 : फकीरी और अमीरी

अरब के रेतीले मैदान मे एक फकीर घूम रहा था। प्रथम तो ग्रीष्म–ऋतु थी, जिस पर दोपहर का सूरज आकाश से आग बरसा रहा था। पृथ्वी तवे की तरह तपी हुई थी। फिर भी फकीर अपनी मस्ती मे ऐसे घूम रहा था मानो किसी शीतल उद्यान मे भ्रमण कर रहा हो।

किसी आवश्यक कार्य से एक आदमी उधर होकर निकला। अमीर ऊट पर सवार था। खाने–पीने का सामान उसके साथ था। अमीर के पीछे उसी ऊट पर उसका एक नौकर बैठा था। उसके बाये हाथ मे छाता था ओर दाहिने हाथ मे पखा। अमीर महाशय को धूप ओर गर्मी से बचाने के लिए नौकर पूरा उद्योग कर रहा था। उत्तम वस्त्र ओर आभूषण अमीर की शोभा बढा रहे थे।

अमीर की नजर मस्त फकीर पर पडी। उसने कहा–यह भी कोई आदमी हे ! कैसा बदशक्ल और मनहूस हे ! इसे अपनी जिन्दगी की भी चिन्ता नही है। धूप मे बिना कपडा–लत्ता, बिना छाता, प्रेत की तरह घूम रहा हे !

अमीर की उत्सुकता बहुत बढ गई। उसने फकीर को रोका ओर पूछा–तू कोन हे ? फकीर ने लापरवाही से उत्तर दिया–जो तू हे, सो मैं हू।

अमीर की त्योरिया चढ गई। यह नाचीज मेरी बराबरी करता हे ? उसने क्रोध से कहा–मनुष्यता का कोई चिह्न तो तुझ मे नजर नही आता अलबत्ता तू मनुष्यता को बदनाम करता हे। तुझ जेसे बेवकूफ फकीरो ने ही दुनिया को दु खी बना रखा हे। तेरी जिन्दगी से तो तेरी मोत बेहतर हे। मोत आ जाये तो मनुष्यो का एक कलक कम हो जाये।

अमीर लोग मनुष्यता को शायद वस्त्रो ओर आभूषणो से नापते हैं। अगर मनुष्यता को नापने का यही गज न हो तो वे मनुष्यता की प्रतिस्पर्धा म बहुत पिछड जावे। इसी कारण उन्होने यह गज मान लिया हे। उनकी

निगाह मे वह मनुष्य निरा जगली पशु है, जिसके पास पहनने को कपडा नही और सजने को आभूषण नही। मगर बात उलटी है। जिनके पास मनुष्यता का बहुमूल्य आभूषण है, उन्हे जड आभूषणो की क्या आवश्यकता है ! जिन्हे मनुष्यत्व का वास्तविक और सहज आभूषण प्राप्त नही है, वही लोग ऊपरी आभूषण लादकर अपने आपको आभूषित घोषित करते है।

अमीर की बात के उत्तर मे फकीर ने कहा–"हम क्यो मरे ! मरेगे तो अमीर मरेगे।"

अमीर ने फकीर को फटकार लगाई और सामने से हट जाने को कहा। फकीर पहले की तरह मस्त भाव से चल दिया।

थोडी ही देर हुई थी कि बडे जोर की आधी आई। आधी मे छाता उड गया और छाता उडने के कारण ऊट भडक उठा। ऊट भडकने से अमीर और उनका नौकर धडाम से धरती पर आ गिरे। दोनो की मृत्यु हो गई।

आधी जब थम गई तो वही फकीर घूमता–घामता उधर से आ निकला, जहा अमीर और उसका नौकर मरा पडा था। फकीर ने अमीर की लाश को पैर की ठोकर लगाते हुए कहा–साली अमीरी ! तूने मेरे दोस्त को इतनी जल्दी मार डाला ! वह था तो मुझ–सा ही मनुष्य, पर बात ही बात मे उसके प्राण ले लिये।

फकीरी इस तरह खुदा को प्यारी है। सब लोग फकीर नही हो सकते मगर इतना तो सभी कर सकते है कि वे फकीर की निन्दा न करे।

अजनबी जब स्वस्थ हो गया, तब किसान खेत पर जाने को उद्यत हुआ। परन्तु वह भी किसान के पीछे–पीछे चला। "किसान बडा धर्मात्मा है" "इस किसान के मुकाबिले का कोई धर्मात्मा नही है", इस प्रकार चिल्लाता–चिल्लाता वह चलता चला। किसान ने कहा–"भाई, मेरे लिए तुम क्यो वृथा चिल्लाते हो ! मैने कोई बडा काम नही किया है। मैं एक मामूली गरीब किसान हू।" इतने पर भी अजनबी न माना और चिल्लाता ही चला गया।

लोगो ने चिल्लाहट सुनी तो दग रह गये। किसी ने पूछा–इसने धर्म का कौनसा काम किया है ? उसने उत्तर दिया–"मनुष्य के प्राण वचाये है।"

आखिर दोनो उधर से निकले, जहा पुजारी थाल देने के लिये खडा था। उस मनुष्य ने कहा–"पुजारीजी, थाल इन्हे दो। थाल के सच्चे अधिकारी यही है।"

पूजारी ऐठ कर बोला–ऐसे एरे–गैरे के लिए यह थाल नही है। यह एक मामूली किसान हे। खेत जोत कर पेट भरता है। यह सबसे वडा धर्मात्मा केसे हो सकता हे ?

वह वोला–'तो जाच कर लेने मे हानि ही क्या हे ? तुम्हारे पास धर्मात्मापन की पहचान तो हे ही। भले ही यह किसान तिलक–छापा नही लगाता, मन्दिर मे आकर अपनी भक्ति की घोषणा नही करता, फिर भी यह वडा धर्मात्मा हे। एक वार थाल हाथ मे देकर देख तो लो!

पुजारी ने किसान को थाल लेने के लिये वुलाया। किसान सकोच मे पड गया। वह थाल लेने से इन्कार करने लगा। जो इन्कार करता हे उरो सभी देना चाहत हे। सभी लोग आग्रह करने लगे। पुजारी ने उराके हाथ पर थाल रख दिया। किसान क हाथ मे आते ही थाल एकदम देदीप्यमान हो उठा मानो दया का तज थाल म रा फूट पडा हो।

लाग दग रह गय। एक स्वर से सभी उसकी सराहना करन लग। लोगो को जिज्ञासा हुई– इसन क्या धर्माचरण किया हे ? किरान क साथी न किसान की [illegible]–दया का वर्णन करक सव का समाधान किया।

22 : अन्याय का धन

एक वकील साहब की पत्नी बडी सुशीला और धर्मभीरु थी। एक दिन वकील भोजन करने बैठे और उसी समय एक सेठ आया। सेठ को वकील ने एक मुकदमे मे जिताया था। उसने आते ही वकील साहब के सामने पचास हजार के नोट रख दिये। वकील समझ गये, मगर अपनी पत्नी के आगे रौब जमाने के लिये पूछने लगे—"ये नोट किस बात के है ?"

सेठ ने कहा—"वकील साहब, मुकदमे मे मेरा पक्ष सरासर झूठा था। जिसे मुझे देना था उससे आपने मुझे उल्टा दिलवाया है। मुझे आपके बुद्धिकौशल के प्रताप से लाखो की सम्पत्ति मिली है। उसी के उपलक्ष्य मे यह तुच्छ भेट आपकी सेवा मे उपस्थित की गई है।"

वकील के हर्ष का पार न रहा। वह अपनी बुद्धि के अभिमान मे फूला न समाया। सोचा—कैसी प्रखर बुद्धि है मेरी ! मैं सच्चे को झूठा और झूठे को सच्चा प्रमाणित कर सकता हू। वकील ने अभिमानभरी आखो से अपनी पत्नी की ओर देखा तो उनके आश्चर्य का पार न रहा। उसकी आखो से अश्रुधारा का प्रवाह फूट रहा था। वकील साहब ने पूछा— 'हसने के समय यह रोना कैसा? तुम रो क्यो रही हो?'

पत्नी ने कहा—इसमे खुशी की क्या बात है ? आप इसी प्रकार के अन्याय की रोटी हमे खिलाते है ? क्या इसी कमाई से ये जेवर बनाये गये है ? क्या मेरी प्राण—प्यारी सन्तान के उदर मे यही अन्याय का अन्न गया है? मुझे इस सुख—विलास की आवश्यकता नही है। मुझे आभूषणो की परवाह नही हे। मे भूखी रहना पसन्द करूगी, नगी रहना कबूल करूगी, मगर अन्याय के धन से दूर रहूगी। ससार मे कोई अजर—अमर होकर नही आया। एक दिन सब छोडकर जाना होगा। फिर पेसे के लिए ऐसे पाप क्यो ? आप अपनी

प्रखर बुद्धि का झूठे को सच्चा वनाने मे उपयोग करते हैं, यह कल्पना ही मेरे लिए असह्य है। फिर यह सच्चाई बन गई हे। इसे मैं किस प्रकार सहन करु?

वकील साहब ने अपनी पत्नी की वाते सुनीं तो उनकी अक्ल ठिकाने आ गई।

बहिनो को चाहिए कि वे इस वकील–पत्नी का अनुकरण करे। पति अन्याय से धन उपार्जन करता हो तो नम्रता से, मगर दृढतापूर्वक प्रार्थना करो–हमे अधिक आभूषणो की आवश्यकता नहीं है। हम विषय–विलास पसन्द नहीं करती। आप घर मे अन्याय की दमडी भी न लाइये। बहिनो, अगर तुम इस नीति को अपनाओगी तो इस लोक और परलोक मे तुम्हारा और साथ ही तुम्हारे पति का भी कल्याण होगा। इससे तुम पति के प्रति भी अपना कर्त्तव्य पालन करोगी।

23 : सरलता

लोग बालक को बुद्धिहीन और मूर्ख समझ कर उसकी उपेक्षा करते हैं। परन्तु बालक जैसे निरहकार होते हैं, वैसे अगर आप बन जाए तो आपका बेडा पार हो जाए। बुद्धिमत्ता का ढोग छोडकर अगर आप अपने अन्त करण मे बाल–सुलभ सरलता उत्पन्न कर ले तो कल्याण आपके सामने उपस्थित हो जाये। बालक का हृदय कितना सरल होता है, यह बात एक दृष्टान्त से समझिये–

एक मुहल्ले मे आमने–सामने दो घर थे। उन दोनो घरो मे देवकी ओर यशोदा नाम की दो लडकिया थी। देवकी और यशोदा नही जानती थी कि हम देवकी और यशोदा हैं, पर उनके माता–पिता ने उन्हे यही नाम दे दिये थे। फागुन का महीना था। दोनो बालिकाओ के मा–बाप ने उन्हे अच्छे–अच्छे कपडे पहनाये थे। बच्चो को स्वभावत घर प्यारा नही लगता। वे बाहर घूमना–फिरना और खेलना बहुत पसन्द करते है। शायद अपने शरीर का निर्माण करने के लिए उन्हे प्रकृति से यह अव्यक्त प्रेरणा मिलती है। अगर बालको की तरह आप भी घर से उतना प्रेम न रखे तो आपको पता चलेगा कि इसका परिणाम कितना अच्छा होता है।

देवकी ओर यशोदा कपडे पहनकर अपने–अपने घर से बाहर निकली। वर्षा होकर बन्द हो चुकी थी किन्तु पानी गलियो मे अब भी बह रहा था। देवकी और यशोदा उसी बहते पानी मे खेलने लगी। दोनो ने पानी मे अपने–अपने पैर छपछपाये। पैरो के छपछपाने से कीचड भरा पानी उछला ओर कपडो पर धब्बे पड गये। दोनो के कपडो पर धब्बे पड गए हैं, यह देखकर दोनो एक दूसरे को आपस मे उलाहना देने लगी। उलाहना देती हुई वे अपने–अपने घर लौटी। कीचड से भरे कपडे देखकर और बालिकाओ का आपस मे उलाहना देना सुनकर दोनो घर वाले झगडने लगे।

यद्यपि झगडे का कोई ठोस आधार नही था और अगर दोष समझा जाये तो दोनो बालिकाओ का दोष बराबर ही था, परन्तु दोनो के मा–बाप के दिल मे पहले की कोई ऐसी बात थी कि उन्हे लडने का बहाना मिल गया। दोनो ओर से वाक्‌युद्ध हो रहा था कि इतने मे एक वृद्धा वहा आ पहुची। उसने दोनो घर वालो से हाथ जोडकर कहा–आज होली का त्यौहार है। आनन्द मनाने का दिन है। प्रसन्न होने का अवसर है। फिर आप लोग आपस मे एक–दूसरे की होली क्यो जला रहे है ? आप दोनो पडौसी है। एक के बिना दूसरे का काम नही चल सकता। दोनो लडकिया खेल रही थी। एक के कूदने से दूसरी के कपडे गन्दे हो गये तो कौन बडी बात हो गई ? इन नादान बच्चो के पीछे आप बडे–बडे क्यो झगडते हैं ? इससे आपकी ही हसी होती है।

वृद्धा के बहुत समझाने पर भी वे न माने। लडाई का जोश इतना तीव्र था कि बुढिया की बात सुनने की किसी ने परवाह न की। खूब तपे हुए तवे पर पानी के कुछ बूद कोई असर नही करते। इसी प्रकार क्रोध के उत्पन्न होने पर शान्ति की बात व्यर्थ हो जाती है।

इधर दोनो घर वाले झगड रहे थे, उधर मौका देख कर दोनो लडकिया फिर घर से बाहर निकल पडी। वे वहा पहुची, जहा पानी बह रहा था। बहते–पानी को रोकने के लिए दोनो ने मिलकर रेत का बाध बनाया। पानी रुक गया। रुके पानी मे दोनो लडकियो ने घास का तिनका या लकडी का टुकडा डाला। उसे पानी मे तेरते देखकर दोनो उछलने लगी। एक ने कहा–देख, देख मेरी नाव तेर रही हे ! दूसरी ने कहा–ओर मेरी भी तेर रही है। देख ले न !

सयोगवश वह वृद्धा उधर से निकल पडी। उसने देखा–इन लडकिया को लेकर उधर झगडा मच रहा हे सिरफुटोवल की नोवत आ चुकी हे ओर इधर ये मस्त हाकर खल रही है। उसन झगडने वाला के पास जाकर कहा–अरे झगडना बन्द करके एक तमाशा देख लो ! पडोसी हो चाहोगे तभी झगड लोगे मगर यह तमाशा चाहे तब नही देख पाओगे। आओ मेरे साथ चलो।

वालो को दिखाते हुए बुढिया ने कहा–यह तमाशा देखो, पानी मे लकडियो के टुकडे तैर रहे है। दर–असल यह नाव है।

एक झगडने वाले ने कहा–यह कौनसा तमाशा हुआ ? तैराई होगी किसी ने !

वृद्धा–और किसी ने नही, यशोदा और देवकी ने तैराई है। इतना कहकर उसने लडकियो से पूछा–इनमे कौन किस की नाव है बेटियो ! जरा बताओ तो सही।

दोनो ने साथ–साथ उत्तर दिया–यह मेरी है, यह मेरी है !

तब मुस्कराती हुई वृद्धा ने कहा–देखो, दोनो लडकिया इकट्ठी हो गई हे और जिनको लेकर तुम लड रहे हो वे लडकिया भी मिल गई है। अब तुम कब मिलोगे ? यह तो नादान बालक होकर भी मिल गई और तुम समझदार होकर भी झगडते रहोगे ! वृद्धा की समयोचित शिक्षा से दोनो घर वाले शर्मिदा हो गए। उनकी लडाई समाप्त हो गई और मेल–मिलाप से रहने लगे।

मित्रो ! बालक लड–झगड कर एक हो जाते है, इसी प्रकार अगर आप लोग भी आपस मे एकतापूर्वक रहे तो कैसा आनन्द हो ? एकता आपको इतनी शक्ति प्रदान करेगी कि आप अपने को अपूर्व शक्तिशाली समझने लगेगे। मगर बडे लोगो की लडाई भी बडी होती है। वे लडकर आपस मे मिलते तक नही है। यहा तक कि धर्मस्थान मे अगर पास–पास बैठना पड जाये तो भी एक दूसरे को देखकर गाल फुलाने लगते है। यह कहा तक उचित है ? ऐसा करने वाले बडे अच्छे या ऐसा करने वाले नादान बालक अच्छे ? बालक वास्तव मे सरल हृदय होते है।

24 : ईमानदार मुनीम

सच्चा श्रावक कभी नही सोचेगा कि मैं गुलामी का कार्य करता हू। वह तो यही समझेगा कि मैं जो कुछ करता हू, अपने धर्म की साक्षी से करता हू। कहीं ऐसा न हो कि मेरे किसी कार्य से मेरे व्रत मे दोष लग जाये और मेरे धर्म की प्रतिष्ठा मे कमी हो जाये। मैं नौकर हू, लेकिन सत्य का। शास्त्र की कथाओ मे उल्लेख हे कि ऐसा समझने वालो को अनेक प्रलोभन दिये गये यहा तक कि प्राण जाने का भी अवसर आ पहुचा—फिर भी वे अपने सत्य धर्म से विचलित नही हुए।

मतलब यह है कि चाहे कोई मुनीमी करे या मजदूरी करे, अगर वह सच्चा श्रावक है तो यही विचारेगा कि मै पैसे के लिए ही नौकरी नही करता हू। मुझे अपने धर्म का भी पालन करना हे। जो ऐसा विचार करके प्रामाणिकता के साथ व्यवहार करेगा, वही सच्चा श्रावक होगा। जो पैसे का ही गुलाम है, वह धर्म का पालन नही कर सकता। सच्चा श्रावक अपने मालिक के भी वताये हुए अन्यायपूर्ण काम को करना स्वीकार नही करेगा।

पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज एक वात कहा करते थे। वह इस प्रकार ह—

किसी सेठ के यहा एक प्रामाणिक मुनीम था। अपने सेठ का काम वह धर्मनिष्ठा के साथ किया करता था। एक वार सेठ ने मुनीम की सलाह नहीं मानी और इस कारण उसका काम कच्चा रह गया। सेठ ने कुछ दिनो तक तो अपना आडम्बर कायम रखा मगर पूजी के विना कोरा आडम्बर कव तक चल सकता था ? जव न चल सका तो एक दिन सेठ ने वडे दुख के साथ मुनीम से दूसरी जगह आजीविका खोज लेने को कह दिया। उसने लाचारी दिखलाते हुए अपनी स्थिति का भी हाल वतला दिया यद्यपि मुनीम से कोई बात छिपी हुई नहीं थी।

कभी मेरे योग्य काम आ पडे आप निस्सकोच होकर मुझे आज्ञा दे। अधिक तो क्या, मै प्राण देने के लिए भी तैयार हू।

इस प्रकार बडे दु ख के साथ सेठ ने मुनीम को विदा किया और मुनीम भी बडे दु ख के साथ विदा हुआ।

मुनीमजी घर बैठे रहे। नगर मे बात फैल गई कि अमुक मुनीमजी आजकल खाली है। उसी नगर मे एक वृद्ध सेठ रहता था। वह खूब धनवान् था। उसके बच्चे छोटे थे। वह चाहता था कि मै व्यापार और बालको का भार किसी विश्वस्त आदमी को सौप कर कुछ धर्म–कर्म करने मे लगू। मगर उसे अपने नौकरो मे ऐसा कोई नही दिखता था, जो उसका काम–काज सम्भाल कर ईमानदारी से काम कर सके।

आज के लोग तो अपनी आयु ससार–कार्य मे ही पूरी कर देते हैं, परन्तु पहले के लोग चौथी अवस्था मे या तो साधु हो जाते थे या साधु न होने की अवस्था मे धर्मस्थान मे लग जाते थे। इससे आगे वालो के सामने एक अच्छा आदर्श खडा हो जाता था और वे अपना कल्याण कर लेते थे।

सेठजी को उन मुनीमजी के खाली होने की खबर लगी। वह मुनीम को जानते थे। अपना काम–काज सम्भालने के लिए उन्हे सेठजी ने उपयुक्त समझा और एक दिन बुला कर कहा–मैं आपकी चतुराई से परिचित हू। आप हमारी दुकान का काम–काज सम्भाल ले। मुनीम आजीविका की तलाश मे था ही। उसने सेठजी की दुकान पर रहना स्वीकार कर लिया। सेठजी ने उसे सब नौकरो का अध्यक्ष बनाकर सब काम उसके सुपुर्द कर दिया।

थोडे दिन बाद सेठ ने मुनीम से कहा– अमुक बही के अमुक पाने का खाता निकालिए। मुनीम ने खाता निकाला। खाता उसी सेठ का था, जिसके यहा मुनीम पहले नौकर था और जिसकी आर्थिक स्थिति खराब हो गई थी। खाते मे कुछ रुपया बकाया था। सेठ ने कहा– यह रकम वसूल कीजिए।

मुनीम बही लेकर उस सेठ के यहा पहुचे। सेठ ने प्रेम के साथ आदर–सत्कार करके बिठलाया। मुनीम सकोच के कारण मुह से तकाजा न कर सका। उसने खाता खोलकर सेठ के सामने रख दिया। सेठ समझ गया। उसने आसू भर कर कहा–मुनीमजी, रुपया तो देना है, लेकिन इस घर की दशा आप से छिपी नही है। मैं क्या कहू ?

मुनीम ने कहा– आप दु खी न हो। मै स्थिति से परिचित हू। अगर मैंने अपने नये सेठ को वही उत्तर दे दिया होता तो ठीक नही रहता। इसी विचार से मै यहा तक आया हू।

वहीखाता लेकर मुनीमजी लौट आये। सेठ के पूछने पर उन्होने कहा–खाते मे रकम ज्यादा वकाया है। अभी चूकता कर देने की उनकी शक्ति नही है। कभी उनके दिन पलटेगे तो चुका देगे। वे हजम करने वाले आसामी नही है।

सेठ बोला–पहले के सेठ होने के कारण आप उनकी खुशामद करते हैं। हमारे नोकर होकर उनका रुख रखना उचित नही है। इतना वडा घर था विगड जाने पर भी गहने–वर्तन आदि तो होगे ही। अगर सीधी तरह नहीं देना चाहते तो दावा करके वसूल करो।

मुनीम–मैं जानता हू कि उनकी आमदनी ऐसी नही है। किसी प्रकार अपना निर्वाह कर रहे है और इज्जत लेकर बैठे है। उनकी आवरू विगाडना मेरा काम नही है। मैं तो आपकी और उनकी इज्जत बराबर समझता हू।

कुछ कठोर पडकर सेठ ने कहा–जिसे रोटी की गरज होगी, उसे किसी की आवरू भी बिगाडनी पडेगी।

मुनीम ने यह बात सुनी तो चाबियो का गुच्छा सेठजी के सामने रख दिया और कहा–सेठ साहब, मुझे विदाई दीजिये।

सेठ–अच्छी तरह सोच–विचार लीजिए। मैने आपको रोजगार मे लगाया हे। सब कर्मचारियो का प्रधान बनाया हे ओर आप मेरे साथ ऐसा सलूक करते हे ?

मुनीम–जो अपनी इज्जत के महत्त्व को नही समझता वही दूसरे की इज्जत विगाडता है। एक दिन वे भी मरे मालिक थे। आज उनकी स्थिति एसी नही हे ता क्या मे उनकी इज्जत विगाडने लगू। मैंने उनका नमक खाया हे आर वह मेरे सारे शरीर मे व्यापा हुआ हे। मे उनकी प्रतिष्ठा नष्ट नही करूगा। फिर भी अगर आप रकम वसूल करना ही चाहेगे तो मे अपनी जायदाद स चुकाऊगा। में सिर्फ पेसे का गुलाम नही हू। मे धर्म रो काम करने वाला हू।

मुनीम की बात सुनकर सठ को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उसने धन्यवाद दत हुए कहा–मुनीमजी म आपकी कसोटी करना चाहता था। मरी आज तक की चिन्ता दूर हो गई। ये चावियां सम्भालिये। अव आप जाने ओर दुकान जाने। अब यह घर और बाल–बच्चे मेरे नहीं आपके हैं। मेरे सिर का [illegible]

25 : फूलांबाई

आत्मकल्याण का पहला उपाय शास्त्र की बात यथार्थ रूप मे समझना है। शास्त्र का आशय कुछ और हो, आप समझ ले कुछ और ही तो बडा अनर्थ होता है। कुछ का कुछ अर्थ समझ लेने का क्या परिणाम होता है, इस बात को सरलता और स्पष्टता के साथ समझाने के उद्देश्य से एक दृष्टात करता हू–

एक नामी सेठ था। खूब धनाढ्य था। उसके पाच लडके थे, लडकी एक भी नही थी। एक दिन सेठ ने विचार किया–"हम दूसरे के यहा से लडकी लाते तो है पर दूसरो को देते नही है। यह मेरे ऊपर ऋण है।" इस प्रकार विचार करने के बाद सेठ के दिल मे कन्या का पिता बनने की भावना उत्पन्न हुई।

पुण्ययोग से सेठ की भावना पूर्ण हुई। उसके यहा एक लडकी जन्मी। सेठ का घर वैष्णव सम्प्रदाय का था। घर के सभी लोग विष्णु की भक्ति मे तल्लीन रहते थे। वे अपने धन–वैभव आदि को ठाकुरजी का प्रताप समझते थे। इसके अनुसार उन्होने उस लडकी को भी ठाकुरजी का ही प्रताप समझा।

पाच लडको के बाद गहरी भावना होने पर लडकी का जन्म हुआ था। इसलिए बडे ही लाड–प्यार के साथ लडकी का पालन–पोषण किया गया। लडकी का नाम फूलाबाई रखा गया। इस बात का बहुत ध्यान रखा जाता था कि लडकी को किसी भी प्रकार का कष्ट न होने पाये। लडकी जब कुछ सयानी हो गई तब भी सेठजी उसे उसी प्रकार रखते थे। लडकी कभी कुछ अपराध या भूल करती तो भी सेठजी एक शब्द न कहते और न दूसरो को कहने देते। इसी प्रकार व्यवहार चालू रहा और लडकी बडी हो चली।

जैसे होने वाला होता है, वैसे ही निमित्त भी मिल जाते हैं। तदनुसार सेठ के यहा एक दिन कोई पडित आये और उन्होने गीता का यह श्लोक पढा–

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अह त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच ।।

फूलाबाई इसका अर्थ समझी–सब धर्मो को छोडकर मेरी शरण मे आ जाओ। तुमने कितने ही पाप क्यो न किये हो, मैं उन सबसे मुक्त कर ही दूगा। अब उसने निश्चय कर लिया–नारायण पापो से मुक्त कर ही देते हैं, फिर किसी भी पाप से डरने की आवश्यकता ही क्या है ? पाप से डरने का अर्थ नारायण की शक्ति पर अविश्वास करना होगा। बस, केवल ईश्वर से डरना चाहिए, पापो से नही।

ठाकुरजी से डरने का अर्थ उसने यह समझा कि उन्हे विधिपूर्वक नैवेद्य आदि चढाकर पूजना चाहिए– किसी प्रकार की अविधि नही होनी चाहिए। इससे ठाकुरजी प्रसन्न होगे।

फूलाबाई के हृदय मे यह सस्कार ऐसी दृढता के साथ जम गया कि समय–समय पर वह कार्यो मे भी व्यक्त होने लगा। हृदय का प्रबल सस्कार कार्य मे उतर ही आता है। फूलाबाई का व्यवहार अपने नौकरो–चाकरो और पडौसियो के प्रति ऐसा ही बन गया। वह सबसे लडती–झगडती और निरकुश व्यवहार करती। इस प्रकार फूलाबाई शूलाबाई बन गई।

पहले कहा जा चुका है कि उस घर के सभी लोग सभी बातो के लिए ठाकुरजी का प्रताप समझते थे। घर मे जो भावना फेली होती है उसी को बालक ग्रहण करते हैं और वेसी ही भावना बन जाती है। फूलाबाई की भावना भी ऐसी ही हो चली। वह भी हर चीज को ठाकुरजी का प्रताप समझने लगी। सेठजी के यहा यह भजन गाया जाता था–

जो रूठे उसको रूठन दे, तू मत रूठे मन बेटा।
एक नारायण नहि रूठे तो सबके काटलू चोटी पटा।।

फूलाबाई ने इस भजन का यह आशय समझ लिया कि सब लोग रूठते हैं तो परवाह नही। उन्हे रूठ जाने दो। अगर ठाकुरजी अकेले न रूठे तो सब के सिर के बाल उतरवा सकती हू।

फूलाबाई के ऐसे व्यवहार को घर के लोग हसी मे टालते रहे, मगर फूलाबाई समझने लगी कि यह सब नारायण भगवान का ही प्रताप है। नारायण मददगार हो तो कोई क्या कर सकता है ? इस प्रकार फूलाबाई सबके साथ शूल का–सा व्यवहार करने लगी।

फूलाबाई की सगाई एक करोडपति सेठ के घर की गई। यह देखकर तो फूलाबाई के अभिमान का पार ही न रहा। वह सोचने लगी–मुझ पर ठाकुरजी की बडी कृपा है। यही कारण है कि इस घर मे मैने सभी पर अकुश रखा है, फिर भी मै करोडपति के घर ब्याही जा रही हू। जैसी धाक मैने यहा जमा रखी है, वैसी ही ससुराल मे जमा सकू तो ठाकुरजी की पूरी कृपा समझू।

विवाह हो गया। फूलाबाई ससुराल पहुची। ससुराल पहुचकर ससुर–सास के पैर छूना आदि विनीत व्यवहार तो दूर रहा, उसने अपनी दासी को सास के पास भेजकर कहला दिया–"अभी से यह बात साफ कर देना ठीक जचता है कि मै इस घर मे गुलाम या दासी बनकर नही आई हू। मै मालकिन बनकर आई हू और मालकिन बनकर ही रहूगी। अपने साथ मे धन लेकर आई हू, कोरी नही आई हू। सब काम–काज मेरे कहने के अनुसार होता रहा तो ठीक, अन्यथा इस घर मे तीन दिन भी मेरा निर्वाह न होगा।"

फूलाबाई सोचती थी–ठाकुरजी प्रसन्न है तो फिर डर किसका? आरम्भ मे प्रभाव जम गया तो जम गया, नही तो जमना कठिन है। इसलिए पहिले ही आतक जमा लेना चाहिए। डर–भय की तो परवाह ही नही है ।

नवागता पुत्रवधू का यह अनोखा सन्देश सुनकर सास को अचरज भी हुआ और दुख भी हुआ। वह सोचने लगी– यह कैसी विचित्र बहू आई है ! इसे इतना अहकार क्यो है ? है तो यह बडे घर की बेटी, पर इतने घमण्ड का क्या कारण हो सकता है ? घमण्ड किसी को भी हो सकता है लेकिन इस प्रकार आते ही कोई बहू ऐसा नही कहला सकती। देखने मे सुन्दर है, बडे घर की है फिर भी इसकी बोली और प्रकृति ऐसी क्यो है ? जान पडता है, इसके दिमाग मे कुछ न कुछ अवश्य है। फिर भी इसे अभी तो प्रसन्न ही रखना चाहिए। कुछ दिनो मे ठिकाने आ जाएगी। ऐसा सोचकर सास ने कहला भेजा–"अच्छा, जेसा बहू कहेगी वैसा ही होगा।"

फूलाबाई के अहकार को और ईधन मिल गया। वह सोचने लगी– धन्य है ठाकुरजी, उन्होने यहा भी मेरा बेडा पार लगा दिया। बडी प्रसन्नता और उत्साह के साथ उसने ठाकुरजी की मूर्ति पधराई और कहने लगी–"ठाकुरजी का प्रभाव मैने प्रत्यक्ष देखा !"

थोडे ही दिनो मे फूलावाई के व्यवहार से घर के सव लोग काप उठे। उसने सव जगह अपना एकछत्र राज्य जमाना शुरू किया। वह न किसी से प्रेम करती, न किसी का लिहाज रखती। सास वगेरह समझ गईं कि वहू का स्वभाव दुष्ट हे। मगर घर की वात वाहर जाने से इज्जत चली जाएगी, इस विचार से घर के लोग कडवे घूट के समान फूलावाई के व्यवहार को सहन करते गये ओर क्षमा करते रहे। उनकी क्षमा को फूलावाई ने ठाकुरजी का अपने ऊपर विशेष अनुग्रह समझा। उसका व्यवहार दिन–प्रतिदिन बुरा होता चला गया।

फूला की ससुराल के किसी सम्बन्धी का विवाह था। उस विवाह मे सपरिवार सम्मिलित होना आवश्यक था। वहू को भी साथ ले जाना जरूरी था। मगर चिन्ता यह थी कि अगर पराये घर जाकर भी इसने ऐसा ही व्यवहार रखा तो इतनी वडी इज्जत कौडी की हो जायेगी। अन्त मे वहू को घर पर ही छोड जाने का निश्चय किया। मगर फूलाबाई को छोड जाना भी सरल नही था। इसलिए उसकी सास ने एक उपाय सोच लिया।

मूर्ख लोग अपनी मिथ्या प्रशसा से प्रसन्न होते हैं। उन्हे प्रसन्न करके फिर जो चाहो वही काम करा सकते हो। वे खुशी–खुशी कर देगे। सास ने फूलावाई की खूव प्रशसा की। अपनी प्रशसा सुनकर वह फूल गई। उसके वाद सास ने कहा–इस विवाह मे जाना तो सभी को चाहिए। तुम वहुत होशियार हो। अगर घर रहकर इसे सम्भाले रहो तो सब ठीक हो जाएगा।

फूलावाई फूलकर कुप्पा हो चुकी थी। उसने कहा–तुम्हारे विना कानसा काम अटका हे ? तुम सव पधारो। घर सम्भालने के लिए मैं अकेली ही काफी हू।

घर क लोग यही चाहत थे। फूलावाई को घर छोडकर सव विवाह मे सम्मिलित हाने के लिए रवाना हो गय।

उधर सव लाग विवाह क लिए गय ओर सयोगवश इधर सेठ की समानता रखन वाल एक सगे महमान सेठजी क यहा आ गय। महमान भी ईश्वर म निष्ठा रखन वाला भक्त था। फूलावाई का महमान आन का समाचार मिला। उसन भोजन की तैयारी करवा कर उस जीमन क लिए वुलाया।

ऐसे समय मे कोध आना स्वाभाविक था। भोजन करने के अवसर पर ये शब्द कहकर फूलाबाई ने भोजन को जहर बना दिया था। पर मेहमान ने सोचा–मै भक्त हू। इसने भोजन को जहर बना दिया है, उसको मै अमृत न बना सका तो फिर मै भक्त ही कैसा ? इसमे और मुझमे फिर अन्तर ही क्या रहेगा ? मै तो आज आया हू और आज ही चला भी जाऊगा, मगर इसके घर के लोग कितने दयाशील और सहिष्णु होगे जो रोज–रोज इसके ऐसे बर्ताव को सहन करते होगे ! मेरा इसके साथ परिचय नही है, फिर भी इसने पत्थर–सा मारा है। यह घर वालो के साथ कैसा सलूक करती होगी ? सचमुच वे लोग धन्य हैं, जो इसके इस दुष्टतापूर्ण व्यवहार को शान्ति से सहन करते है ! अगर मै इसके स्वभाव को और भडका दू तो इसमे मेरी विशेषता क्या है ? मै इसका मेहमान बना हू। किसी उपाय से अगर इसका सुधार कर सकू तो मेरा आना सार्थक हो सकता है।

मन ही मन इस प्रकार विचार कर उसने फूलाबाई से कहा–आपने क्या ही अच्छी बात कही है ! यह भोजन की तैयारी और उस पर आपका यह बोलना मैंने आज ही देखा है। आप ऐसी है, तभी तो यह तैयारी कर सकी है।

फूलाबाई मन ही मन कहती है–ठाकुर का प्रताप धन्य है कि उन्होने इसे भी मेरे सामने गाय बना दिया है।

प्रकट मे वह बोली–अच्छी बात है अब आप जीम लीजिए। दो–चार दिर ठहरोगे न ? ऐसा भोजन दूसरी जगह मिलना कठिन है।

मेहमान–आप ठीक कहती है। ऐसा भोजन दूसरी जगह कदापि नही मिल सकता। मैं अवश्य दो–चार दिन रहूगा। आपकी कृपा है तो क्यो नही रहूगा ?

उसने सोचा–इस भोजन को अमृत बना लेना ही काफी नही है। इस बाई को भी मैं अमृत बना लू तो मेरा कर्त्तव्य पूरा होगा।

वास्तव मे सुधार का काम टेढा होता है। यह तलवार की धार पर चलने के समान कठिन है। सुधारक को बडी विकट परिस्थितियो का सामना करना पडता है। इन कठिनाइयो मे भी जो दृढ रहता है और अपने उद्देश्य की प्रशस्तता का ख्याल रख कर विकट से विकट सकटो को खुशी के साथ सहन कर लेता है वह अपने उद्देश्य मे सफल होता है।

मेहमान जीम–जाम कर चला गया। पूछताछ करके उसने पता चलाया कि फूलाबाई का स्वभाव ऐसा ही है। यह केवल ठाकुरजी की भक्ति

की कि आप दीनदयाल हे। बाई के अपराध को क्षमा करके यही रहिए अन्यथा मेरी बहुत बदनामी होगी। तब ठाकुरजी बोले—में अब तक के अपराधो को क्षमा कर सकता हू, पर इससे लाभ क्या होगा ? जिसे अपराध आगे भी करते रहना है, उसके लिए क्षमा मागन से क्या लाभ है ? जिस अपराध के लिए क्षमा मागनी है, वही अपराध आगे न किया जाये, तभी क्षमा मागना सार्थक होता है। अगर बाई भविष्य मे सबके प्रति आत्मभाव रखे, दूसरे की मार खाकर भी बदले मे न मारे, गाली सुनकर भी गाली न दे और शात बनी रहे, सब के प्रति नम्र हो, सबकी प्रिय बने, तो मै रह सकता हू अन्यथा नही। अब आप बतलाइए कि आपकी इच्छा क्या है ? आप ठाकुरजी की शर्त पूरी करके उन्हे रखना चाहती है या नही ?

फूला—बलिहारी है आपकी ! मै अब आपकी शरण मे हू। आपको तो ठाकुरजी स्वप्न मे ही मिले और स्वप्न मे ही आपने उनसे बातचीत की, परन्तु मुझे तो आप साक्षात् ठाकुरजी मिले है। आपने मेरी आखे खोल दी। वास्तव मे मेरी क्रूरता के कारण सब त्राहि—त्राहि कर रहे है। मैं भक्त नही नागिन हू। मैंने सदा ही अपने मुह से विष उगला है। आप पर भी मैंने जहर बरसाया पर आपकी आखो से अमृत ही निकला। आपने मुझे सच्ची शिक्षा दी हे। सबसे पहले आप ही मेरा अपराध क्षमा कीजिए। अपराध रहने से ठाकुरजी न रहेगे तो मे अपराध रहने ही नही दूगी। फिर ठाकुरजी केसे जा सकेंगे ?

मेहमान—आपने मुझसे जो कुछ कहा है, उससे मुझे दु ख नही हुआ। परन्तु जो अशक्त हे और धर्म को नही जानते हे उनसे क्षमा मागो। इसी मे आपका कल्याण हे। मे तो आपके क्षमा मागने से पहले ही क्षमा कर चुका हू।

प्रात काल होते ही फूलाबाई ने सबसे क्षमा मागी। पडोसियो नोकर—चाकरो से बडे प्रेम के साथ वह मिली और अपने अपराधो के लिए पश्चात्ताप करने लगी। उसने कहा—आप सब लोग अब तक मुझसे दु खी हुए हे। आपने मेरे कठोर व्यवहार को शान्ति के साथ सहन किया हे। एक बार ओर क्षमा कर दीजिए।

अगर फूलाबाई का मेहमान उसकी बात सुनकर क्रोधित हो जाता तो क्या फूलाबाई का सुधार हो सकता था ? नहीं। वास्तव मे क्षमा बडा गुण हे। क्षमा के द्वारा सबका सुधार किया जा सकता हे।

सब लोग फूलाबाई के आकस्मिक परिवर्तन को देखकर चकित रह गए। किसी ने कहा—अब तुमने अपना नाम सार्थक किया ! पर यह तो कहो कि इस परिवर्तन का कारण क्या है ?

फूला—अपने घर एक भक्त आये है। यह परिवर्तन उन्ही के प्रताप से हुआ है।

सारा वृत्तान्त जानकर सब परिवार के लोगो ने उन मेहमान की पशसा की। उनका बडा उपकार माना और देवता की तरह सत्कार किया। सेठ ने कहा—सच्चे भक्त से ही ऐसा काम हो सकता है ! आपने हमारा घर पावन कर दिया। जिस घर मे सदा आग लगी रहती थी, उसमे आपने अमृत का स्रोत पवाहित कर दिया।

फूला ने भक्त मेहमान से कहा—भगतजी ! अच्छा, इस पद का अर्थ बतलाइये—

जो रूठे उसको रूठन दे, तू मत रूठे मन बेटा।
एक नारायण नहि रूठे तो, सबके काटलूं चोटी पटा।।

भगत ने कहा—पहले जो अर्थ समझा है, वह बतलाओ। फिर मै कहूगा।

फूला—मैने यह अर्थ समझा था कि एक ईश्वर को खुश रखना और सब के चोटी पट्टे काट लेना।

भगत—यही तो भूल है। इसी भूल ने तुम्हे चक्कर मे डाल दिया था। इस पद का सही अर्थ यह है कि दूसरा रूठता है तो रूठने दे। हे मन ! तू मत रूठ। अर्थात् दूसरा अगर मारता है और गाली देता है तो तू क्रोध मत कर।

'एक नारायण नही रूठे तो सबके काटलू चोटी पटा" इसका अर्थ स्पष्ट है। अगर मैं तुम्हारी बातो पर क्रोध करता तो क्या तुम मेरे पैरो मे पडती? मैने अपने मन को नही रूठने दिया तो तुम मेरे पैरो मे गिरी ! यही तो चोटी—पट्टा काटना कहलाता है।

फूला—बहुत ठीक, अब मै समझ गई, पर एक श्लोक का अर्थ और समझा दीजिए।

भगत—कौनसा श्लोक ?

फूला—

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरण व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच ।।

भगत—इसका अर्थ यह है कि तुझ मे काम, क्रोध आदि जितने पाप है, मेरी शरण मे आने पर वे सब छूट जाएगे। तात्पर्य यह है कि जहा पाप है, वहा ईश्वर की शरण नही है और जहा ईश्वर की शरण है, वहा पाप नही हैं।

फूला—मैं आपकी कृतज्ञ हू। आपने मेरा भ्रम दूर कर दिया। आज मेरे नेत्र खुल गये। मैं कुछ का कुछ समझ बैठी थी।

इस कथा से स्पष्ट है कि शास्त्र के अभिप्राय को विपरीत समझ लेने से वडी गडवडी हो जाती है। इससे यह भी प्रतीत होता है कि सच्चे धार्मिक या परमात्मा के आराधक को अन्य प्राणियो के प्रति किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए ? अगर आपको भगवान् के वचन पर श्रद्धा है तो जगत के सव जीवो को अपना ही मानो। ऐसा करोगे तो भगवान् आपके हैं, अन्यथा भगवान् रूठ जाएगे।

"आत्मवत् सर्वभूतेषु" और "सव्वभूअप्पूअस्स" अर्थात् समस्त प्राणियो को अपना समझो। अपनी आत्मीयता की सीमा क्षुद्र मत रहने दो। तत्त्वदृष्टि से देखो तो पता चलेगा कि अन्य जीवो मे और आपके अपने माने हुए लोगो मे कोई अन्तर नही है।

26 : माता–पिता का उपकार

वास्तव मे माता–पिता के उपकार का बदला नही चुक सकता। कल्पना कीजिए–किसी आदमी पर करोड रुपयो का ऋण है। ऋण मागने वाला ऋणी के घर गया। ऋणी ने उसका आदर–सत्कार किया और हाथ जोडकर कहा " मैं आपका ऋणी हूँ और ऋण अवश्य चुकाऊगा।" अब आप कहिए कि आदर सत्कार करने और हाथ जोडने से ही क्या ऋणी ऋण–रहित हो सकता है ?

"नही ।

एक राजा ने बाग तैयार कराया और किसी माली को सौप दिया। माली ने बाग मे से दस–बीस फल लाकर राजा को दे दिये, तो क्या वह राजा के ऋण से मुक्त हो गया ?

'नही ।"

मित्रो ! इस शरीर रूपी बगीचे को माता–पिता ने बनाया है। उनके बनाये शरीर से ही उनकी सेवा की तो क्या विशेषता हो गई ? यह शरीर तो उन्ही का था। फिर शरीर से सेवा करके पुत्र उनके उपकार से मुक्त किस प्रकार हो सकता है ?

एक माता ने उपने कलियुगी बेटे से कहा–मैने तुझे जन्म दिया है, पाल–पोसकर बडा किया है। जरा इस बात पर विचार तो कर, बेटा !

बेटा नयी रोशनी का था। उसने कहा–फिजूल बड–बड मत करो। तुम जन्म देने वाली हो कौन ? मै नही था, तब तुम रोती थी और बाझ कहलाती थी। मैने जन्म लिया, तुम्हारे यहा बाजे बजे और मेरी बदौलत ससार मे पूछ होने लगी, नही तो बाझ समझ कर कोई तुम्हारा मुह भी देखना पसन्द नही करता था। फिर मेरे इस कोमल शरीर को तुमने अपना खिलौना बनाया। इससे अपना मनोरजन किया– लाडप्यार करके आनन्द उठाया। इस पर भी उपकार जतलाती हो ?

माता ने कहा—मेने तुझे पेट मे रखा सो ?

बेटा—तुमने जानबूझ कर मुझे पेट मे थोडे ही रखा था । तुम अपने सुख के लिए प्रयत्न करती थी, बीच मे हम आ गए। इसमे तुम्हारा उपकार ही क्या है ? फिर भी अगर उपकार जतलाती हो तो पेट मे रहने का किराया ले लो ।

यह आज की सभ्यता हे। भारतीय सस्कृति आज पश्चिमी सभ्यता का शिकार बनी जा रही है और भारतीय जनता अपनी पूजी को नष्ट कर रही है।

माता ने कहा—कोठरी की तरह तू मेरे पेट का भाडा देने को तैयार है, पर मैंने तुझे अपना दूध भी तो पिलाया है । बेटा—हम दूध न पीते तो तू मर जाती। तेरे स्तन फटने लगते। अनेक बीमारिया हो जाती। मैंने दूध पीकर तुझे जिन्दा रखा है ।

माता ने सोचा—यह बिगडेल बेटा यो नही मानेगा। तब उसने कहा—अच्छा चल, हम लोग गुरुजी से इसका फैसला करा ले। अगर गुरुजी कहेगे कि पुत्र पर माता—पिता का उपकार नही है तो मे अब से कुछ भी नहीं कहूगी। मैं माता हूँ। मेरा उपकार मान या न मान, मै तेरी सेवा से मुह नहीं मोड सकूगी।

माता की वात सुनकर लडके ने सोचा —शास्त्रवेत्ता तो कहते ही हैं कि मनुष्य कर्म से जन्म लेता हे ओर पुण्य से पलता हे। इसके अतिरिक्त गुरुजी माता—पिता की सेवा करने को एकान्त पाप भी कहते हैं। फिर चलने मे हर्ज ही क्या हे ।

यह सोचकर लडके ने गुरुजी से फेसला करवाना स्वीकार किया। वह गुरुजी के पास चला गया। परन्तु माता के गुरु दूसरे ही थे। वे उन गुरु कहलाने वाला मे नही थे, जो माता—पिता की सेवा करना एकान्त पाप कहते हैं। दोनो माता—पुत्र गुरुजी के पास पहुचे। वहा माता ने पूछा—"महाराज शास्त्र मे कहीं माता—पिता के उपकार का भी हिसाव वतलाया हे या नहीं ? गुरु ने कहा—जिसमे माता—पिता के उपकार का वर्णन न हो वह शास्त्र ही नहीं। वेद मे माता—पिता के सम्बन्ध मे कहा है—

मातृदेवो भव पितृदेवो भव।

बताया ओर कहा–बेटा अपने माता–पिता के ऋण से कभी उऋण नही हो सकता चाहे वह कितनी ही सेवा करे ।

गुरु की बात सुनकर पुत्र अपनी माता से कहने लगा– देख तो, शास्त्र मे यही लिखा है न कि सेवा करके पुत्र माता–पिता के उपकार से मुक्त नही होता। फिर सेवा करने से क्या लाभ हे ?

पुत्र ने जो निष्कर्ष निकाला, उसे सुनकर गुरु बोले–मूर्ख माता का उपकार अनन्त है और पुत्र की सेवा परिमित है। इस कारण वह उपकार से मुक्त नही हो सकता। पावनेदार जब कर्जदार के घर तकाजा करने जाये तब उसका सत्कार करना तो शिष्टाचार मात्र है। उस सत्कार मे ऋण नही पट सकता। इसी पकार माता–पिता की सेवा करना शिष्टाचार है। इतना करने मात्र से पुत्र उनके उपकारो से मुक्त नही हो सकता। पर इससे यह मतलब नही निकलता कि माता–पिता की सेवा नही करनी चाहिए। अपने धर्म का विचार करके पुत्र को माता–पिता की सेवा करनी ही चाहिए। माता–पिता ने अपने धर्म का विचार कर तेरा पालन–पोषण किया है, नही तो क्या ऐसे माता–पिता नही मिल सकते जो अपनी सन्तान के प्राण ले लेते है ?

गुरु की बात सुनकर माता को कुछ जोर बधा। उसने कहा– अब सुन ले कि मेरा तुझ पर उपकार है या नही ? इसके बाद उसने गुरुजी से कहा – महाराज यह मुझसे कहता है कि तूने मुझे पेट मे रखा है तो उसका भाडा ले ले। इस विषय मे शास्त्र क्या कहता है ?

प्रश्न सुनकर गुरुजी ने शास्त्र निकाल कर बतलाया। उसमे लिखा था कि गोतम स्वामी के प्रश्न करने पर भगवान् ने उत्तर दिया कि इस शरीर मे तीन अग माता के तीन अग पिता के और शेष अग दोनो के है। मास रक्त ओर मस्तक माता के हैं, हाड मज्जा और रोम पिता के है, शेष भाग माता ओर पिता दोनो के सम्मिलित है।

माता ने कहा–बेटा। तेरे शरीर का रक्त और मास मेरा है। हमारी चीजे हमे दे दे और इतने दिन इससे काम लेने का भाडा भी साथ ही चुकता कर दे। यह सब सुनकर बेटे की आखे खुली। उसे माता और पिता के उपकारो का ख्याल आया तो उनके प्रति प्रबल भक्ति हुई। वह पश्चात्ताप करके कहने लगा–मे कुचाल चल रहा था। कुसगति के प्रभाव से मेरी बुद्धि मलिन हो गई थी। इसके बाद वह गुरुजी के चरणो मे गिर पडा और कहने लगा–माता–पिता का उपकार तो मे समझ गया पर उस उपकार को समझाने वाले का उपकार समझ सकना कठिन हे। आपके अनुग्रह से मै माता–पिता का उपकार समझ सका हूँ।

27 : विद्वान् और मूर्ख

विद्वान् और मूर्ख के बुरे ओर अच्छे कामो मे भी अन्तर होता हे इस विपय मे ग्रन्थकारो ने एक दृष्टान्त इस प्रकार दिया हे–

एक विद्वान को जुआ खेलने का व्यसन लग गया था। जुए के फदे मे फसकर उसने गाठ की सारी पूजी गवा दी और अपनी पत्नी के आभूपण भी वेच डाले। उसकी दशा वडी हीन हो गई। लोग भी उसे दुत्कारते थे।

धन सम्वन्धी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए उस विद्वान् को चोरी करने के सिवाय ओर कोई मार्ग दिखाई न दिया। अन्त मे लाचार होकर उसने यही करने का निश्चय कर लिया। वह सोचने लगा–चोरी किसके घर करनी चाहिए? अगर सेठ के घर चोरी करूगा तो वह चोरी मे गये धन को भी हिसाव मे लिखेगा। सेठ लोग पाई–पाई का हिसाव रखते हे। जव–जव वह हिसाव देखेगा तव–तव गालिया देगा। अगर किसी साधारण आदमी के घर चोरी करूगा तो वह रोएगा। उस वेचारे के पास पूजी ही कितनी होती हे ?

इस प्रकार विद्वान ने सव का विचार कर देखा। अन्त मे उसने निश्चय किया कि औरो के घर चोरी करना उचित नही हे राजा के यहा चोरी करना चाहिए। इस प्रकार निश्चय करके वह राजा के यहा चोरी करने गया।

राजा ने एक वन्दर पाल रखा था। वन्दर राजा को वडा प्रिय था। वह उसे अपने साथ खिलाता और साथ ही रखता था। रात के समय जव राजा सोता तो वन्दर नगी तलवार लेकर पहरा दिया करता था। राजा वन्दर को अपना वडा प्रिय मित्र समझता था।

राजा गहरी निद्रा मे लीन था। उसी समय मकान की छत पर एक साप आया। साप की छाया राजा पर पडी। बन्दर ने साप की छाया को साप ही समझ लिया ओर विचार किया कि यह साप राजा को काट खाएगा। वह चपल और मूर्ख तो था ही आगे–पीछे की क्यो सोचने लगा? उसे विचार ही नही आया कि छाया पर तलवार चलाने से साप तो मरेगा नही, राजा ही मर जाएगा। वह सम्भलकर छाया रूपी साप को मारने के लिए तैयार हुआ।

मूर्ख मित्र की बदोलत राजा के प्राणपखेरू उडने मे देरी नही थी। विद्वान् खडा–खडा यह सब देख रहा था। उसने सोचा–"इस मूर्ख मित्र के कारण वृथा ही राजा की जान जा रही है। चाहे मे पकडा जाऊ, मगर राजा को बचाना चाहिए। अपनी आखो के आगे राजा का वध मै नही होने दूगा।' यह सोचकर विद्वान् एकदम झपट पडा और उसने बन्दर की तलवार पकड ली।

बन्दर और विद्वान् मे झगडा होने लगा। इतने मे राजा की नीद टूट गई। वह हडबडा कर उठा और बन्दर तथा विद्वान् की खीचतान देखकर और भी विस्मित हुआ। राजा के पूछने पर विद्वान् ने कहा– 'यह बन्दर आपके प्राण ले रहा था, पर मुझसे यह नही देखा गया। इसी कारण झपट कर मैने तलवार पकड ली है।

राजा–तू कोन है ?

विद्वान्–मै चोर हूँ।

राजा–बन्दर मुझे कैसे मार रहा था ?

विद्वान–आप सो रहे थे ओर मै चोरी करने की ताक मे आया था। छत पर साप आया। उसकी छाया आपके शरीर पर पडी। छाया को साप समझ कर यह बन्दर तलवार चलाने को उद्यत हुआ। मुझसे यह नही देखा गया। मेने झपट कर तलवार पकड ली।

विद्वान् की बात सुनकर राजा सोचने लगा–प्रजा को अशिक्षित रखकर बन्दर के समान मूर्ख बनाये रखने से क्या हानि होती है, यह बात आज मेरी समझ मे आई। मगर राजा ने पण्डित से पूछा–तुम पण्डित होकर चोरी करने आये हो ?

पण्डित–मे जुआ खेलने के व्यसन मे पड गया। एक दुर्व्यसन भी मनुष्य के जीवन को किस प्रकार पतित कर देता हे किस प्रकार विवेक को विनष्ट कर देता हे इसके लिए मे उदाहरण हूँ। जुए के दुर्व्यसन ने मेरी पण्डिताई पर पानी फेर दिया हे। मेरी विद्वत्ता जुए से कलकित हो रही हे। मे आपके सामने उपस्थित हूँ। जो चाहे करे।

मतलव यह हे कि नादान दोस्त की अपक्षा ज्ञानवान् शत्रु भी अधिक हितकारी होता हे। ज्ञानवान अपने कल्याण–अकल्याण को शीघ्र समझ जाता हे। ज्ञान का प्रकाश मनुष्य को शीघ्र सन्मार्ग पर ले आता ह। पथभष्ट मनुष्य भी, अगर उसके हृदय मे ज्ञान विद्यमान हे तो एक दिन सत्पथ पर आये बिना नही रहेगा। अतएव प्रत्येक दशा मे ज्ञान जीवन को उन्नत वनाने मे सहायक होता हे।

अगर आप लोग ज्ञान का सच्चा महत्त्व समझते हे तो अर्हन्त भगवान के ज्ञान का प्रचार कीजिए। आप स्वय ऐसे काम कीजिए जिससे ज्ञान का प्रचार हो। अर्हन्त के ज्ञान का प्रचार अक्षरज्ञान के बिना नही हो सकता। यह विचार कर ही भगवान् ऋषभदेव ने व्राह्मी को लिपिज्ञान दिया था। भगवान के आशय को आप समझिए और अपनी सन्तति को मूर्ख मत रहने दीजिए। ज्ञान का प्रचार करने का उद्योग कीजिए। ज्ञान की वृद्धि उन्नति का मूल मन्त्र हे। आपके पास जो भी शक्ति हो, ज्ञान के प्रचार मे लगाइए। इतना भी न कर सके तो कम से कम ज्ञान ओर ज्ञान–प्रचार का विरोध तो मत कीजिए। ज्ञान की शिक्षा की निन्दा करना उसमे रोडे अटकाना ओर जो लोग ज्ञान का प्रचार कर रहे हे उनका विरोध करना वुरी वात हे। ज्ञान–प्रचार शासन की प्रभावना का प्रधान अग हे। सच्चे ज्ञान का प्रचार होने पर ही चरित्र के विकास की सम्भावना की जा सकती हे। आप लोग ज्ञान ओर चरित्र की अराधना करक आत्म–कल्याण मे लगे, यही मेरी आतरिक कामना हे।

28 : राजा और चोर

शेखपुर मे एक चालाक चोर रहता था। वह इस चालाकी से लोगो के घर चोरी करता था कि यह पता लगाना कठिन हो जाता था कि चोरी कब और किस पकार हुई ? चोरी के कारण प्रजा परेशान हो गई। प्रजा ने प्रयत्न किया मगर चोर का पता नही लगा। किसी के घर का ताला टूटा नही, दीवार मे सेध लगी नही फिर भी घर मे चोरी हो गई। इस चतुर चोर की चालाकी से पजा थक गई। आखिरकार प्रजा इकट्ठी होकर राजा के पास पहुची। शेखपुर की पजा छोटी–छोटी बातो के लिए राजा के पास नही पहुचती थी। अतएव राजा समझ गया कि आज प्रजा पर कोई मुसीबत आई हे। इसी कारण लोग मेरे पास आये है।

राजा ने प्रजाजनो से पूछा – तुम्हे क्या कष्ट है ? स्पष्ट कहो।

प्रजा ने चोर द्वारा चारो ओर फैलाये हुए हाहाकार का वृत्तान्त आदि से अन्त तक कह सुनाया। राजा चोर की चालाकी की बात सुनकर आश्चर्यचकित हो कहने लगा –वह चोर वास्तव मे कोई चालाक चोर है। खोज करके जल्दी ही उसे पकडना चाहिए। चोर को पकडकर मै प्रजा का दु ख दूर करने का यथासम्भव प्रयत्न करूगा। सच्चा राजा हूँ तो अपने प्राणो को होम करके भी सात ही दिन मे चोर को पकड लूगा। इस प्रकार कहकर राजा ने प्रजा को आश्वासन दिया।

आज ऐसे प्रजाप्रेमी नरेश बहुत कम नजर आते है, जो प्रजा के दु ख को अपना दु ख समझकर उसे दूर करने का प्रयत्न करते हे। प्रजाप्रिय राजा प्रजा की रक्षा के लिए अपने प्राण भी निछावर कर देता है।

राजा ने चोर को पकडने की प्रतिज्ञा की हे यह बात चारो ओर नगर भर मे फेल गई। मडूक चोर ने भी राजा की प्रतिज्ञा की बात सुनी। वह विचार करने लगा–राजा ने पाण का होम देकर भी मुझे पकडने की प्रतिज्ञा की हे।

पर पकड। पर राजा के सुलक्षणयुक्त पेर देखकर वह सोचन लगी—यह तो कोई महापुरुप हे । पेर के चिन्हो से मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर का हाल मालूम हो जाता हे। इस कथन के अनुसार चोरकन्या ने राजा क सुलक्षणयुक्त पेर देखकर विचार किया— यह कोई महान पुरुप हे। ऐसे महान पुरुप को पिताजी मार डालना चाहते हे यह उचित नही हे।

चोरकन्या कहने लगी—मेरे पिता अत्यन्त क्रूर हे। वे तुम्हे मार डालना चाहते हे। मे तुम्हारे सुलक्षणयुक्त पेर देखकर समझ गई हूँ कि तुम राजा हो। मे तुमसे यही कहना चाहती हूँ कि अगर अपने प्राण वचाना चाहते हो तो इस रास्ते से जल्दी भाग जाओ वर्ना तुम्हारे प्राणो की खैर नही।

राजा ने चोरकन्या की वात मान ली। वह उसके वताये मार्ग से भाग निकला। राजा जव दूर जा पहुचा तो चोरकन्या ने मडूक को आवाज दी। कहा— वह भिखारी तो भाग गया।

भिखारी के भागने का समाचार पाते ही मडूक की आखे लाल हो गई। कक नामक पत्थर से वनाई गई तीखी तलवार लेकर वह राजा के पीछे दौडा। तलवार इतनी तीखी थी कि जिस चीज पर उसका प्रहार हुआ तत्काल उसके टुकडे—टुकडे हो जाते थे।

चोर ने दूर से ही राजा पर तलवार का प्रहार किया। मगर वह प्रहार पत्थर के खम्भे पर जा लगा। खम्भा टुकडे—टुकडे होकर गिर पडा। राजा बडी कठिनाई से वच सका। चोर समझ गया— राजा वच गया हे और खम्भा टुकडे—टुकडे हो गया हे।

चोर निराश होकर घर लौट आया। उसने अपनी कन्या से कहा— राजा धोखा देकर भाग गया। वह अपने घर की छिपी वात जान गया हे। अब हमें बहुत होशियारी के साथ रहना चाहिए।

चोरकन्या ने कहा—पिताजी ! जान पडता हे अव आपके पापो का घडा भर गया हे।

मडूक ने क्रुद्ध होकर कहा—क्या अपशकुन की वात मुह से निकालती

रूप मे क्रय–विक्रय कर रहा था। राजा चोर व्यापारी को देखते ही पहचान गया। राजा ने पूछा– 'तुम क्या बेचने आये हो ? तुम्हारे पास क्या है ?'

चोर– हमारे पास सभी कुछ है। तुम्हे क्या चाहिए ?

राजा– भाई मुझे और कुछ नही चाहिए। सिर्फ तुम्हारी आवश्यकता है।

चोर– मेरा क्या काम है ?

राजा– तुम चोर हो इसलिए तुम्हारी जरूरत हे ?

चोर– मै साहूकार हूँ। कौन मुझे चोर कहता है ?

राजा– तुम्हारे चोर या साहूकार होने का निर्णय अभी हो जायेगा। तुम्हारे चोर होने की खातिरी मैने तो पहले से ही कर रखी है।

आखिर राजा ने चोर को पकड लिया। चोर विचार करने लगा– मुझे पकडने वाला कोई मामूली आदमी नही है। राजा ने मुझे पकडा है। मुझे सख्त सजा मिलेगी।

राजा बोला– अब तुम पकडे जा चुके हो। कहो अब तुम्हे क्या करना है ?

चोर बोला– जो आप कहे वही करने को तैयार हूँ।

राजा– सबसे पहले तुम अपनी कन्या का मेरे साथ विवाह कर दो।

चोर– ठीक है। यह कहकर उसने प्रसन्नतापूर्वक अपनी कन्या राजा को ब्याह दी।

राजा ने चोरकन्या से कहा–तुमने मेरे शरीर की रक्षा की थी। अब यह शरीर मे तुम्हारे सुपुर्द करता हूँ।

चोरकन्या बोली– नाथ आप उदार हे इसी से ऐसा कहते है। मे तो वास्तव मे चोर की कन्या हूँ। मै आपके सम्मान के योग्य नही। आपने मेरा सम्मान करके मुझ पर उपकार किया हे।

राजा– अब तुम्हे किसी प्रकार की चिता नही करनी चाहिए। तुम्हारे पिता अब मेरे ससुर हे। मे उनका भी सम्मान करूगा ओर गौरव बढाऊगा।

राजा ने मडूक चोर को प्रधानमन्त्री बना दिया । जब यह बात नगर मे फेली तो सभी लोग राजा को धिक्कारने लगे। राजा इसके लिए तेयार था। वह जानता था कि पहले–पहल लोग मेरे कार्य से अप्रसन्न होगे मगर जब इसका नतीजा सुनेगे तो प्रसन्न हुए बिना नही रहेगे।

राजा चोर–प्रधान को धमकाकर या समझा–बुझाकर चोरी के रत्न निकलवाता रहता था। उसके पास अभी कितने रत्न हे यह बात राजा

29 : वक्रता

जिसके भाव मे सरलता होगी उसकी भाषा मे भी सरलता होगी और काया मे भी सरलता होगी। इसके विपरीत जिसके कार्यों मे और जिसकी भाषा मे वक्रता होगी उसके भावो मे सरलता नही हो सकती । जो वृक्ष ऊपर से हराभरा दिखाई देता है, उसकी जड भी मजबूत और हरीभरी है, ऐसा कहा जाता है परन्तु जो वृक्ष ऊपर से सूखा नजर आता है, उसकी जड हरी है यह कैसे कहा जा सकता है? इसी प्रकार जब काया और भाषा मे वक्रता होती है तब कैसे कहा जा सकता है कि भाव मे सरलता है। जब काया मे वक्रता होती है तो भाव मे भी वक्रता होती है यह बात एक ऐतिहासिक उदाहरण देकर समझाता हू–

बादशाह अकबर का प्रधान हिन्दू था। यह हिन्दू–प्रधान मुसलमानो को शल्य की भाति चुभता था। उनकी मान्यता थी कि मुसलमान राज्य मे हिन्दू–प्रधान कदापि नही होना चाहिए। अतएव वे हिन्दू प्रधान के बदले किसी मुसलमान को प्रधान बनाने का प्रयत्न करते थे। जब उनका कोई प्रयत्न सफल नही हुआ तो उन्होने बेगम को भरमा कर अपनी मनोकामना पूरी करनी चाही। कुछ मुसलमान बेगम के पास पहुचे और बोले– आपका भाई [illegible] हर तरह से काबिल है फिर भी उसे दीवान न बनाकर एक हिन्दू काफिर को सल्तनत का दीवान बनाया गया है। क्या यह ठीक कहा जा सकता है?

अगर दरअसल वह होशियार है तो उसे दीवान न बनाकर एक हिन्दू काफिर को दीवान क्यो बनाया है ? बादशाह बेगम का मतलब समझ गया। उसने मन ही मन विचार किया–बेगम को इस बात का यकीन करा देना चाहिये कि दरअसल उसका भाई कितना काबिल है। इस पकार विचार कर बादशाह ने कहा–तुम्हारा कहना सही है। मुझ से भूल हुई कि अपने ही घर मे शेखहुसैन जैसे काबिल शख्स के होते हुए भी मैने एक हिन्दू को सल्तनत का वजीर बना दिया। मै कल से शैखहुसैन को बडा वजीर बना देने का इन्तजाम करूगा।

जब बादशाह राजमहल मे से चले गये तो वे धूर्त मुसलमान फिर बेगम के पास आये और पूछने लगे–'क्या हुआ ?' बेगम ने उत्तर दिया–सब काम हो गया है। कल मेरा भाई शैखहुसैन पधान बना दिया जायेगा। यह सुनकर वे मुसलमान पसन्न हुए और कहने लगे–चलो, हिन्दूप्रधान रूपी काटा तो दूर हुआ !

दूसरे दिन बादशाह ने प्रधान से कहा– "तुमने बहुत दिनो तक प्रधान–पद भोगा। अब थोडे दिनो के लिए शेखहुसैन को यह पद दे दो"

हिन्दू वजीर ने कहा– 'जैसी जहापनाह की मर्जी।"

बादशाह ने प्रधान–पद शेखहुसैन को सौपा और हिन्दू प्रधान को पृथक् कर दिया। बादशाह के इस कार्य से मुसलमान बहुत प्रसन्न हुए। मगर उन्हे पता नही था कि शेखहुसैन इस कार्य के लिए योग्य है या नही ? बादशाह को भलीभाति मालूम था कि शेखहुसैन इस पद को सुशोभित नही कर सकता। उन्होने सोचा–शेखहुसैन को मैने प्रधान पद सौप तो दिया है परन्तु वह किसी दिन राज्य को भयकर हानि पहुचाएगा। अतएव ऐसा कोई उपाय करना ठीक होगा कि वह स्वय ही प्रधान–पद छोडकर भाग जाये। इस प्रकार विचार कर बादशाह ने शेख से कहा–रोम के बादशाह से कुछ काम है। तुम वहा जाओ और काम को इस प्रकार कर आओ जिससे मेरी प्रतिष्ठा बढे। शेखहुसैन ने बादशाह की आज्ञा शिरोधार्य की ओर रोम जाने की तैयारी शुरू कर दी।

शेखहुसैन रोम गया। उसने वहा ऐसा व्यवहार किया कि उसका अपमान हुआ। अपमानित होकर वह वापिस लौटा। वह अपने मन मे कहने लगा–मे इस झझट मे कहा से पड गया। पहले मै मोज मे था। प्रधान बन

कर मुसीवत गले लगा ली। इस प्रकार सोचता– विचारता वह बादशाह के सामने आया। वादशाह ने पूछा– रोम सकुशल जा आये ? शेखहुसेन ने उत्तर मे कहा–आपने खूब झझट मे डाल दिया । वहा मेरा अपमान हुआ ओर जिस काम के लिये आपने भेजा था वह भी नहीं हुआ। मुझसे यह वजीरत न होगी। मेहरबानी करके यह पद वापिस ले लीजिए। वादशाह ने जवाव दिया–यह सब बात तुम अपनी बहिन से कहो।

वादशाह चाहते थे कि वेगम इन सब वातो से परिचित हो जाये और फिर कभी ऐसा प्रपच न करे। इसी कारण बादशाह ने सब बाते वेगम से कहने के लिए कहा। शेखहुसैन अपनी बहिन के पास गया और कहने लगा– बहिन! प्रधानपद की यह मुसीबत तुमने क्यो मेरे सिर मढी पहले मै मजे से रहता था अब चिन्ता ही चिन्ता मे दिन बीतता हे।

वेगम–तुम प्रधान बनाये गये तो बुरा क्या हुआ। प्रधान का हुक्म तो वादशाह से भी ऊचा समझा जाता है।

शेख– वहिन ! तुम्हारा कहना सही हे। प्रधान का पद बडा हे यह ठीक हे मगर उसे टिकाये रखने के लिए मुझमे कावलियत भी तो होनी चाहिये। मुझमे यह कावलियत नही हे। इसलिए किसी तरह कोशिश करके मुझे इस मुसीवत से वचाओ।

वेगम–फला मुल्लाजी और फला मुसलमानो ने तुम्हे वजीर वनाने के लिए मुझ से कहा था, वल्कि जोर दिया था। उन्होने ही मुझे ऐसा करने के लिए भडकाया था लिहाजा उन्हे बुलवाकर पूछ लेती हू।

जिन मुल्लाओ और मुसलमानो ने वेगम को भरमाया था उन सबको वेगम ने अपने सामने बुलवाकर पूछा– तुम लोग मेरे भाई को वजीर वनाने के लिए कहते थे। उसे वजीर बना भी दिया गया हे। लेकिन वह वजीर बने रहने के लिए तैयार नही हे । अब क्या करना चाहिए ?

उन्होने कहा हमारी ख्वाहिश तो यही थी कि मुसलमान सल्तनत का वजीर भी मुसलमान ही होना चाहिए। इसी नजर से हमने आपके भाई का नाम दिया था [illegible] अगर वह वजीर बनना या रहना नही चाहते तो जा।

है, उसे तुम सुधार आओ। बादशाह की आज्ञा शिरोधार्य करके हिन्दू प्रधान दलबल के साथ रोम गया। रोम के बादशाह को मालूम हुआ कि भारत का पधान आया है । रोम के बादशाह ने कहा–भारत के प्रधान का व्यक्तित्व ही क्या है ? एक पधान तो पहले आया था अब यह दूसरा आया है । मिलना तो चाहिए ही।

रोम के बादशाह ने भारत के पधान की परीक्षा करने के लिए एक युक्ति रची। उसने अपने ग्यारह गुलामो को भी अपनी जैसी ही पोशाक पहना दी । बारहो आदमी एक समान बैठ गये, जिससे पता न लग सके कि वास्तव मे बादशाह कौन है ? भारतीय–पधान रोबदार पोशाक पहन कर रोम की राजसभा मे गया। राजसभा मे पहुचकर पधान ने एक ही नजर मे असली बादशाह को पहचान लिया और उसको सलामी दी। बादशाह ने पूछा कि तुम मुझे बादशाह समझते हो तो ये दूसरे लोग कौन है ? भारत के प्रधान ने उत्तर मे कहा–हमारे यहा भारत मे होली के अवसर पर ऐसे अनेक बादशाह बनाये जाते है। यह लोग भी ऐसे ही बादशाह है। बादशाह ने फिर पूछा–यह बात तुमने कैसे जानी कि ये लोग असली बादशाह नही हैं और मैं असली बादशाह हूॅं। भारत के प्रधान ने कहा–जिस समय मै राजसभा मे दाखिल हुआ, उस समय यह मेरी पोशाक की ओर वक्र दृष्टि से देखने लगे। अकेले आप ही गम्भीर होकर बैठे रहे। आपकी गम्भीरता देखकर मै जान सका कि वास्तव मे आप ही बादशाह है। यह सुनकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। प्रधान के साथ उसने हाथ मिलाया और उसकी पीठ ठोक कर योग्यता प्रमाण–पत्र दिया। रोम के बादशाह ने भारतीय प्रधान शेखहुसैन के आने का जिक्र करते हुए कहा–तुमसे पहले जो प्रधान आया था, वह तो बिल्कुल अयोग्य था। भारतीय प्रधान ने रोम के बादशाह के मुख से शेखहुसैन की निन्दा सुनकर कहा–जहापनाह! शेखहुसैन को तो आपकी परीक्षा करने भेजा था। वास्तव मे वह अयोग्य नही था। इस प्रकार भारतीय–प्रधान ने अपनी प्रतिष्ठा बढाने के साथ शेखहुसैन की अप्रतिष्ठा भी दूर की।

प्रधान रोम से लौटकर बादशाह अकबर के समक्ष आया। उसने रोम का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। बादशाह सारी बाते सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने मुसलमानो को बुलाकर कहा– वजीर तो ऐसा होना चाहिए। बादशाह का कथन सुनकर मुसलमानो ने कहा – अब हमारी समझ मे आया कि आप जो कुछ करते हे योग्य ही करते है।

इस कथा से यह सार निकलता हे कि जव भाव मे सरलता आती हे तव काया मे भी सरलता आती हे ओर जब भाव मे सरलता नही होती तो काया मे भी सरलता नही होती। भाव मे वक्रता आने से काया मे भी वक्रता आ जाती है । उपर्युक्त उदाहरण मे हम देख चुके हैं कि नकली बादशाहो ने भी पोशाक तो असली वादशाह सरीखी ही पहनी थी, परन्तु उनके भाव वक्र होने के कारण उनकी काया मे भी वक्रता आ गई थी । इसके विपरीत बादशाह के भाव मे वक्रता न थी अतएव उनकी काया मे भी वक्रता न आई। भाव की वक्रता तथा सरलता का पता तो काया की वक्रता और सरलता से सहज ही लग जाता है। अतएव भाव मे सरलता रखने के साथ काया और भाषा मे भी सरलता रखना आवश्यक है। अगर कोई मनुष्य काया मे वक्रता रखकर अपने भाव सरल बतलाता है तो उसका कथन मिथ्या है।

30 : कषाय–विजय

कषाय की तीव्रता के कारण ही नरक आदि नीच गतियो मे जाना पडता है। नरक कही बाहर से नही आता। वह तो अपने ही परिणामो मे है। कितने ही लोग दु ख माथे पर आ जाने के समय हाय–तोबा मचाने लगते है। वे यह नही सोचते कि दु ख कहा से और कैसे आया है ? दु ख न तो बाहर से आते है और न आये ही है। वे तो अपने ही मलिन परिणामो की उपज है। मलिन परिणामो का त्याग करना ससार पर विजय प्राप्त करने का मार्ग है। साथ ही मलिन परिणामो के अधीन होना ससार के अधीन होने के समान है, अतएव जल्दी से जल्दी कषाय का त्याग करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपने हृदय मे यह बात अकित कर रखनी चाहिए कि – 'कषाय की बदौलत ही हमारी स्वाधीन आत्मा पराधीनता मे पडी है। आत्मा को स्वाधीन बनाने के लिए कषाय शत्रु पर विजय प्राप्त करनी चाहिए।'

जो स्थान और कारण कषाय उत्पन्न करने वाला है, वही स्थान और कारण कषाय को जीतने वाला भी है। यह बात स्पष्ट करने के लिए भी उत्तराध्ययन सूत्र मे आया हुआ एक उदाहरण तुम्हे सुनाता हूँ।

एक बार एक क्षत्रिय ने दूसरे क्षत्रिय को जान से मार डाला। मृत क्षत्रिय की पत्नी उस समय गर्भवती थी। वह क्षत्रियपत्नी विचार करने लगी–मेरे पति मे थोडी कायरता थी, तभी तो उनकी अकालमृत्यु हुई। वे वीर होते तो अकालमृत्यु न होती। क्षत्रियपत्नी की इस वीर–भावना का प्रभाव उसके गर्भस्थ पुत्र पर पडा। आगे चल कर वह पुत्र वीर क्षत्रिय बना।

माता अपने बालक को जैसा चाहे, वैसा बना सकती है। माता चाहे तो अपने सुपुत्र को वीर भी बना सकती है और चाहे तो कायर भी बना सकती हे। साधारणतया सिह का बालक सिह ही बन सकता है ओर सूअर का बालक सूअर ही बनता हे। उनमे किसी प्रकार का परिवर्तन नही होता परन्तु मनुष्य को इच्छानुसार वीर और कायर बनाया जा सकता हे।

माता– हा, वह अभी तक जीवित है।

क्षत्रियपुत्र–ऐसा है तो अभी तक मुझे बताया क्यो नही ?

माता– मै तुम्हारे पराक्रम की जाच कर रही थी । अब मुझे विश्वास हो गया कि तू वीरपुत्र है । जब तू दूसरे शत्रु को परास्त कर चुका है तब अपने पिता का घात करने वाले शत्रु को भी अवश्य परास्त कर सकेगा। तेरा सामर्थ्य देखे बिना शत्रु के साथ भिड जाने की बात मै कैसे कहती ?

क्षत्रियपुत्र माता का कथन सुन और उत्तेजित हो कहने लगा–माताजी! मै अभी शत्रु को पराजित करने जाता हू । अपने पिता के वैर का बदला लिये बिना मै हर्गिज नही लौटूगा। इतना कहकर वह चल दिया।

दूसरी ओर क्षत्रियपुत्र के पिता की हत्या करने वाले क्षत्रिय ने सुना–जिसे मैने मार डाला था, उसका वीर क्षत्रियपुत्र क्रुद्ध होकर अपने पिता का वैर भजाने के लिए मेरे साथ लडाई करने आ रहा है। यह सुनकर उस क्षत्रिय ने विचार किया–वह युवक बडा ही वीर है और उसके शरण मे चला जाना ही हितकर है। इसी मे मेरा कल्याण है। इस तरह का विचार करके वह क्षत्रियपुत्र के सामने गया और उसके अधीन हो गया। क्षत्रियपुत्र उस पितृघातक शत्रु को लेकर अपनी माता के पास आया। उसने माता से कहा–इसी क्षत्रिय ने मेरे पिता की हत्या की है। इसे पकड कर तुम्हारे पास ले आया हू अब जो तुम कहो वही दण्ड इसको दिया जाये।

माता ने अपने पुत्र से कहा–इसी से पूछ के देख कि इसके अपराध का इसे क्या दण्ड मिलना चाहिए ?

पुत्र ने शत्रु से पूछा– बोलो अपने पिता के वैर का तुमसे किस प्रकार बदला लिया जाये ?

शत्रु ने उत्तर दिया–तुम अपने पिता के वैर का बदला उसी प्रकार लो जिस प्रकार शरण मे आये हुए मनुष्य से लिया जाता है।

क्षत्रियपुत्र की माता सच्ची क्षत्रियाणी थी। उसका हृदय तुच्छ नही विशाल था। माता ने पुत्र से कहा–बेटा, अब इसे शत्रु नही भाई समझ।

जब शरण मे आ गया हे तो शरणागत से बदला लेना सर्वथा अनुचित हे। शरण मे आया हुआ कितना ही बडा अपराधी क्यो न हो, फिर भी भाई के समान ही है। अतएव यह तेरा शत्रु नही, भाई के समान ही हे। मे अभी भोजन बनाती हू। तुम दोनो भाई साथ बेठकर आनन्दपूर्वक जीमो। तुम सगे भाइयो की तरह साथ–साथ जीमो ओर प्रेमपूर्वक रहो। मे यही देखना चाहती हू।

माता का कथन सुनकर पुत्र ने कहा —माताजी ! तुम पितृघातक शत्रु को भी भाई बनाने को कहती हो, सो ठीक हे परन्तु मेरे हृदय मे जो क्रोधाग्नि जल रही है, उसे मे किस प्रकार शान्त करू ?

माता ने उत्तर दिया — पुत्र ! किसी मनुष्य पर क्रोध उतार कर क्रोध शान्त करना अथवा क्रोध पर विजय प्राप्त करना ही सच्ची वीरता है। भगवान महावीर ने तो कहा हे—'उवसमेण हणे कोह' अर्थात उपशम—शाति से क्रोध को जीतना चाहिए। इसी प्रकार बौद्धशास्त्र मे कहा हे—

न ही वेरेण वेराणि समन्तीह कदाचन।
अवेरेण वेराणि, एस धम्मो सनन्तनो।।

अर्थात्—इस ससार मे वैर से वैर कदापि शान्त नही होता। अवेर—प्रेम से ही वेर शान्त होता है। प्रेम से वैर शान्त करना ही सनातन धर्म हे।

असली खूबी तो शान्ति—क्षमा से क्रोध को शान्त करने मे ही है। क्रोध भयकर शत्रु है। इस शत्रु को क्षमा से जीतना ही सच्ची वीरता है। नमीराज ने भी इन्द्र से कहा था—

जो सहस्स सहस्साण सगामे दुज्जए जिणे।
एग जिणेज्ज अप्पाण ऐस सो परमो जयो।।

— उत्तराध्ययन 9/34

तात्पर्य यह हे कि जो पुरुप क्रोध को अक्रोध से जीतता है वही सच्चा वीर है। इसी प्रकार जो कपाय पर विजय प्राप्त करता हे वही सच्चा वीर है। कपायो पर विजय प्राप्त करने मे ही वीरता हे।

माता का आदेश पाकर पुत्र न प्रसन्नतापूर्वक अपने पितृहन्ता शत्रु को गले लगाया। दानो ने सगे भाइयो की तरह साथ—साथ भोजन किया।

कहने का आशय यह है कि जो स्थान कपाय उत्पन्न करने का है वही स्थान कपाय जीतन का भी हे। वे वास्तव मे ही वीर पुरुप हे जो अपने शत्रुओ को भी मित्र बना लेते हे। सच्ची वीरता तो इसी मे हे कि क्रोध—[illegible] शान्ति—क्षमा से जीता जाय और पशुओ को भी मित्र बना लिया जाय। [illegible] मित्रता के रूप मे परिणत हो जाती होगी जब कैसा

बाधते थे। परन्तु आजकल तो लोगो के मन इतने अधिक सकुचित तथा मलिन हो गये है कि साधारण सी बात मे भी क्लेश करने लगते है।

कषाय को जीतने का सरल मार्ग यह है कि वैरी को अपना हितैषी समझ लिया जाये। शत्रु भी मित्र की भाति हमारा उपकार करता है, ऐसा समझकर उसके पति सद्भाव पकट करना चाहिए। पैर मे चुभे हुए काटे को निकालने के लिए सुई चुभोनी पडती है या डाक्टर आपरेशन करता है तो क्या उस पर नाराजगी पकट करनी चाहिये ? नही। लोग यही मानते है कि डाक्टर हमारा हित करता है। जिस पकार डाक्टर पीडा पहुचाने पर भी हितैषी माना जाता है उसी प्रकार तुम्हारा वैरी भी तुम्हारा हित करता है। ऐसा मानो और उसके प्रति वैरभाव न रखो तो तुम अवश्य ही कषाय को जीत सकोगे। कषाय को जीतने से आत्मकल्याण होगा।

किया – सम्भव हे स्त्री ने कुछ बचा रखा हो तो इस समय तो वह खिलाएगी ही फिर देखा जाएगा। इस प्रकार विचार कर वह घर लोट आया। उसकी माता ओर पत्नी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी ओर सोच रही थी कि वह कुछ लावे तो बनाये, खाये ओर खिलाये। मगर ब्राह्मण को खाली हाथ आया देखा तो उन्हे बडी निराशा हुई। वे ब्राह्मण से कुछ भी नही बोली। उसने अपनी पत्नी से कहा– लाओ, कुछ हो तो खाने को दो।

पत्नी–कुछ लाए हो तो बना दू । घर मे तो कुछ भी नही हे।

ब्राह्मण–रोज लाता हू। आज नही मिला तो स्त्री होकर एक दिन का भोजन भी नही दे सकती ?

ब्राह्मण बहुत भूखा था। उसे क्रोध आ गया। उधर ब्राह्मणी भी लाल हो गई। ब्राह्मणी ने कहा–कभी एक दिन से ज्यादा का भोजन लाए हो तो मुझसे कहो कि सम्भाल कर क्यो न रखा ? लाकर देना नही और फिर ऊपर से मागना और तकरार करना यह भी भला कोई बात है। अगर खिलाने की हिम्मत नही थी तो विवाह किये बिना ही कौनसा काम अटकता था ?

ब्राह्मण तपा हुआ आया था। उसने क्रोध मे तमतमाते हुए कहा – शखिनी। मेरे घर तेरे जेसी स्त्री आई तो अब खाने को कैसे मिल सकता है? कोई सुलक्षणा स्त्री आती तो मे कमा लाता। मगर तू ऐसी अभागिनी मिली हे कि मे भटकते–भटकते हेरान हो गया पर चार दाने अन्न भी न मिल सका। तू अर्द्धांगिनी हे तुझे भी तो कुछ करना चाहिए था। मेहनत–मजूरी करके भी कुछ रखना चाहिए था। स्त्री को यह सोचना चाहिये था कि कदाचित कोई अतिथि आ जाये तो केसी बीतेगी।

ब्राह्मणी ओर गरम हो गई। वह कहने लगी–बस बहुत हो गया। अब जीभ बन्द कर लो। धिक्कार हे उन सास जी को जिन्होने तुम्हे जन्म दिया हे। मे अभागिनी ही सही तुम्हारी माता तो भाग्यशालिनी हैं। उनके भाग्य से ही कुछ मिला होता। दरअसल अभागिनी मे नही तुम्हारी माता हैं जिन्होने तुम सरीखा सपूत पैदा किया जिसके पीछे मैं भी कष्ट पा रही हू।

ब्राह्मण ने कहा–तेरे मा–बाप ने तुझे तो खूब पैदा किया है जो अपनी [illegible] बोलती है। निर्लज्जता की [illegible] भी नहीं गई।

यही है कि घर मे कुछ नही और खाने को मागते है । इस राज्य मे ऐसे भी आदमी रहते है । घर मे दाना नही और विवाह करके स्त्री को पकड लाते है और उसकी मट्टी पलीत करते है। उन्ही से पूछ लो, लडाई का और कोई कारण हो तो।

ब्राह्मण सोचने लगा–बुरा हुआ। मैने वृथा ही क्रोध मे आकर इसे मारा। इज्जत जाने का मौका आ गया।

पुलिस ने कहा –इसमे स्त्री का कोई दोष नही। यह पुरुष का ही दोष है। ब्राह्मण । तुमने स्त्री पर अत्याचार किया है। तुम गिरफ्तार किये जाते हो।

ब्राह्मण गिरफ्तार कर कोतवाल के पास पहुचाया गया। ब्राह्मण सोचने लगा–क्रोध मे आकर ब्राह्मणी को मार तो दिया, मगर अब कहूगा क्या ? पुलिस के सामने अपनी कष्टकथा कहने से लाभ ही क्या? सिर्फ लज्जित होने के और क्या होगा? चाहे जो हो, राजा के सिवाय और किसी को कुछ भी उत्तर न दूगा।

कोतवाल ने कहा–तुम अपना बयान लिखाओ। तुमने क्या किया है किस अपराध मे गिरफतार किये गये हो।

ब्राह्मण बोला–मै महाराज भोज को छोडकर और किसी के सामने बयान न दूगा। कोतवाल ने बहुत डाट–फटकार बतलाई, मगर ब्राह्मण टस से मस नही हुआ उसने बयान नही दिया। कोतवाल ने सोचा, ब्राह्मण बडे जिद्दी होते है। इससे जिद्द न करके महाराज के सामने पेश कर देना ही ठीक होगा। उसने ब्राह्मण के कथनानुसार राजा के सामने ही ब्राह्मण को पेश करने का निश्चय किया।

पहले जमाने मे आजकल की तरह मुकदमे की तारीखो पर तारीखे नही पडती थी। मामला मौखिक सुनकर चटपट फैसला दे दिया जाता था। आजकल का न्याय बडा महगा और विचित्र है। उस समय का न्याय सस्ता और सीधा था।

दूसरे दिन राजा भोज अपनी राजसभा मे आये। सिहासन पर आसीन हुए। क्रम से सब अपराधी उनके सामने पेश किए गए। सयोगवश उस दिन पहला नम्बर उस ब्राह्मण का ही था। राजा भोज ने ब्राह्मण के विषय मे पूछा–यह कोन हे ? इसने क्या अपराध किया है ? सरकारी आदमी ने कहा–यह ब्राह्मण हे। इसने अपनी स्त्री को इतनी निर्दयता से पीटा हे कि उसके सिर से खून आ गया। अगर स्त्री को दरबार मे पेश किया जाता तो न जाने क्या–क्या कहती। परन्तु स्त्री को दरबार मे लाने की आज्ञा नही हे।

इसलिए उसे पेश नही किया गया। वह कहती थी—यह ब्राह्मण कुछ लाकर तो देता नही हे और खाने को मागता हे। खाना न मिलने पर इसने स्त्री को वुरी तरह पीटा है।

राजा—ब्राह्मण ! क्या ठीक है।

ब्राह्मण—महाराज ! ओर सब वात ठीक है, एक बात गलत है। यह मुझे ब्राह्मण वता रहे है। पर मै ब्राह्मण नही, चाण्डाल हू।

कोतवाल—हुजूर ! यह आपके सामने ही झूठ बोलता है। यह ब्राह्मण हे ओर अपने आपको चाण्डाल प्रकट करता हे।

ब्राह्मण—महाराज ! यह लोग ऊपर की बाते देखकर मुझे ब्राह्मण कहते ह। भीतर की वात का इन्हे पता नही। मे असली भीतरी वात कर रहा हूँ।

सत्य नास्ति तपो नास्ति नास्तीन्द्रियविनिग्रह ।
सर्वभूतदया नास्ति एतच्चाण्डाल—लक्षणम् ।।
सत्य ब्रह्म तपो ब्रह्मा ब्रह्मइन्द्रियनिग्रह ।
सर्वभूतदया ब्रह्म ह्येतद् ब्राह्मणलक्षणम् ।।

महाराज ! सत्य का अभाव, तप का अभाव इन्द्रियनिग्रह का अभाव और भूतदया का अभाव, चाण्डाल का लक्षण हे। जिसमे सत्य हो तप हो, इन्द्रियनिग्रह हो प्राणियो की दया हो वह ब्राह्मण कहलाता हे।

जो ब्राह्मण होगा वह आपके सामने अभियुक्त बनकर नही आयेगा। मुझ मे चाण्डाल के लक्षण मोजूद हे अतएव मैंने अपने आपको चाण्डाल प्रगट किया है।

मित्रो ! आप दूसरो पर ही यह लक्षण घटाने का प्रयत्न मत करो। शास्त्र मे श्रावक को भी ब्राह्मण कहा है। आप श्रावक होने का दावा करते हे तो यह लक्षण अपने ही ऊपर घटाने का प्रयत्न करना।

ब्राह्मण ने कहा—जिसमे ब्राह्मण के ये लक्षण मोजूद हे वह ऊपर से चाण्डाल होने पर भी वास्तव मे ब्राह्मण है। जिसमे चाण्डाल के ये लक्षण पाये जाते हे वह ऊपर से ब्राह्मण होने पर भी भीतर से चाण्डाल ही है।

ब्राह्मण पढा–लिखा था। उसने राजा से कहा– राजन् ! मेरी बात सुन लीजिए और फिर जिसका अपराध हो उसे दण्ड दीजिए।'

राजा–हा, सुनाओ, क्या कहना चाहते हो !

ब्राह्मण–

अम्बा तुष्यति न मया न तया, साऽपि नाम्बया न मया ।
अहमपि न तया न तया वद राजन् ! कस्य दोषोऽयम् ।।

महाराज ! आप निर्णय कीजिए कि वास्तव मे अपराध किसका है ? और जिसका अपराध सिद्ध हो, उसे दण्ड दीजिए । हम घर मे तीन प्राणी है– मै, मेरी माता और मेरी पत्नी। पुत्र कैसा भी हो, मगर माता का धर्म उससे पेम करना और उसकी रक्षा करना है। कहावत है–"पूत कपूत हो जाता है, मगर माता कुमाता नही होती।" मगर मेरी माता मेरी रक्षा तो दूर रही, मीठे शब्द भी नही बोलती। कभी मुझे बेटा कहकर सम्बोधन भी नही करती, वरन् स्नेह के बदले गालिया देती है। किसी –किसी घर मे मा–बेटे मे स्नेह नही होता, तो सास–बहू मे ही प्रेम होता है, मगर मेरे घर मे यह भी नही है। मा मेरी पत्नी को गालिया तो देती है, पर कभी मधुर वचन नही कहती। यह सुनकर आप सोचेगे कि यह माता का अपराध है मगर बात यही खत्म नही होती। अनेक स्त्रिया ऐसी होती है कि सास की जली–कटी बाते सह लेती हे–शान्ति के साथ सुन लेती है लेकिन मेरी स्त्री माता की आधी बात भी नही सुन सकती। यह एक के बदले चार सुनाती है। अपनी बातो से उसे शान्त तो करती नही उल्टे जला देती है। कई जगह सास–वहू मे प्रेम नही होता। मगर पति–पत्नी मे प्रेम होता है। लेकिन मेरे घर पर यह भी नही है। मुझमे और मेरी पत्नी मे कितना प्रेम है, यह बात तो इसी मामले से जानी जा सकती है। अनेक माताए कैकेयी के समान होती है, मगर उनके पुत्र रामचन्द्र सरीखे होते हे। मगर मे ऐसा अभागा हूँ कि अपनी माता को जननी तक नही कहता। सदा अवज्ञा ही करता रहता हू। अपशब्दो की कभी–कभी बौछार कर देता हू। राजन आप ही निर्णय कीजिए यह सब किसका अपराध है ? जिसका अपराध हो उसे दण्ड दीजिए।

राजा भोज बडा ही बुद्धिमान था। उसने कहा– मै सब समझ गया। ओर राजा ने भण्डारी को आज्ञा दी– 'इस ब्राह्मण को एक हजार मुहरे दे दो। राजा की आज्ञा सुनकर भण्डारी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सोचने लगा–क्या बात हुई ? ब्राह्मण ने अपराध किया हे–अपनी स्त्री का खून बहाया हे ओर महाराज उसे यह इनाम दे रहे है। अपराध की सजा एक हजार मुहर इनाम !

भण्डारी की मुखमुद्रा पर विस्मय का जो भाव उदित हुआ उसे पहचान कर राजा ने कहा—तुम्हे क्या शका हे ? क्यो आश्चर्य हो रहा हे ? स्पष्ट कहो न !

भण्डारी बोला—स्त्री को पीटने के बदले इस ब्राह्मण को एक हजार मुहर मिलने की बात नगर मे फेल जाएगी तो बेचारी स्त्रियो पर घोर सकट आ पडेगा ओर राज्य का खजाना खाली होने का अवसर उपस्थित हो जायेगा। सभी लोग अपनी—अपनी स्त्री को पीट कर इनाम लेने के लिए आ खडे होगे।

राजा ने कहा—भण्डारी, बात तुम्हारी समझ मे नही आई। जो आदमी खाता—पीता सुखी हे, वह अपनी स्त्री को मारेगा तो उसे दण्ड देने मे जरा भी रियायत नही की जायेगी, चाहे वह मेरा पुत्र ही क्यो न हो ! ऐसे अत्याचारी का पक्ष मे कदापि नही लूगा। मै स्त्री को मारने के बदले इसे मुहर नही दिला रहा हूँ किन्तु इसे दूसरा दु ख है। उस दु ख को दूर करने के लिए ही मुहर दिलाता हूँ। दण्ड ओर कानून अन्याय और अत्याचार रोकने के लिए हे वढाने के लिए नही। अगर इस ब्राह्मण को कैद कर लिया जाये तो इसकी इज्जत जायेगी यह निर्लज्ज वन जायेगा ओर अपराध का जो मूल कारण हे वह दूर नही होगा। अभी मा बेटा ओर स्त्री लडते—झगडते भी एक साथ रहते ह इसे कारागार मे डाल देने से सव तितर—बितर हो जाएगे। अभी तक किसी ने किसी को त्यागा नही हे मगर केद की हालत मे एक दूसरे को छोडकर भाग जायेगे। इसके अतिरिक्त इसे सजा देने का अर्थ इसकी वृद्धा माता ओर गरीव पत्नी को सजा देना होगा। ऐसा करने से अनेक प्रकार की वुराइया फल जायगी।

भण्डारी ! तुम इस ब्राह्मण की वुद्धि पर विचार करो। इसने कही वयान नही दिया आर यहा आया ह। यह जानता था कि कानून क शब्दो को ही सभी कुछ समझ कर उन्ही से चिपटे रहने वाले लोग मेरा दु ख नही मिटा सकते। फिर उनके सामने दु खडा रोकर क्या अपनी इज्जत गवाऊ? असल मे इसके अपराध का कारण दरिद्रता है। मैने मुहर देकर उस दरिद्रता को

नही मिलती और दूषित शिक्षापद्धति के कारण वे मेहनत–मजदूरी करना मरने से भी अधिक कष्टकर समझते है। भारत का राज्य अग्रेजो के अधीन था। वह सात समन्दर पार बैठकर शासन करते थे। पजा के प्रति उन्हे अनुराग नही, आत्मीयता नही, सहानुभूति नही। पजा को कगाल बनाने वाली नयी–नयी योजनाये और कानून गढे जाते थे और बुरी तरह देश को चूसा जा रहा था किसी समय जो देश सब भाति से समृद्ध था, धन–धान्य से परिपूर्ण था, उसकी इतनी गयी–गुजरी हालत हो गई कि थोडे से पैसो के लिए माता अपने पुत्र को बेच देने के लिए उद्यत है। दरिद्रता के इस घोर अभिशाप ने भारतवासियो का जीवन कितना हीन दीन, जघन्य और कलुषित बना दिया है । यह देखकर किसे मनस्ताप न होगा । कहा है आज राजा भोज सरीखे प्रजा–वत्सल नृपति, जिन्हे प्रजा के कष्टो का सदा ध्यान रहता था और जो प्रजा की भलाई मे ही अपने राज–पद की सार्थकता मानते थे । प्राचीन काल के भारतीय राजा प्रजा के सरक्षक थे। सम्पूर्ण राज्य एक बडा परिवार था और राजा उसका मुखिया था। इसी कारण भारतीय प्रजा राजा को अपने पिता के तुल्य मानती थी। राजा और प्रजा मे कितना मधुर सम्बन्ध था उस समय। आज यह भूतकाल का सपना बन गया है। प्रथम तो आजकल ससार से राजतत्र ही उठता जा रहा है और प्रजा अपने हाथो मे शासनसूत्र ग्रहण करती जा रही है, जहा कही राजतन्त्र शेष है, वहा राजा और प्रजा मे भयकर सघर्ष ही दिखाई देता है। इसका प्रधान कारण यही है कि राजा अपने उत्तरदायित्व से गिर गये। उन्होने अपने को प्रजा का सेवक न समझकर ईश्वर द्वारा नियुक्त स्वच्छन्द भोग का पुतला समझा। प्रजा को चूसना और विलास करना ही अपना ध्येय बना लिया। फल यह हुआ कि राजा और प्रजा विरोधी बन गये। जहा स्वार्थ–साधन करने की प्रवृत्ति होती है वहा सघर्ष अवश्म्भावी है। यही राजा–प्रजा के सघर्ष का कारण है। अर्वाचीन इतिहास स्पष्ट बतलाता है कि विजय प्रजा–पक्ष के भाग्य मे है। आखिर प्रजा की ही विजय होगी। इस सत्य को समझ कर राजा लोग समय रहते सावचेत हो जाए तो उसमे उन्ही की भलाई हे।

राजा भोज प्रजारजन करने के कारण सच्चा राजा था। प्रजा के दु ख–दर्द को समझना और उसे दूर करना ही उसका मुख्य कर्त्तव्य था। यही उसका राजधर्म था। प्रजा उसे पुत्र के समान प्रिय थी इसलिए वह पिता के समान प्रजा का आदरणीय था। उसने ब्राह्मण के कष्टो पर सहृदयता से विचार किया ओर उन्हे मिटा दिया।

भण्डारी का भ्रम भग हो गया। वह मन ही मन भोज की प्रशसा करने लगा। उसने एक हजार मुहरे लाकर ब्राह्मण के सामने रख दी।

राजा ने ब्राह्मण से कहा–जिसका अपराध था, उसे दण्ड दिया गया है। लेकिन इस काड की पुनरावृत्ति हुई तो भारी दण्ड दिया जायेगा।

ब्राह्मण ने कहा–महाराज ! आपके उचित निर्णय की प्रशसा करने के लिए मेरे पास शब्द नही हैं। अब अपराध हो तो मेरे तन के टुकडे–टुकडे करवा दीजिएगा।

मुहरो की थैली लेकर ब्राह्मण अपने घर चला गया। घर मे सास–बहू के बीच कलह मचा हुआ था। सास कहती थी–"तूने उससे ऐसा क्यो कहा? उसकी बात सुन क्यो नही ली?" बहू कहती थी–"उन्होने मुझसे ऐसा कहा क्यो ? बस, इन्ही मूल सूत्रो पर भाष्य और टीकाये रची जा रही थी।

उसी समय थैली लिए ब्राह्मण आता दिखाई दिया। उसे देख दोनो शात हो गई। थैली देखकर उन्हे कुछ तसल्ली हुई। आज तक इतना अनाज भी कभी घर मे नही आया था। अतएव भीतर की मुहरे न दिखाई देने पर भी उनकी प्रसन्नता का पार नही था। ब्राह्मण निकट आ गया और थैली मे गोल–गोल चीजे मालूम हुई तो कहना ही क्या था! उन्होने सोचा–अगर इतने पैसे हो तब भी बहुत है।

दोनो की लडाई बन्द हो गई। उनकी विचारधारा बदल गई। सास बोली– बेटे को वजन लग रहा होगा मैं थैली ले लू। बहू ने कहा–"तुम बूढी हो तुमसे क्या बनेगा! लाओ मै ही लिये लेती हूँ। 'सास ने उत्तर दिया– 'तुझे चोट लगी है न ! तुझसे कैसे बनेगा? वह मुस्कुरा कर बोली– 'इस मार मे क्या रखा है ! पति की मार और घी की नाल बराबर होती है।

आखिर दोनो थैली लेने दौडी। सास कहती थी–बहू को चोट लगी है इसे बोझ मत देना। बहू कहती थी–सास बूढी है इन्हे तकलीफ मत देना। ब्राह्मण ने कहा–तुम दोनो ही कष्ट मत करो। यह बोझ मेरे ही सिर रहने दो। अपने अपराध का भार मुझे ही उठाने दो।

थैली लिए ब्राह्मण घर पहुचा। थैली खाली तो उसमे पीली–पीली मुहरे देखकर सास–बहू दोनो चकित रह गई। प्रसन्नता का पारावार न रहा। [illegible] घर मे अनाज के इतने दाने भी आते तो क्या कम थे। फिर यह तो मुहरे [illegible]।

भी न की। तू धन्य है बेटा, जो मुझे छोडकर कही चला न गया, नही तो ऐसी कर्कशा माता का पालन करने के लिए कौन रहता है। अब तू मुझे क्षमा कर देना।

बहू ने कहा– यह सब मेरा ही कसूर था। मै घर आई तभी से सबको कष्ट मे पडना पडा। मैने पति और सास की सदैव अवज्ञा ही की थी। मेरी जैसी स्त्री जिस घर मे हो वहा पाप न बढे तो क्या हो। सीता इतने–इतने कष्ट सहन करके भी पति के साथ रही परन्तु मुझ दुष्टा ने आप दोनो को कभी प्रिय वचन भी न कहा। इतने पर भी आप दोनो ने मुझे त्यागा नही, यह बडी कृपा की। अब आप मेरे सब अपराध भूल जावे।

ब्राह्मण बोला–मा और पिये। तुम दोनो मुझे क्षमा करो। मेरा कर्त्तव्य तुम्हारा पालन करना था। सपूत बेटा माता की वृद्धावस्था मे सेवा करता है और सच्चा पति अपनी पत्नी की सदैव रक्षा करता है। मैने दोनो मे से एक भी कर्त्तव्य नही पाला। मै तुम्हे भरपेट भोजन भी तो न दे सका। जो पुरुष अपनी जननी और पत्नी का पेट भी नही भर सकता, वह धिक्कार का पात्र है। मैने भोजन नही दिया, इतना ही नही वरन् भोजन मागा और उसके लिए झगडा भी किया। माता की सेवा करना दरकिनार, उससे कभी मीठे शब्द न कहे। मेरे इस व्यवहार के लिए तुम दोनो मुझे क्षमा करना।

इस प्रकार तीनो ने अपनी–अपनी आलोचना की। ब्राह्मण ने कहा–अब भूतकाल की बात भूल जाओ। हम लोग दरिद्रता से पीडित थे, इसलिए घडी भर पहले क्या थे और अब दरिद्रता दूर होते ही क्या हो गये। गुण गाओ राजा भोज का जिसने अपना यह दु ख जान लिया और मिटा दिया।

इस प्रकार ब्राह्मण का यह छोटा सा कुटुम्ब शीघ्र ही सुधर गया। तीनो बडे प्रेम से रहने लगे। दरिद्रता के साथ ही साथ कलह भी दूर हो गया।

ब्राह्मण अपना दु ख राजा के पास ले गया था। इसी प्रकार परमेश्वर के दरबार मे हम भी यह फरियाद लेकर उपस्थित होते है। लेकिन जिस प्रकार ब्राह्मण ने निखालिस हृदय से अपना अपराध स्वीकार किया था, उसी प्रकार हम लोगो को भी अपना अपराध स्वीकार करना चाहिए। अपने अपराध को दबाने की चेष्टा करने से ईश्वर भी कुछ नही कर सकेगा। अतएव कृत पापो के लिए पश्चात्ताप करो। परमात्मा के प्रति विनम्र भाव से क्षमाप्रार्थी बनो। आगे अपराध न करने का दृढ सकल्प करो। ऐसा करने से कल्याण होगा।

33 : पोथी का बैंगन

लोग धर्म–धर्म चिल्लाते हे, मगर धर्म के लिए मर्म का अनुभव नही करते। पण्डित कहलाने वाले और अपने को ज्ञानी प्रसिद्ध करने वाले तथा श्रोताओ को आकृष्ट करने वाले शब्दो मे कथा बाचने वाले लोग भी उस कथा को–उसके आशयभूत धर्म को, अपने सुख के साथ नही जोडते हैं।

एक कथावाचक भट्टजी कथा बाचते थे। एक दिन उनकी लडकी भी कथा सुनने चली गई। उस दिन कथा मे बैगन का प्रसग चल पडा। कथावाचक ने कहा–बैगन खाना बुरा है। उसमे बीज बहुत होते है और वह वायु करता हे। कथावाचक ने बहुत विस्तार से यह बात कही। लडकी बेठी हुई यह सब सुन रही थी। उसने सोचा– पिताजी को यह बात शायद मालूम नही हुई हे। अब तक तो उनका यह हाल रहा कि बैगन के शाक के बिना रोटी नही खाया करते थे।

नीली टोपी श्याम घटा, सब शाको मे शाक भटा।

मगर आज उसकी इतनी निन्दा कर रहे हैं। इससे जानती हूँ कि आज ही इन्हे बगन की बुराई मालूम हुई हे। कही ऐसा न हो कि आज घर पर बैंगन का ही शाक बन जाये ओर पिताजी भरपेट भोजन भी न कर पाए।

यह सोचकर लडकी कथा सुनना छोडकर घर आई ओर माता से बोली– मा आज काहे का शाक बनाया हे? मा ने कहा– बिटिया बेगन तो हे ही। साथ मे एक ओर बना लूगी। माता की बात से लडकी को कुछ तसल्ली हुई। उसने पूछा– अभी बेगन बनाये तो नही हे? माता ने नही

लडकी की बात सुनकर मा ने बैगन का शाक नही बनाया। कथा-भट्ट कथा समाप्त कर घर आये। भोजन करने बैठे। थाली मे और तरकारिया परोसी गई, मगर बैगन नजर नही आये। बैगन न देखकर भट्टजी ने पूछा-' क्यो ! आज बैगन की तरकारी नही बनी ?

ब्राह्मणी ने कहा-घर पर बैगन तो थे मगर जान-बूझकर नही बनाये है।

भट्ट-ऐसा क्यो ?

ब्राह्मणी ने लडकी को बुलाकर कहा- अब इन्हे बता तूने बैगन का शाक क्यो नही बनाने दिया ?

लडकी बोली-पिताजी आज आपने कथा मे बैगन की बहुत निदा की थी। आपने कहा था कि बैगन शारीरिक दृष्टि से हानिकारक है, आध्यात्मिक दृष्टि से भी बुरा है और ठाकुरजी को बैगन का भोग भी नही चढता। इसी से मैने सोचा कि आप इतनी निदा कर रहे है तो आप स्वय कैसे खायेगे ?

भट्ट-मूर्ख लडकी, तुझे इतना ज्ञान कहा कि कथा-बैगन अलग होते है और रसोई-घर के अलग होते है। कथा मे जो बात आई थी, सो कहनी पडी। ऐसा न कहे तो आजीविका कैसे चले ? अगर कथा के अनुसार ही चलने लगे तो जीना कठिन हो जायेगा।

बाप की बात सुनकर लडकी के दिल को ठीक तरह समाधान तो नही हुआ मगर वह कुछ बोल भी न सकी। उसने मन ही मन सोचा-इससे तो हम जैसी मूर्खा ही भली कि आजीविका के लिए ढोग तो नही करती। हाथी के दात दिखाने के अलग और खाने के लिए अलग होते है।

इस प्रकार कथा मे भट्टजी पण्डित रहे और अर्थ मे वह लडकी पण्डित रही। जो केवल कथा मे ही पण्डित है-अर्थ मे पण्डित नही है वे क्या तो अपना कल्याण करेगे और क्या दूसरो की भलाई करेगे ! स्वय आचरण करने वाला ही अपने वचनो की छाप दूसरो पर डाल सकता है। जो खुद आचरण नही करता उसका दूसरे पर कोई विशेष प्रभाव नही पड सकता।

भक्त कहते है-इस प्रकार की कथा बाचने वाले मानो रिश्वत लेकर गवाही देने वाले है। वे चाहे मान-प्रतिष्ठा के लोभ से या आजीविका के लोभ से गवाही दे पर है वह रिश्वत लेकर गवाही देने वालो के समान ही। ऐसे लोग सत्य-अर्थ को परमार्थ को नही जानते।

34 : झूठी साक्षी

दो मित्र व्यापार के निमित्त विदेश गये। दोनो ने धनोपार्जन के लिए यथाशक्य उद्योग किया। पर उनमे से एक को अच्छा लाभ हुआ ओर दूसरे को लाभ नहीं हुआ। जिसे लाभ नहीं हुआ था, उसने सोचा–उद्योग करते–करते थक गया, फिर भी कुछ लाभ नही हुआ। अव देश को लोट जाना ही श्रेयस्कर है। उसने अपना यह विचार अपने मित्र के सामने प्रकट किया। मित्र ने सोचा–मुझे यहा काफी आमद हुई हे ओर व्यापार मे इतना उलझा हूँ कि देश नही जा सकता। लेकिन कुछ रकम अपने मित्र के साथ क्यो न भेज दू, जिससे स्त्री को सन्तोष हो जाये। लेकिन यह रुपया कहा वाधे फिरेगा ? यह सोचकर उसने एक लाल' खरीदा ओर अपने मित्र को देकर कहा–भाई जाते हो तो जाओ ओर यह लाल अपनी भाभी को दे देना कह देना कि यह लाल कीमती हे। इसे सम्भाल कर रखे। कुछ दिनो वाद व्यापार समेट कर मे भी आ जाऊगा। लाल पहुचने से तुम्हारी भाभी को सन्तोष होगा।

मित्र का दिया लाल लेकर दूसरा मित्र स्वदेश की ओर रवाना हुआ। रास्ते मे उसके मन मे वेईमानी आ गई। मनुष्य दुर्वलताओ का पुतला हे। कव कोन–सी दुर्वलता उसे विवश कर देती है कहा नही जा सकता। उसे विचार आया–लाल कीमती हे ओर मित्र ने अकेले मे ही मुझे यह दिया हे। देते–लेते किसी ने देखा नही हे कोई गवाह–साख नही है। धन वेईमानी किये विना आता नही यह मेने प्रयत्न करके देख लिया है। ईमानदारी स्वय इतनी वेईमान हे कि ईमानदार को भूखो मरना पडता हे। ऐसी मुहजली ईमानदारी को लेकर क्या चाटू ? वेहतर यही हे कि हाथ मे आये इस लाल को हजम कर लिया जाये। थोडा–सा झूठ वोलना पडेगा। कह दूगा–मॅने लाल दे दिया ह।

लोग साचते हॅ–पाप केवल जीव–हिसा करन मे ही है। झूठ–कपट म कान–सा महा–आरम्भ–समारम्भ करना पडता ह ? लाल के लिए ललचान

34 : झूठी साक्षी

दो मित्र व्यापार के निमित्त विदेश गये। दोनो ने धनोपार्जन के लिए यथाशक्य उद्योग किया। पर उनमे से एक को अच्छा लाभ हुआ ओर दूसरे को लाभ नही हुआ। जिसे लाभ नही हुआ था उसने सोचा–उद्योग करते–करते थक गया, फिर भी कुछ लाभ नही हुआ। अव देश को लौट जाना ही श्रेयस्कर है। उसने अपना यह विचार अपने मित्र के सामने प्रकट किया। मित्र ने सोचा–मुझे यहा काफी आमद हुई है और व्यापार मे इतना उलझा हूँ कि देश नही जा सकता। लेकिन कुछ रकम अपने मित्र के साथ क्यो न भेज दू, जिससे स्त्री को सन्तोष हो जाये। लेकिन यह रुपया कहा वाधे फिरेगा ? यह सोचकर उसने एक लाल' खरीदा और अपने मित्र को देकर कहा–भाई जाते हो तो जाओ और यह लाल अपनी भाभी को दे देना कह देना, कि यह लाल कीमती है। इसे सम्भाल कर रखे। कुछ दिनो वाद व्यापार समेट कर मे भी आ जाऊगा। लाल पहुचने से तुम्हारी भाभी को सन्तोष होगा।

मित्र का दिया लाल लेकर दूसरा मित्र स्वदेश की ओर रवाना हुआ। रास्ते मे उसके मन मे बेईमानी आ गई। मनुष्य दुर्बलताओ का पुतला हे। कव कोन–सी दुर्बलता उसे विवश कर देती है, कहा नही जा सकता। उसे विचार आया–लाल कीमती है और मित्र ने अकेले मे ही मुझे यह दिया हे। देते–लेते किसी ने देखा नही हे कोई गवाह–साख नही है। धन वेईमानी किये विना आता नही यह मेने प्रयत्न करके देख लिया हे। ईमानदारी स्वय इतनी वेईमान हे कि ईमानदार को भूखो मरना पडता हे। ऐसी मुहजली ईमानदारी को लेकर क्या चाटू ? बेहतर यही हे कि हाथ मे आये इस लाल को हजम कर लिया जाये। थोडा–सा झूठ वोलना पडेगा। कह दूगा–मेंने लाल दे दिया हे।

लोग सोचते हे–पाप केवल जीव–हिसा करने मे टी हे। झूठ–कपट म कोन–सा महा–आरम्भ–समारम्भ करना पडता हे ? लाल के लिए ललचाने

वाले उस व्यक्ति ने भी यही सोचा होगा। धनोपार्जन करने मे अधिक आरम्भ–समारम्भ करना पडेगा ओर थोडी–सी जीभ हिलाने मे आरम्भ–समारम्भ के बिना ही धन मिल रहा है। फिर ऐसे सस्ते धर्म का पालन क्यो न किया जाये ? कौन पाप मे पड कर आरम्भ करके धन कमाने का झझट करे ?

ऐसा ही कुछ सोचकर वह अपने घर पहुचा। उसने लाल अपने ही पास रख लिया मित्र की स्त्री को नही दिया।

मित्र की पत्नी को उसके लौट आने का समाचार मिला। उसने सोचा–वह तो अपने मित्र का कुशल–समाचार कहने आये नही, मगर मुझे जाकर पूछ आने मे क्या हानि है ? वह पति के मित्र के घर पहुची। पूछा–आप अकेले ही क्यो आ गये ? अपने मित्र को साथ नही लाए?

उसने कहा–वह बडा लोभी है। उससे कमाई का लोभ छूटता ही नही है। खूब धन कमाया है फिर भी नही आया।

स्त्री ने पूछा–खूब कमाया जो भेजा नही ?

वह–अजी, वह लोभी क्या भेजेगा ? कुछ भी नही भेजा उसने।

मनुष्य जब पाप करता है तो उसे छिपाने के लिए कई पाप करने पडते है। कहावत है– जिसका पैर खिसक जाता है वह लुढकता ही जाता है।'

स्त्री सन्तोष करके बैठ गई। उसने सोचा–कुछ नही दिया तो न सही कुशल–पूर्वक तो हैं और कमाई कर रहे है तो आखिर ले कहा जायेगे ? अन्त मे तो घर ही है।

कुछ समय व्यतीत होने पर वह भी अपना धन्धा समेट घर लौटा। स्त्री ने कहा–सकुशल तो रहे ? आप मुझे एकदम ही भूल गये। अपने मित्र के साथ कुछ भी न भेजा ?

पति ने कहा–भूल कैसे गया ? भूल जाता तो तुम्हारे लिए लाल क्यो भेजता ?

पत्नी–कौन–सा लाल ?

पति–क्यो मित्र के साथ भेजा था न ? तुम्हे मिला नही वह ?

पत्नी–नही लाल तो मुझे नही दिया। वह तो आपके समाचार कहने के लिये भी नही आये। में खुद उनके घर गई। कुशल–समाचार पूछे। उन्होने यही कहा कि आपने उनके साथ कुछ नही भेजा।

पत्नी की बात सुनकर वह समझ गया कि मित्र के मन मे बेईमानी आ गई। लाल उसी ने हजम कर लिया हे। प्रात काल होते ही उसके घर गया। उसे आया देख पहले मित्र के चेहरे का रग उड गया लेकिन अपने को सम्भाल कर उसने पूछा–अच्छा आप आ गये ?

जी हां' कहकर वह वेठ गया। कुशल-वृत्तान्त के पश्चात उसने पूछा-मेने तुम्हे जो लाल दिया था वह कहा हे ?

उसने कहा-वह तो आते ही मेने तुम्हारी पत्नी को दे दिया।

दूसरे ने कहा-वह तो कहती हे मुझे दिया ही नहीं।

प्रथम मित्र-झूठी हे। स्त्रियो का क्या भरोसा ! न जाने किसी को दे दिया होगा ओर मुझे चोर वनाती हे !

इस प्रकार कहकर वह गरजने लगा-अपनी स्त्री को तो देखते ही नही ओर मुझे चोर, वेईमान वनाते हो ! ऐसा जानता तो मैं लाता ही क्यो ? खबरदार, जो मुझसे अव लाल के विषय मे कभी कुछ पूछा।

झूठा आदमी चिल्लाता वहुत हे। अत उसका रग-ढग देखकर लाल वाले मित्र ने सोचा-यह लाल भी हजम कर गया ओर ऊपर से मेरी पत्नी को दुराचारिणी प्रकट करना चाहता हे ओर मुझे धमकी दे रहा हे।

आखिर वह हाकिम के पास गया ओर सारा किस्सा सुनाया। हाकिम ने पूछा तुमने किसके सामने लाल दिया था ? उसने कहा मैंने केवल विश्वास पर ही दिया था। किसी को गवाह नही बनाया। उसकी इस स्पष्टोक्ति से हाकिम को उसके कथन पर विश्वास हो गया। हाकिम ने सान्त्वना देते हुए कहा-मै समझ गया हू । तुम सच्चे हो। मे तुम्हारा लाल दिलाने का प्रयत्न करूगा। कदाचित् लाल न मिला तो तुम्हारी इज्जत वापिस आएगी। तुम अपने घर जाओ।

हाकिम ने उस लाल रखने वाले को बुलाकर कहा-तुम्हारे विषय मे अमुक व्यक्ति ने इस प्रकार की फरियाद की हे। अपना भला चाहो तो लाल दे दो।

उसने उत्तर दिया-आप मुझे व्यर्थ ही धमका रहे हे। मेने आते ही उसकी स्त्री को लाल सोप दिया था। लाल दे देने के गवाह भी मेरे पास मोजूद हे।

हाकिम ने उसके गवाह वुलवाये। चार बनावटी गवाह थे। वे थोडे से पेसो के लालच मे आकर झूठी साक्षी देने को तेयार हो गये थे। हाकिम के पूछने पर चारो ने गवाही दी कि हमारे सामने लाल दिया गया हे। हम ईमान-धर्म ओर परमेश्वर की कसम खाकर कहते हे कि इसने हमारे सामने लाल दिया हे। हाकिम ने चारो गवाहो को अलग-अलग करके कहा-लाल कितना

बडा था उसके आकार का एक पत्थर उठा लाओ। अब झूठे गवाह चक्कर मे पडे। उन्होने कभी लाल देखा नही था। उसकी बराबरी का पत्थर लाए तो कैसे ? फिर सोचा लाल कीमती चीज है तो कुछ तो बडा होगा ही। चारो यही सोचकर अलग-अलग आकार के बडे-बडे पत्थर उठा लाए, जो एक दूसरे से से काफी बडे-छोटे थे। हाकिम ने चारो पत्थर अपने पास रख लिए। फिर पूछा- इन चारो मे से लाल किस पत्थर के बराबर था? यह प्रश्न सुनकर उनकी अकल गुम होने लगी। चारो बुरी तरह चकराये।

आखिरकार हाकिम ने चारो गवाहो को कोडे लगाने की आज्ञा दी। थोडे से पैसो के लिए झूठ बोलना आसान था मगर कोडे खाना मुश्किल हो गया। चारो ने गिडगिडा कर कहा-हुजूर, कोडे क्यो लगवाते है ? हम लोगो ने तो क्या हमारे बाप ने भी कभी लाल नही देखा। हम तो इसके मुलाहिजे और कुछ लोभ-लालच मे फसकर गवाही देने आये है।

असत्य कितना बलहीन होता है ! सत्य के सामने असत्य के पैर उखडते देर नही लगती। असत्य मे धैर्य नही, साहस नही शक्ति नही।

झूठे गवाहो की कलई खुल गई। हाकिम ने पूछा-कहो सेठ, इतना बडा लाल तुमने उसकी स्त्री को दिया था ? सेठ लज्जित था। लोकनिन्दा और राजदण्ड के भय से तथा शर्म से वह धरती मे गडा जा रहा था। वह बोलता क्या ? उसके मुख से एक भी शब्द न निकला। हाकिम ने कहा-तुमने लाल भी चुराया और झूठे गवाह भी तैयार किये। तुम्हारे ऊपर दुहरे अपराध है। अब सच बताओ, लाल कहा है? नही तो गवाहो के बदले कोडो से तुम्हारी पूजा की जायेगी।

मार के आगे भूत भागता है यह लोकोक्ति हे। सेठ ने फौरन लाल दे दिया।

लाल के गवाह झूठे थे ओर वे प्रकट हो गये। मगर धर्म के विषय मे झूठी गवाही देने वालो पर कौन प्रतिबन्ध लगाए?

जेसे लाल का आकार भिन्न-भिन्न बताया गया था, उसी प्रकार ईश्वर की शवल भी भिन्न-भिन्न प्रकार की बतलाई जाती है। एक कहता है-ईश्वर ऐसा हे तो दूसरा कहता हे ऐसा नही वेसा है। इस प्रकार कहने पालो से पूछो-तुम दोनो ईश्वर की जो दो शवले वतला रहे हो उनमे से ईश्वर वास्तव मे किस शवल का हे ? तो वे वया उत्तर देगे ? जेसे उन गवाहो ने लाल नही

देखा था, उसी प्रकार ईश्वर का स्वरूप वतलाने वालो ने ईश्वर का अनुभव नही किया है। झूठे गवाहो ने जो वात विना समझे–वूझे सीख ली थी ओर सीखी बात तोते की तरह कह दी थी, इसी प्रकार ये लोग भी विना अनुभव किये ही सीखी–सिखाई वाते तोते की तरह उच्चारण कर देते है। उन्हे वास्तविक अनुभव नही हे।

प्रश्न होता हे–ऐसी अवस्था मे करना क्या चाहिए ? इसका उत्तर यह है कि घबराने की आवश्यकता नही। अन्त मे तो सत्य और शील विजयी होता है।

ईश्वर के विषय मे अगर सुदृढ विश्वास हो गया तो वह सभी जगह मिलेगा। विश्वास न हुआ तो कही न मिलेगा। ईश्वर के शरीर नही है उसका कोई वर्ण नही है, वह केवल उज्ज्वल हृदय से किये गये अनुभव से ही जाना जा सकता है।

35 : अक्षय तृष्णा

माया के पीछे भागने से तृष्णा कभी नही मिटती। इसके लिए एक उदाहरण लीजिए–

एक मनुष्य किसी सिद्ध महात्मा के पास पहुचा। महात्मा ने कहा–मनुष्य–शरीर सुलभ नही है। धर्म का आचरण न किया तो शरीर किस काम का ? आगत मनुष्य ने कहा–महाराज। घर मे तो बाल–बच्चे है, उनका पालन–पोषण करना पडता है। ससार की स्थिति विषम से विषमतर होती जा रही है। सारे दिन दौड–धूप करने के बाद भरपेट खाना मिल पाता है। कही कुछ आजीविका का प्रबन्ध हो जाये–घर का काम चलने लगे तो धर्मध्यान करू।

महात्मा ने पूछा– तुझे प्रतिदिन एक रुपया मिल जाये तब तो तू भगवान का भजन किया करेगा ?

आगत मनुष्य ने प्रसन्न होकर कहा– ऐसा हो जाये तो कहना ही क्या हे ? फिर तो मै ऐसा भजन करू कि ईश्वर और मै एकमेक हो जाऊ।'

महात्मा ने उसका हाथ ले एक का अक उस पर लिख दिया। उसे किसी भी प्रकार एक रुपया मिल जाता था। एक रुपया रोज मे वह खाता–पीता और अपनी सन्तान का पालन–पोषण करता। मगर उससे अब पहले जितना भी भजन नही होता था।

एक दिन वह फिर उन्ही महात्मा से मिला। महात्मा ने उससे कहा– आजकल तू क्या करता हे। अब भजन नही करता ?' वह बोला–हा महाराज अच्छी याद दिलाई आपने। आपने एक रुपया रोज का प्रबन्ध कर दिया हे मगर आप ही सोचकर देखे कि एक रुपया रोज मे खाने–पीने कपडे–लत्ते स्त्री के गहने आदि का खर्च किस प्रकार निभ सकता हे?

महात्मा ने पूछा– 'फिर चाहता क्या हे ?'

उसने कहा– 'महाराज ओर कुछ नही दस रुपया रोज मिल जाये तो खर्च बखूबी चल सकता हे।

महात्मा–"दस रुपया रोज मिलने पर तो भगवान का भजन किया करेगा ?" फिर गडबड तो नही करेगा ?

उसने उत्तर दिया– 'नही महाराज ! फिर काहे की गडबड ? इतने मे तो मजे से काम चल जायेगा।"

महात्मा ने उसके हाथ पर एक का जो अक बनाया था, उसके आगे एक शून्य और बढा दिया। अब उसे प्रतिदिन दस रुपये अर्थात् तीन सो रुपया मासिक मिलने लगे। उसने अपना काम खूब बढा लिया। कही कोई दुकान कही कोई कारखाना चलने लगा। नतीजा यह हुआ कि उसे तनिक भी फुर्सत न मिलती। स्त्री कहने लगी–घर मे अच्छे दिन आये है तो मेरी भी कुछ सुध लोगे या नही ? स्त्री के ऐसे आग्रह से उसके लिए भी आभूषण बनने लगे। उसके रहन–सहन का पैमाना(Standard) भी ऊचा हो गया। विवाह–सगाई भी ऊची हैसियत के अनुसार ही होने लगी।

कुछ दिनो के पश्चात् फिर उसे महात्मा मिले। बोले–आज कल तुझे दस रुपया रोज मिलते है, अब क्या करता हे ? अब भी तू भजन नही करता!

उसने उत्तर दिया–"दीनदयाल ! खूब स्मरण दिलाया। आपने मुझे दस रुपया रोज पाने की जो शक्ति दी हे मे उसका दुरुपयोग नही करता। आप हिसाव देख लीजिए, इतने से तो कुछ होता ही नही ! ससार मे बेठे हे। गृहस्थी का भार सिर पर हे। इज्जत के माफिक ही सब काम करने पडते हें।

महात्मा बोले–' मेने दस रुपये रोज प्रपच बढाने के लिए दिये थे या घटाने के लिए ?'

उसने कहा–' करुणानिधान ! गृहस्थी मे प्रपच के सिवाय ओर क्या चारा हे ? प्रपच न करे तो काम केसे चले ?"

महात्मा– फिर तू चाहता क्या हे ?

वह वोला– आपकी दया। आपकी दया हो जाये ओर कुछ आमदनी वढ जाये तो जीवन सफल हो।

महात्मा ने उसके हाथ पर एक बिन्दु ओर बढाकर सो रुपया रोज कर दिये। अव उसे प्रतिदिन सा महीने मे तीन हजार ओर वर्ष भर मे छत्तीस

हजार रुपये मिलने लगे। इतनी आमदनी होते ही उसका धन्धा और बढ गया। मोटर बग्घी और तागे दौडने लगे। पहले अवकाश मिलने की जो सम्भावना थी वह भी अब जाती रही। वह इतनी उलझनो मे फस गया कि उसे महात्मा को मुँह दिखलाना भी कठिन हो गया।

आज के श्रीमन्त भी आत्मकल्याण मे कितना समय व्यतीत करते है? वे समझते है मानो हमारी सृष्टि ही अलग है। गरीबो और अमीरो की दो भिन्न-भिन्न सृष्टिया है।

36 : माया

आत्मा मे ईश्वर का प्रकाश तो मोजूद हे, लेकिन थोडी भूल हो रही हे। भूल यही कि जिस ओर मुँह करना चाहिए, उस ओर मुँह न कर विपरीत दिशा मे कर रखा है।

सूर्य पूर्व दिशा मे उदित हुआ हे। एक व्यक्ति पश्चिम की ओर मुँह करके खडा हे। उसकी परछाई पश्चिम मे पड रही हे। अपनी परछाई देखकर वह व्यक्ति उसे पकडने दोडता हे। ज्यो–ज्यो वह आगे बढता हे, परछाई भी आगे वढती हे। वह खीझकर परछाई पकडने दौडता हे तो परछाई भी उससे तेजी के साथ आगे–आगे दोडती जाती हे। किसी तरह भी परछाई हाथ नही आती।

इस व्यक्ति की परेशानी किसी ज्ञानी ने देखी। उसने दयालुता से प्रेरित होकर कहा– 'भाई, तू करता क्या हे ? क्यो इस प्रकार भाग रहा हे ?'

भागने वाला बोला –' मे अपनी छाया पकडने के लिए दोड रहा हू, मगर वह हाथ नही आती। मे जितना दोडता हूँ, छाया उतनी ही दोड जाती हे।

ज्ञानी ने कहा– छाया को पकडने का उपाय यह नही हे। तू पूर्व की ओर मुँह करके आगे वढ। तेरी छाया भी तेरे पीछे–पीछे हो लेगी। तू अपना मुँह वदल लेगा तो तुझे छाया के पीछे भागने की आवश्यकता नही रहेगी वल्कि छाया तेरे पीछे भागेगी।

भागने वाले ने अपना मुह फेरा ओर पूर्व की ओर भागने लगा परछाई भी उसके पीछे–पीछे भागने लगी। इस प्रकार पहले वह छाया के पीछे

दाडकर परेशान हो रहा था फिर भी छाया हाथ नही आती थी अब छाया ही उसके पीछे दौडने लगी।

अगर तुम आत्मा ओर परमात्मा की ओर दृष्टि न लगाकर माया के पीछे दोडकर उसे पकडना चाहोगे तो माया तुम से दूर रहेगी। माया के दूर रहने का अर्थ यह है कि तृष्णा कभी नही मिटेगी। परन्तु आत्मा एव परमात्मा पर दृष्टि दोगे तो माया तुम्हारे पीछे उसी प्रकार दोडेगी जिस प्रकार सूर्य की ओर दोडने से परछाई पीछे-पीछे दौडती है।

37 : पुण्य का प्रताप

एक सेठ थे। गाडी, बाडी ओर लाडी (पत्नी) ही उन्हे प्यारी लगती थी। मतलब यह हे कि वह सासारिक कामो मे ही रचा–पचा रहता था। धर्म की ओर उसकी रुचि नही थी।

सेठ ने एक बछेरा पाला। बछेरा बहुत खूबसूरत ओर चपल था। सेठ उसे बहुत प्यार करता था। खूब खिलाने–पिलाने ओर सार सम्भाल करने के कारण वह अच्छा तगडा हो गया। धीरे–धीरे वह सवारी–योग्य हुआ।

एक दिन सेठ पहले–पहले सवारी करने के लिए उसे गाव से बाहर ले गया। सेठ उस पर सवार हुआ। सवार होते ही सेठ की आशा पर पानी फिर गया। सेठ उसे पूरब की ओर ले जाना चाहता तो वह पश्चिम की तरफ चलता। चलते–चलते अड भी जाता। उसने सेठ की इच्छा के अनुकूल काम नही किया बल्कि इच्छा के प्रतिकूल किया। सेठ ने उसे खूब पुचकारा, खूब थपथपाया–प्यार किया मगर उसने अपनी चाल नही छोडी।

दोपहर का समय हो गया। सेठ को भूख लग आई। वह थक गया ओर परेशान हो उठा। गहरी चिन्ता के साथ वह सोचने लगा– इसे मेंने अपने लडके के समान पाला ओर समय आने पर इसने धोखा दे दिया। इस पर सवारी करके नगर मे जाऊगा ओर कही अड जायेगा तो लोग खिल्ली उडाएगे। इस तरह सोचता–विचारता वह पास मे एक पेड की छाया मे विश्राम करने के लिए बेठ गया। पास मे बछेरा बाध दिया ओर मन ही मन हिसाब लगाने लगा कि अब तक इस पर इतना खर्च किया ओर वह सब वृथा हो गया।

सेठ इस प्रकार पछता ही रहा था कि उसी समय उधर से एक मुनि निकले। मुनि आहार–पानी लेकर जगल की ओर जा रहे थे। वे भी वृक्ष की छाया मे थोडी देर विश्राम लेने वही जा पहुचे।

मुनि ने सेठ को देखकर सोचा—यह किसी गहरी चिन्ता मे डूबा हे। पेड शीतल छाया देकर दूसरो का दु ख दूर करता हे तो मुझे भी इसकी चिन्ता दूर करने का उपाय करना चाहिए। इस तरह सोचकर मुनि ने सेठ से पूछा—"किस बात की चिन्ता मे पडे हो ?"

सेठ ने मुनि के इस प्रश्न पर ध्यान नही दिया। वह बोला नही ओर चिन्ता मे ही डूबा रहा।

मुनि ने अपना प्रश्न फिर दोहराया। तब उसने कहा—"आप पूछकर करेगे क्या ? आपके सामने अपना दु खडा रोने से लाभ क्या होगा ?'

मुनि— अगर मुझसे कहने से कुछ लाभ न होगा तो इस तरह चिन्ता करने से भी कुछ न होगा।'

मुनि के कहने का ढग कुछ ऐसा था कि सेठ उनकी ओर आकर्षित हुआ। उसने कहा— मेरी भूल हो गई। जानता हूँ, आप मे बडी करामात है। मे अपना दु ख आपसे नही कहूगा तो किससे कहूगा? महाराज ! यह जो घोडा वधा हे, इसने मेरा बहुत माल खाया हे। देखिए न, कितना तगडा हो रहा हे ! मगर यह इतना दुष्ट हे कि मेरी इच्छा के अनुसार नही चलता हे। मेरा अनुमान है कि वहुत सुन्दर ओर हृष्ट—पुष्ट होने के कारण इसे किसी की नजर लग गई हे या किसी ने जादू—टोना कर दिया हे। आप मुझ पर दया करे ओर झाडफूक दे तो वडा उपकार होगा।

सेठ की वात सुनकर मुनि स्वय सिर पर हाथ रखकर चिन्तित हुए। तब सेठ ने पूछा— मेरी बात सुनकर इतने उदास क्यो हो गये ?

मुनि— तू घोडे की चिन्ता कर रहा हे ओर मे तेरी चिन्ता कर रहा हू। जिस तरह घोडे ने तेरा खाकर नही वजाया उसी प्रकार तूने मेरा खाकर नही वजाया।'

सेठ—अनोखी बात हे ! मेरा ओर आपका क्या लेन—देन ? मेने आपसे कव क्या लिया हे जो नही वजाया।

मुनि—सुनो हिसाव वतलाता हू। पहले यह वताओ तुम्हे जन्म किसने दिया ?

सेठ — मेरे मा—वाप ने।

मुनि—तुम कितने भाई थे ?

सठ—पाच।

मुनि—वाकी चार कहा हे ?

सेठ—व छाटी उम्र मे ही मर गये ।

मुनि–क्या उन चार भाइयो के मा–वाप नही थे ? या उन्हे मा–वाप ने मारना चाहा था ? फिर भी तुम जीते रहे ओर वे मर गये। इसका कारण क्या हे ?

सेठ–वे पुण्य लेकर नही आये थे इस कारण मर गये।

मुनि–तुम पढे–लिखे हो ?

सेठ–हा।

मुनि–तुम्हारे साथ ओर लोग भी पढते होगे ?

सेठ–हा ।

मुनि–तो वे सव तुम्हारे ही वरावर पढे हे ?

सेठ–नही, उनमे से कई तो मूर्ख ही रह गये।

मुनि–ऐसा क्यो?

सेठ–वे पुण्य लेकर नही आये थे।

मुनि ने इसी तरह स्त्री धन, दोलत आदि के सम्वन्ध मे भी प्रश्न किये। अन्त मे कहा–यह सव वेभव तुम्हे पुण्य से मिला हे। यह वात तुम स्वय स्वीकार करते हो। मगर यह वताओ कि जिस पुण्य से तुमने मनुष्यशरीर पाया उम्र लम्वी पाई, विद्या पाई धन–सम्पदा पाई ओर कुटुम्व पाया वह पुण्य तुमने कहा से पाया ? हम साधुओ से ही तो तुमने पुण्य पाया होगा । फिर आज तुम हमे देखते ही प्रसन्न नही होते हो। क्या यह खाकर विगाडना नही है ? घोडे को तुमने मोटा–ताजा वनाया ओर हमने तुम्हे मोटा–ताजा वनाया हे। तुम घोडे से जेसी आशा रखते थे हम भी तुमसे वेसी ही आशा रखते थे। हमे भी क्या मालूम था कि तुम पूर्व के वदले पश्चिम की तरफ जाओगे ? आज तुम दुनियादारी के कामो मे दोडते हो ओर धर्म के कार्यो मे रुकते हो–अडते हो। तुम्हारी दशा क्या घोडे के समान नही हे?

मुनि की वात सेठ की समझ मे आ गई। वह प्रसन्न होकर वोला – आपने ठीक कहा ह। मॆं घोडे के लिए रोता था मगर अपना विचार ही नही करता था । जिस धर्म के प्रताप से मे सम्पन्न वना हुआ हू, उस धर्म को मॆंने कव माना ? मॆंने किस दु खिया के दु ख दूर किये ? सचमुच पहल के पुण्य को म नरक का सामान वना रहा हू। इसे पाकर मॆंने तनिक भी सुकृत नही किया । न सदगुरु की सगति की न परमात्मा की वाणी सुनी। म तो इस घाड स भी गया–वीता हू।

अपनी असली हालत का विचार कर सठ की आखा म पश्चाताप के आसू आ गय। वह मुनि क चरणा म गिर पडा। वोला–दयामय । आपका

उपकार कभी नही भूलूगा । आपने घोडे के साथ ही मेरी नजर झाड दी। यह घोडा बुरा नही भला है जो अड गया और आप मिल गये। यह अडा न होता तो आपके सामने भी न देखता। अब कृपा कर मुझे धर्म का मार्ग बतलाइये।

मुनि ने कहा – बस, दया' इन दो अक्षरो मे ही धर्म है। तुम्हारे दिल मे दया का वास हो गया तो फिर किसी पापकर्म की ओर तुम्हारी प्रवृत्ति ही नही होगी। इसलिए हृदय मे दया बसा लो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा।

इतना कहकर मुनि रवाना हो गये। अब की बार सेठ घोडे पर सवार हुआ तो उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि घोडा बिना अडे सीधी और सरपट चाल चल रहा है ।

38 : खरा–खोटा

देहली जेसे किसी शहर मे एक प्रतिष्ठित जोहरी रहता था। यद्यपि वह होशियार था मगर कभी–कभी होशियार जौहरी भी चूक जाते है। मनुष्यमात्र भूल का पात्र है। इस जोहरी से भी एक बार भूल हो गई। उसने एक खोटे हीरो का हार खरा और कीमती समझ कर खरीद लिया ओर इस खरीद मे उसने अपनी सारी पूजी लगा दी।

जोहरी को खरीद करने के बाद पता चल गया कि हीरा बिलकुल खोटा हे मगर अव करता क्या ? बेचने वाला रफू–चक्कर हो चुका था। उसने सोचा–अव इस सम्वन्ध मे हल्ला–गुल्ला करना वृथा हे। ऐसा करने से आवरू जायेगी। मगर मेने इस हीरे के पीछे घर की सारी पूजी खरच दी हे। अगर मेरी मृत्यु जल्दी हो जाये तो कुटुम्वी–जन क्या खाएगे ? कुछ भी हो जो सकट माथे पर आ पडा हे उसे भुगते विना कोई उपाय नही हे। हा, मेरे एक मित्र हे जो आपत्ति के समय अवश्य सहायक होगे। हीरा भले खोटा निकल गया मगर मेरा मित्र खोटा नही निकल सकता।

ग्रन्थो मे सन्मित्र की वडी प्रशसा की गई हे ओर कहा गया हे कि साभाग्य से ही सन्मित्र की प्राप्ति होती हे। सुख के समय साथ देने वाले तो अनेक मित्र मिल जाते हे किन्तु दु ख के समय साथ देने वाले कोई विरले ही होते ह। वह विरले मित्र ही सन्मित्र कहलाते हे।

जाहरी सोचने लगा–मेरा मित्र सच्चा मित्र हे। लेकिन मित्र के प्रति मागने की नही वरन दन की वुद्धि रखनी चाहिए। अत जव तक म जीवित हू तव तक तो कोई प्रश्न ही नही ह। मरी मृत्यु के पश्चात मेरा मित्र मरे घर की सार–सम्भाल कर ही लगा।

जोहरी बीमार तो था ही थोडे दिनो बाद उसकी मौत का समय निकट आ पहुचा। तब उसने विचार किया—मेरी पत्नी समझती है कि मै एक बडे जौहरी की पत्नी हू अगर मे उसे सच्ची परिस्थिति बतला दूगा तो उसे गहरा आघात लगेगा। अतएव कोई ऐसा मार्ग खोजना चाहिए कि पत्नी को आघात न लगे और पुत्र का अहित न हो।' और उसने अपना कर्त्तव्य निश्चित कर लिया।

जोहरी ने अपनी पत्नी को पास बुलाकर कहा—मेरा अन्तिम समय नजदीक आ गया है। देखना अपने घर की सम्पत्ति का सार हीरा है। इस हीरे को सम्भाल कर रखना, हीरा किसी और के हाथ मे न चला जाये। अगर कोई आर्थिक कठिनाई आ पडे तो इस हीरे को लडके के साथ मेरे मित्र के पास भेज देना। फिर वह जैसा कहे वैसा करना।

जौहरी चल बसा। उसकी पत्नी ने जैसे—तैसे कुछ महीने निकाले। इसके बाद उसके सामने आर्थिक कठिनाई आ खडी हुई। उसने सोचा—पुत्र जब तक बडा नही है, तभी तक कठिनाई हे। जब तक पुत्र काम मे नही लगता तब तक के लिए हीरा काम आ सकता है। हालाकि हीरा बहुत कीमती है फिर भी कष्ट के समय काम न आया तो फिर इसका उपयोग ही क्या है ? लडका बडा हो जायेगा और कमाने लगेगा तो न जाने कितने हीरे फिर हो जायेगे।

इस पकार विचार कर उसने लडके को नहलाया—धुलाया, अच्छे कपडे पहलाए और फिर कहा—बेटा इस हीरे को अपने पिता के मित्र के पास ले जा। उन्हे पिता के समान समझ कर नमस्कार करके विनयपूर्वक कहना— पिताजी कह गये है कि यह हीरा घर की सम्पत्ति है। इसे आप चाहे तो बेच दे या गिरवी रख दे, घर का खर्च चलाने के लिए पैसे की आवश्यकता हे उसकी आप व्यवस्था कर दे।'

लडका हीरा लेकर पिता के मित्र के पास गया। माता का सन्देश उसने अक्षरश कह सुनाया। हीरा हाथ पर रख दिया। हाथ मे लेते ही उसे पता लग गया कि हीरा खोटा हे। परन्तु उसने विचार किया — अगर मे साफ कह दूगा कि हीरा खोटा हे तो मित्र की पत्नी को असह्य आघात लगेगा।

अगर मे इसे अपने पास रखता हू तो मेरी साख जोखिम मे पडती हे। अतएव हीरे के सम्वन्ध मे अभी कोई स्पष्टीकरण न करना ही योग्य हे।

जौहरी ने मित्र के लडके से कहा—तुम्हारे पिता की मृत्यु हो जाना वडे दु ख की वात है, पर तुझे देखकर मुझे सन्तोष हे। मेरे इस घर को तू अपना ही घर समझना। खर्च की तगी मत भोगना। जितनी जरूरत हो यहा से ले जाना। पर यह हीरा बहुत कीमती हे। अभी इसकी पूरी कीमत नही उपजेगी। इसलिए इसे वापिस घर लेते जाओ और माता से कह देना—हीरे को सम्भाल कर रखना। मै इसे सम्भाल नही सकूगा। रुपया यो न ले जाना चाहो तो नाम लिखा कर ले जाओ। हीरा बिके तो लौटा देना। पर मेरी एक बात मान ले। तू मेरी दुकान पर आया कर। इसे अपनी ही दुकान समझ।

लडका अपनी मा के पास लौट गया। सब बाते सुनकर वह सन्तुष्ट हुई और सोचने लगी—मेरे पास दो हीरे हैं—एक यह और दूसरा मेरा पुत्र ! फिर किस बात की चिन्ता है ! वह पति के मित्र से रुपया मगवा कर खर्च चलाने लगी। पुत्र को दुकान पर भेजना आरम्भ कर दिया।

लडका सुसस्कारी और होशियार था। दुकान पर जाकर वह रत्नो की परीक्षा करने लगा। धीरे—धीरे वह अच्छा पारखी बन गया। एक बार तो उसने ऐसे रत्न की ठीक परख की जिसे जौहरी भी नही परख सके थे। सभी उस पर प्रसन्न हुए। सबने कहा—आज इसने हम लोगो की इज्जत रख ली।

पहले के लोग कृतज्ञ होते थे ओर गुणो का आदर करते थे। जब से ईर्ष्या ने कृतज्ञता को कुतरा है तभी से गुणो की कद्र कम हो गई है।

जोहरी ने लडके से कहा— 'तू अब रत्नो का परीक्षक बन गया हे। अव तेरे घर मे जो रत्न है उसकी परीक्षा कर देख। मेने तो अनुमान से ही उसे वहुत कीमती कह दिया था अब तू उसकी अच्छी तरह परीक्षा करके देख।

लडका घर गया। उसने मा से कहा—मॉ, जरा वह हीरा निकालो। मॉ ने पूछा— कोई ग्राहक आया? लडके ने कहा—नही, ग्राहक तो नही आया। जरा परीक्षा कर देखू कि कितनी कीमत हे केसा हे ?

मॉ प्रसन्न होती हुई वोली—अव तो तू रत्नो का परीक्षक हो गया हे न? लडके न उत्तर दिया—यह तुम्हारी ही कृपा का फल हे मा। यदि मोहवश हाकर तुम दुकान न जाने देती तो मे परीक्षक केसे वनता ?

माता ने खोटा हीरा पुत्र को पकडा दिया। उसने हाथ मे लेते ही परख लिया कि यह हीरा खोटा है ओर जमीन पर पटक दिया। माता ने कहा–क्यो बेटा फैक क्यो दिया ? पुत्र बोला–मा यह हीरा नही है। तेरे लिए तो मै हीरा हू। यह तो काच है। इसके सहारे सकट का इतना समय कट गया यही बहुत है।

लडका इतने दिनो तक जिसे हीरा समझता था उसी को इतने दिन जौहरी की दुकान पर बैठने से काच समझने लगा। इसके लिए वह जौहरी की पशसा करेगा या निन्दा ? वह जौहरी की पशसा ही करेगा कि इसने मुझे रत्न–परीक्षक बनाकर बहुमूल्य सम्पत्ति पदान की है। जो खरे–खोटे का ज्ञान कराता है, उसके समान और कोई उपकारी नही हो सकता।

लडके ने परीक्षक बनकर खोटे हीरे को फैक दिया, इसमे दु ख मानने की कोई बात नही है। सत्य–असत्य के विषय मे हमारी यही मनोवृत्ति होनी चाहिए।

39 : तत्व–ज्ञान और धन

तत्वज्ञान की महिमा क्या है और उसे किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है इस विषय मे उपनिषद् मे एक कथा है। उसका साराश इस प्रकार है–

एक बडा राजा था। दान के प्रभाव से उस राजा की कीर्ति चारो ओर फैल गई थी। सर्वत्र अपनी कीर्ति फैली देखकर राजा को अपने दान पर अभिमान होने लगा। वह सोचता–मैं बडा दानी हू। मेरे जैसा दानी दूसरा नही हो सकता।

एक रात्रि मे राजा महल की छत पर सो रहा था। वहा होकर हस का रूप धारण किये दो गधर्व निकले। एक ने राजा को देखकर दूसरे से कहा–'यह राजा बहुत धीर–वीर और बडा दानी तथा दयालु हे । इसके वरावर दानी ओर दयालु दूसरा नही है।'

यह सुनकर दूसरे गन्धर्व ने कहा–यह राजा केसा ही क्यो न हो पर उस तत्त्वज्ञानी का सौवा हिस्सा भी नही हो सकता। यह राजा उस तत्त्वज्ञानी की वरावरी किसी भी प्रकार नही कर सकता।

पहला गन्धर्व–तुम किस तत्त्वज्ञानी की बात कह रहे हो ?

दूसरे ने उस तत्त्वज्ञानी का परिचय दिया।

पहला–वह तो गरीव हे। वह गरीब इस राजा की वराबरी केसे कर सकता हे ?

दूसरा–जान पडता हे तुम ससार के वेभव को ही वडा मानते हो। ऐसा न होता तो इस प्रकार न कहते। परन्तु मे तत्त्वज्ञान के सामने ससार के वभव को तुच्छ समझता हू। तत्त्वज्ञान के सामने ससार का वेभव सो गुणा क्या कराड गुणा हीन हे। अतएव मेरे सामने उस वेभव की प्रशसा मत करो। जा लोग ससार के वेभव से युक्त हे उन्हे मे वडा नही मानता। म तत्त्वज्ञानी का ही महान मानता हू। जनशास्त्रो म भी यही कहा हे–

देवा वि त नमसति, जस्स धम्मे सया मणो।

अर्थात्–जिनमे धर्म हे उन्हे देवता भी नमस्कार करते है।

सासारिक वैभव की दृष्टि से मनुष्य देव की बराबरी नही कर सकता। मनुष्यो की अपेक्षा देवो का वेभव असख्य गुना अधिक होता है। फिर भी देवो की अपेक्षा मनुष्य महान् है। देवो का राजा इन्द्र भी मनुष्यो के पैरो मे अपना मस्तक झुकाता हे। इसका कारण क्या है ? यही कि भोग–विलास की सामग्री देवो के पास अधिक होने पर भी धर्म का पालन और आचरण मनुष्य ही कर सकता है। देव भोग–विलास का सेवन कर सकता है, मगर मनुष्य के समान धर्म का सेवन नही कर सकता। अतएव देवो की अपेक्षा मनुष्य की महिमा महान् है।

तो दोनो गन्धर्वो मे होने वाली बातचीत राजा ने सुनी। राजा विचार करने लगा–किसी भी उपाय से उस तत्त्वज्ञानी को गिराना चाहिए। सासारिक प्रलोभन मे फास कर उसे तत्त्वज्ञान से पतित करना चाहिए और यह साबित करना चाहिए कि तत्त्वज्ञान महान् नही, वरन् सासारिक वैभव ही महान् है।

इस प्रकार विचार करके प्रात काल होते ही राजा दस हजार गाये और एक मूल्यवान् हार लेकर रथ मे बैठ कर उस तत्त्वज्ञानी के पास गया। तत्त्वज्ञानी के पास पहुच कर राजा ने कहा –"महानुभाव! मै आपको दस हजार गाये यह हार और यह रथ भेट मे देता हू। मुझे आप तत्त्वज्ञान सुनाइए।

तत्त्वज्ञानी बोला–हे शूद्र ! तू जिस प्रकार आया है उसी प्रकार यहा से लौट जा। तू तत्त्वज्ञान श्रवण करने का अधिकारी नही है।

राजा क्षत्रिय था फिर भी ज्ञानी ने उसे शूद्र क्यो कहा ? इस प्रश्न का उत्तर शाकर–भाष्य मे दिया गया हे। कहा हे–जिसके हृदय मे कुछ और होता हे तथा बाहर वचन मे कुछ ओर होता हे तथा जो ससार के वेभव के सताप से व्याकुल रहता हे वह भी शूद्र हे।

तत्त्वज्ञानी की फटकार सुनकर राजा चौक उठा। उसने सोचा– वास्तव मे हस ने ठीक ही कहा था। यह तत्त्वज्ञानी तो मेरे वेभव को तुच्छ समझता ओर मुझे शूद्र कहता हे ! इतनी दरिद्रता ओर फिर भी वेभव के प्रति इतनी उपेक्षा ! इसकी दृष्टि मे तो स्वर्ग भी तुच्छ हे ! यह नही सोचता कि तत्त्वज्ञानी होते हुए भी मे इतना निर्धन हू। वास्तव मे यह सच्चा तत्त्वज्ञानी हे ओर तत्त्वज्ञानी के सामने ससार की विभूति तुच्छ ही होती हे।

इस प्रकार विचार कर राजा ने उस ज्ञानी स कहा—आप मेरा अपराध क्षमा कीजिए। यह गाये ओर यह हार आदि देकर में आपको तत्त्वज्ञान से पतित करके सिद्ध करना चाहता था कि तत्त्वज्ञान की अपेक्षा सासारिक वैभव ही महान् हे। मेरा यह अपराध क्षमा कीजिए ओर मुझे तत्त्वज्ञान सुनाइए।

राजा के इस प्रकार कहने पर तत्त्वज्ञानी ने कहा—अगर तत्त्वज्ञान सुनना चाहते हो तो अपने वैभव को त्याग करके मेरे यहा वेठो। मे तुम्हे तत्त्वज्ञान सुनाऊगा।

तत्त्वज्ञान की महिमा जितनी बडी है, उसे प्राप्त करने के लिए त्याग भी उतना ही बडा करना पडता है। तत्त्वज्ञान ससार की सम्पत्ति या विभूति से नही खरीदा जा सकता।

40 : परिग्रह

वैसे तो परिग्रह से सर्वथा मुक्त होना ही श्रेयस्कर है भगवान् महावीर का उपदेश यही हे लेकिन जो लोग परिग्रह का सर्वथा त्याग नही कर सकते, फिर भी भगवान् के उपदेश पर विश्वास रख कर कुछ भी त्याग करते है, उनको भी लाभ होता है। भगवान् के कथन पर विश्वास रख कर कुछ भी त्याग करने से किस प्रकार लाभ होता है, यह बात एक दृष्टान्त द्वारा समझाई जाती है।

एक राजा और उसके मन्त्री के यहा पुत्र न था। राजा सोचा करता था कि मेरे पश्चात् प्रजा की रक्षा का भार कौन उठावेगा ? इसी प्रकार मन्त्री के भी कोई पुत्र नही है अत मन्त्री के बाद मन्त्रित्व भी कौन करेगा ? राजा ओर मन्त्री इसी प्रकार के विचारो से पुत्र के लिए चिन्तित रहा करते थे। उन्होने पुत्रप्राप्ति के लिए प्रयत्न भी किये परन्तु सब प्रयत्न निष्फल हुए।

राजा और मन्त्री ने सुना कि नगर के बाहर एक सिद्ध पुरुष आये है, जो बहुत करामाती है। वे शायद हमारी अभिलाषा पूर्ण होने का उपाय बता सके यह सोचकर राजा ओर मन्त्री उस सिद्ध के पास गये। उचित अभिवादन ओर कुशल–प्रश्न के पश्चात् राजा उस सिद्ध से कहने लगा कि महाराज मेरे पुत्र नही है। मुझे इस बात की सदैव चिन्ता रहा करती है कि मेरे पश्चात् राजधर्म का पालन कोन करेगा? ओर मै प्रजा की रक्षा का भार किसको सोपूगा। इसी प्रकार मेरे इस मन्त्री के भी पुत्र नही है। कृपा करके आप कोई ऐसा उपाय बताइये जिससे हमारी यह चिन्ता दूर हो और हमारे पश्चात प्रजा की समुचित पकारेण रक्षा हो।

राजा की वात सुनकर सिद्ध समझ गया कि इन दोनो को अपने–अपने उत्तराधिकारी की चिन्ता हे। उसने राजा से कहा–तुम दोनो को योग्य उत्तराधिकारी प्राप्त हो जावे तो?

राजा–हमे कोई आपत्ति नही हे।

सिद्ध—इसके लिए मे उपाय वताता हू। उसके अनुसार कार्य करने से तुम दोनो को योग्य उत्तराधिकारी मिल जावेगे। यदि तुम दोनो के यहा पुत्र हुए भी, तो भी यह नही कहा जा सकता कि वे योग्य ही होगे। लेकिन मे जो उपाय बताता हू उसके द्वारा तुम्हे योग्य उत्तराधिकारी प्राप्त होगे।

राजा—यह तो प्रसन्नता की वात हे।

सिद्ध—तुम लोग अपने नगर मे किसी दिन भिखमगो को खूब टुकडे वटवाना। फिर सब भिखमगो को एकत्रित करना और उनमे से एक—एक को निकाल कर उनसे कहते जाना कि तुम अपने पास के टुकडे फेंक दो तो हम तुमको राज्य देगे। जो भिखमगा तुम्हारे इस कथन पर विश्वास न करे, उसे जाने देना। जो विश्वास तो करे, लेकिन भविष्य के लिए कुछ टुकडे रहने देकर शेष फेंक दे और जो पूरी तरह विश्वास करके सब टुकडे फेंक दे उन दोनो मे से जिसने सब टुकडे फैक दिये हो, उसको राजा बना देना और जिसने कुछ रख कर शेष टुकडे फैक दिये हो, उसे मन्त्री वना देना। वे दोनो तुम दोनो के योग्य उत्तराधिकारी होगे और उनके द्वारा प्रजा की भी पूरी तरह रक्षा होगी।

राजा ओर मन्त्री को सिद्ध पर विश्वास था। इसलिए उन्होने सिद्ध का कथन स्वीकार किया। सिद्ध का अभिवादन करके राजा ओर मन्त्री नगर लोट आये। कुछ दिनो वाद राजा ने नगर मे यह घोषित करा दिया कि आज अमुक समय से अमुक समय तक भिखमगो को खूब रोटी के टुकडे बाटे जावे। राजा ओर मन्त्री ने अपनी ओर से भिखमगो को खाने की बहुत सी चीजे बटवाई। फिर सब भिखमगो को एक बाडे मे एकत्रित किया गया। राजा ओर मन्त्री उस वाडे के द्वार पर वेठ गये तथा हुक्म दिया कि एक—एक भिखारी को वाहर आने दिया जावे। राजा की आज्ञानुसार एक—एक भिखारी बाडे से वाहर आने लगा। जो भिखारी बाहर आता उससे राजा कहता—तू अपने पास के टुकडे फॅक दे तो मे तुझको मेरा राज्य दूगा। राजा प्रत्येक भिखारी से ऐसा कहता लेकिन उन लोगो को कथनपर विश्वास न होता। वे सोचते कि वहुत दिनो के वाद तो हमे इतना खाने को मिला हे। राजा का क्या भरोसा। यह अभी तो राज्य देने को कहता हे लेकिन यदि इसने राज्य न दिया तो हम इसका क्या कर लेगे। पास के टुकडे फंक कर ओर भूखो मरेगे।

इस प्रकार विचार कर भिखमगे लोग राजा के कथन क उत्तर मे कहत ह— ह हुजूर मर भाग्य मे राज्य कहा ? मर भाग्य म ता टुकडा मागकर खाना ह। काई भिखारी इस तरह कहता आर कोई दूसरी तरह कहता लकिन राजा क कथन पर विश्वास करक किसी न भी टुकड नही फक। राजा इस

तरह के भिखारी को जाने देता और दूसरे को बुलाता। होते–होते एक भिखारी आया। राजा ने उससे भी टुकडे फैक देने के लिए कहा। राजा का कथन सुनकर उस भिखारी ने सोचा कि राजा झूठ को बात कहकर मेरे पास के टुकडे फैकवाने से क्या लाभ हो सकता है । लेकिन दूसरी ओर मेने अभी कुछ भी नही खाया हे। यदि इसने टुकडे फिकवाने के बाद राज्य न दिया तो मुझे अभी ही भूखो मरना पडेगा। इसलिए सब टुकडे फैकना ठीक नही।

इस पकार सोचकर उस भिखारी ने कुछ अच्छे–अच्छे टुकडे रख लिये और बाकी के टुकडे फैक दिये। राजा ने उस भिखारी को बैठा लिया।

अनेक भिखमगो के बाद एक भिखमगा फिर ऐसा ही आया। राजा ने उससे भी ऐसा ही कहा। उस भिखारी ने सोचा कि यह राजा टुकडे फैक देने पर राज्य देने को कहता है, फिर भी टुकडे फैकने पर राज्य न देगा, तो जितने टुकडे फिकवाता है उतने टुकडे तो देगा। और कदाचित् उतने टुकडे भी न देगा तो जाने तो देगा । मै और टुकडे माग लूगा। इस प्रकार विचार कर उसने अपने पास के सब टुकडे फैक दिये। राजा उस भिखारी को तथा पहले वाले भिखारी को साथ लेकर महल को चल दिया, और शेष सब भिखारियो को भी चला जाने दिया। दोनो भिखारियो को महल मे लाकर राजा ने सब टुकडे फैंक देने वाले भिखारी को अपना उत्तराधिकारी बनाया और थोडे टुकडे रख लेने वाले भिखारी को मन्त्री का उत्तराधिकारी बनाया। आगे जाकर दोनो भिखारी योग्य राजा तथा मन्त्री हुए ओर प्रजा का पालन करने लगे।

यह दृष्टान्त है। इस दृष्टान्त के अनुसार भगवान महावीर राजा है और ससार के जीव सासारिक–पदार्थ रूपी टुकडो के भिखारी हे। भगवान महावीर ससार के जीवो से कहते हे – जो कोई इन सासारिक पदार्थ रूपी टुकडो को फेक देगा उसे मेरा पद प्राप्त होगा। भगवान महावीर के इस कथन पर अविश्वास करने का कोई कारण नही हे फिर भी जो लोग भगवान के कथन पर विश्वास नही करते तथा सासारिक पदार्थों को नही त्यागते वे भिखारी के भिखारी ही बने रहते है। और जो सासारिक पदार्थो को सर्वथा त्याग देते हे– परिग्रह से निवृत्त हो जाते हे–वे सिद्धपद प्राप्त कर लेते है। जो लोग सासारिक पदार्थ रूपी टुकडो को सर्वथा नही त्याग सकते उनको उचित ह कि वे भिखारियो मे तो न रहे । महा–परिगह रूप खराब–खराब टुकडे फेक कर श्रावक पद रूप भगवान के पद का मन्त्रित्व पाप्त करे।

41 : जाट–जाटनी

ससार का ऐसा कोई पदार्थ नही, जो कभी न छूटे। छोडने की इच्छा न रहने पर भी, ससार के पदार्थ तो छूटते ही है। लेकिन यदि ससार के पदार्थो को इच्छापूर्वक छोडा जावेगा, तो दु ख भी न होगा तथा प्रशसा भी होगी और इच्छापूर्वक न छोडने पर ससार के पदार्थ छूटेगे तो अवश्य ही परन्तु उस दशा मे हृदय को अत्यन्त खेद होगा तथा लोगो मे निन्दा भी होगी। इस विषय मे एक कहानी है जो इस स्थान के लिए उपयुक्त होने से वर्णन की जाती हे।

एक जाट की स्त्री अपने पति से प्राय यह कहा करती थी कि मे चली जाऊगी। जरा भी कोई बात होती तो वह कहने लगती कि मै जाती हू ! जाट ने सोचा कि यह चचल मेरे यहा से किसी दिन अवश्य ही चली जाएगी लेकिन यदि यह स्वय मुझको छोड जाएगी तो मेरे हृदय को दु ख भी होगा ओर लोगो मे मेरी निन्दा भी होगी। लोग यही कहेगे, जाट मे कोई दोष होगा इसी से उसकी स्त्री उसे छोडकर चली गई। इसलिए ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे मुझे इसके जाने का दु ख भी न हो ओर लोगो मे मेरी निन्दा भी न हो।

एक दिन पति–पत्नी मे फिर कुछ खटपट हुई। उस समय भी जाटिनी ने यही कहा कि मे तुम्हे छोडकर चली जाऊगी ! जाट ने जाटनी से कहा तू वार–वार जाने का भय दिखाया करती हे यह अच्छा नही। तेरे को जाना ही ह तो खुशी से जा। मे तेरे को जाने की स्वीकृति देता हू। तू मेरी रकम–माल मुझे सोप दे ओर फिर भले ही चली जा। जाट का यह कथन सुनकर जाटनी प्रसन्न हुई। उसने अपने शरीर के आभूपणादि उतार कर जाट को दे दिये। जाट न उससे कहा–अव तू मजे स जा लेकिन एक काम तो आर कर द ! घर म पानी नही ह। म अभी ही घडा लेकर पानी भरने जाऊगा

तो लोग मेरे लिए भी न मालूम क्या–क्या कहेगे और तेरे लिए भी कहेगे कि घर मे पानी तक नही रख गई । इसलिए एक घडा पानी तो ला दे और फिर जहा जाने की तेरी इच्छा हो वहा मजे से चली जा।

जाटनी ने सोचा–जब यह एक घडा पानी ला देने से ही मुझे छुटकारा देता है और मै इससे सदा के लिए छुटकारा पा जाती हू, तब इसका कहना मान लेने मे क्या हर्ज है । इस पकार सोचकर जाटनी घडा लेकर पानी भरने गई। जाटनी के जाने के पश्चात् जाट भी घर से डडा लेकर निकला और उसी मार्ग पर जा बैठा, जिस मार्ग से जाटनी पानी लेकर आने वाली थी। जाट ने दो–चार आदमियो को बुलाकर अपने पास बैठा लिया। जैसे ही सिर पर पानी भरा घडा लिये हुए जाटनी जाट के सामने आई, वैसे ही जाट कटु–शब्द कहता हुआ उठ खडा हुआ। उसने अपने डण्डे से जाटनी के सिर पर घडा फोडकर उससे कहा–कुलटा, मेरे यहा से चली जा । तेरे लाए हुए पानी की मुझे आवश्यकता नही है। मै अपने घर मे तुझे नही रहने दे सकता, इसलिए तेरी इच्छा हो वहा जा।

सिर पर का घडा फूट जाने से जाटनी भीग गई। वह जाट से कहने लगी कि–दुष्ट मै तेरे यहा रहना ही कब चाहती हू ? मै तो तेरे जेवर आदि फैक कर जाती थी, केवल तेरे कहने से पानी भरने गई थी। इस प्रकार जाटनी भी चिल्लाई परन्तु उसके कथन पर किसी ने भी विश्वास नही किया। सब लोगो ने यही समझा और यही कहने लगे कि जाट ने जाटनी को निकाल दिया।

तात्पर्य यह है कि ससार का कोई पदार्थ ऐसा नही है जो आत्मा का साथ दे। सभी पदार्थ एक ना एक न एक दिन अवश्य छूटने वाले है। लेकिन यदि उन पदार्थो को स्वय छोड देगे तो दु ख नही होगा ओर लोगो मे भी निन्दा न होगी। किन्तु जैसे जाटनी के विषय मे लोग कहने लगे कि जाट ने जाटनी को त्याग दिया, उसी प्रकार सासारिक पदार्थ त्यागने वाले के विषय मे भी लोग यही कहेगे कि अमुक ने सासारिक पदार्थ–धन–सम्पदा आदि को त्याग दिया।

42 : लज्जा

आजकल की बहुत सी स्त्रिया घूघट–पर्दा आदि से ही लज्जा की रक्षा समझती है, किन्तु वास्तव मे लज्जा कुछ और ही है। लज्जावती अपने अग–अग को इस प्रकार से छिपाती है कि कुछ कहा नही जा सकता। लज्जावती कैसी होती है, यह बात एक उदाहरण से समझ लीजिये–

एक लज्जावती बाई पतिव्रतधर्म का पालन करती हुई अपना जीवन बिताती थी। उसने यह निश्चय कर रखा था कि मेरे साथ जो कोई रहेगी उसे भी मैं यही शिक्षा दूगी। उसकी शिक्षा से मुहल्ले की बहुत–सी स्त्रिया सदाचारिणी वन गईं।

उसी मुहल्ले मे एक ओर ओरत थी जिसका स्वभाव इससे एकदम विपरीत था। यह पूर्व को जाना हो तो वह पश्चिम को जाती थी। वह अपना दल बढाने के लिए स्त्रियो को भरमाया करती। उस पतिव्रता की निन्दा करती उसकी सगति को वुरा बतलाती ओर कहती–अरे, उसकी सगत करोगी तो जोगिन वन जाओगी। खाना–पीना ओर मोज करना ही तो जीवन का सबसे वडा लाभ हे।

कुछ स्त्रिया उस निर्लज्जा ओर धूर्त स्त्री की वाते सुनती, पर ऐसी थी वहुत कम ही। सदाचारिणी की बाते सुनने वाली वहुत थी। यह देखकर उसे वडी ईर्ष्या होती ओर उसने उस सदाचारिणी की जड खोद कर फेंकने का निश्चय कर लिया।

वह सदाचारिणी वाई वडी लज्जावती थी मगर ऐसी नही कि घर मे ही वन्द रहे ओर वाहर न निकले। वह अपने काम करने के लिए वाहर भी जाती थी। जव वह वाहर निकलती तो निर्लज्जा उसस कहती– मे तुझ अच्छी तरह जानती हू कि तू कसी हे। वडी वगुला–भगत वनी फिरती ह लकिन तर जसी दूसरी कहीं शायद ही मिले।

निर्लज्जा ने दो–चार बार लज्जावती से ऐसा कहा। लज्जावती ने सोचा–क्षमा रखना तो उचित है पर ऐसा करने से–चुपचाप सुन लेने से तो लोगो को शका होने लगेगी। एक बार ऐसा ही प्रसग उपस्थित होने पर उसने रुक कर कहा–"तेरा मार्ग अलग है और मेरा मार्ग अलग है। मेरा–तेरा कोई लेन–देन नही फिर बिना मतलब अपनी जबान क्यो बिगाडती है ?

लज्जावती का इतना कहना था कि निर्लज्जा भडक उठी। वह कहने लगी –"तू मीठी–मीठी बाते बनाकर अपने ऐब छिपाती है और जाल रचती है। मगर मै तेरे सारे ऐब ससार के सामने खोलकर रख दूगी।"

यह सुनकर लज्जावती को भी कुछ तेजी आ गई। उसने उस कुलटा से कहा –"तुझे मेरे चरित्र प्रकट करने का अधिकार है, मगर जो यद्वा–तद्वा ऊल–जलूल कहा तो तेरा भला न होगा।'

पतिव्रता की यह युक्तिपूर्ण बात सुनकर लोगो पर उसका अच्छा प्रभाव पडा। लोगो ने उससे कहा–' बहिन तुम अपने घर जाओ। यह कैसी है, यह बात सभी जानते है। लोगो की बात सुनकर पतिव्रता अपने घर चली गई। यह देखकर कुलटा ने सोचा–' हाय ! वह भली और मै बुरी कहलाई। अब इसकी पूछ और बढ जायेगी और मेरी बदनामी बढ जायेगी। ऐसे जीवन से तो मरना ही भला ! मगर इस प्रकार से मरने से भी क्या लाभ है ? अगर उसे कोई कलक लगाकर उसके प्राण ले सकू तो मेरे रास्ते का काटा दूर हो जाए। कलक क्या लगाऊ ? और कोई कलक लगाने पर उसे साबित करना कठिन हो जायेगा क्यो न मै अपने लडके को ही मार डालू और दोष उसके माथे मढ दू। लोगो को विश्वास हो जायेगा और उसका खात्मा हो जायेगा।

इस प्रकार का क्रूरतापूर्ण विचार करके उसने अपने लडके के प्राण ले लिए। लडके का मृत शरीर उस सदाचारिणी के मकान के पास कुए मे फेक आई। इसके बाद रो–रो कर बिलख–बिलख कर अपने लडके को खोजने लगी। हाय ! मेरा लडका न जाने कहा गायब हो गया है। दूसरे लोग भी उसके लडके को ढूढने लगे। आखिर वह लोगो को उसी कुए के पास लाई जिसमे उसने लडके का शव फैका था। लोगो ने कुए मे ढूढा तो उसमे से बच्चे की लाश निकल आई। लाश निकलते ही दुराचारिणी उस सदाचारिणी का नाम ले–लेकर कहने लगी– हाय ! उस भगतन की करतूत देखो। उस पापिनी ने मुझसे वर भजाने के लिए मेरे लडके को मार डाला ! डाकिन ने मेरा लाल खा लिया। हाय ! मेरे लडके को गला घोटकर मार डाला।

आखिर न्यायालय मे मुकदमा पेश हुआ। दुराचारिणी ने सदाचारिणी पर अपने लडके को मार डालने का अभियोग लगाया। सदाचारिणी को भी न्यायालय मे उपस्थित होना पडा। उसने सोचा–वडी विचित्र घटना हे। में उस लडके के विषय मे कुछ नही जानती, फिर भी मुझ पर हत्या का आरोप है। खैर, कुछ भी हो, अभियोग का उत्तर तो देना ही पडेगा।

कुलटा स्त्री ने अपने पक्ष के समर्थन मे कुछ गवाह भी पेश किये। सदाचारिणी से पूछा गया –"क्या तुमने इस लडके की हत्या की हे ?"

सदाचारिणी –नही, मैने लडके को नही मारा किसने मारा है यह भी नही जानती और न मुझे किसी पर शक ही है।

मामला बादशाह के पास पहुचाया गया। बादशाह बडा बुद्धिमान ओर चतुर था। उसने सदाचारिणी को भली–भाति देखा और सोचा–कोई कुछ भी कहे, सबूत कुछ भी हो पर यह निश्चित मालूम होता हे कि इसने लडके की हत्या नही की।

बादशाह का वजीर भी बडा बुद्धिमान् था। उसने कहा– इस मामले मे कानून की किताबे मददगार नही होगी। यह मेरे सुपुर्द कीजिये। मे इसकी जाच करूगा।

बादशाह ने वजीर को मामला सोप दिया। वजीर दोनो स्त्रियो को साथ लेकर अपने घर गया। वह उस सदाचारिणी को साथ लेकर एक ओर जाने लगा। सदाचारिणी ने वजीर से कहा – मे अकेली परपुरुष के साथ एकान्त मे कदापि नही जा सकती। आप जो पूछना चाहे यही पूछ सकते हे। अकेले पुरुष के साथ एकान्त मे जाना धर्म नही हे फिर वह चाहे सगा बाप ही क्यो न हो।

वजीर ने धीमे स्वर मे कहा–तुम मेरी एक बात मानो तो मे तुम्हे बरी कर दूगा।

सदाचारिणी–आपकी बात सुने बिना मे नही कह सकती कि में उसे मान ही लूगी। अगर धर्मविरुद्ध बात नही हुई तो मान लूगी अन्यथा जान देना मजूर हे।

वजीर– में तुम्हारा धर्म नही जाने दूगा। तब तो मानोगी।

सदाचारिणी– अगर धर्म न जाने योग्य बात हे तो साफ क्यो नही कहते?

वजीर– तुम्हारे खिलाफ यह आरोप हे कि तुमने लडके का मारा हे। न मारने की बात केवल तुम्ही कहती हो पर तुम्हारी बात पर विश्वारा केरा

किया जाये ? अपनी बात पर विश्वास कराना है तो नगी होकर मेरे सामने आ जाओ। इससे मै समझ लूगा कि तुमने मेरे सामने जैसे शरीर पर पर्दा नही रखा उसी पकार बात कहने मे भी पर्दा न रखोगी।

सदाचारिणी–जिसे मै पाणो से भी अधिक समझती हू, उस लज्जा को नही छोड सकती और आपका यह कर्त्तव्य नही है। आप चाहे तो शूली पर चढा सकते है। आपको फासी पर लटकाने का अधिकार है, परन्तु लज्जा का त्याग मुझसे न हो सकेगा।

इतना कहकर वह वहा से चल दी। वजीर ने कहा– 'देखो, समझ लो। न मानोगी तो मारी जाओगी।' सदाचारिणी ने कहा– 'आपकी मरजी। यह शरीर कौन हमेशा के लिए मिला है। आखिर मनुष्य मरने के लिए ही तो पैदा हुआ है।"

वजीर ने सोच लिया–"यह स्त्री सच्ची और सती है।"

इसके बाद वजीर ने कुलटा को बुलाकर वही कहा–"तुम मेरी एक बात मानो तो तुम जीत जाओगी।'

कुलटा–मै जीती हुई तो हू ही। मेरे पास बहुत से सबूत है।

वजीर–नही, अभी सन्देह है। वह बाई हत्यारिणी नही है।

कुलटा–आप इसके जाल मे तो नही फस गये ? वह बडी धूर्त्ता है।

वजीर–यह सन्देह करना व्यर्थ है।

कुलटा–फिर आप उस हत्यारिणी को निर्दोष कैसे बतलाते है?

वजीर–अच्छा मेरी बात मानो ।

कुलटा– क्या ?

वजीर–तुम मेरे सामने कपडे खोल दो तो मै समझूगा कि तुम सच्ची हो।

कुलटा कपडे खोलने लगी। वजीर ने उसे रोक दिया और जल्लाद को बुलाकर कहा–'इसे ले जाकर बेत लगाओ।"

जल्लाद उसे बेरहमी से पीटने लगा। वह चिल्लाई–ईश्वर के नाम पर मुझे मत मारो। जल्लाद ने पूछा– 'तो बता, लडके को किसने मारा है ?' कुलटा ने सच्ची बात स्वीकार कर ली। मार के आगे भूत भागता है यह कहावत प्रसिद्ध है।

वजीर ने अपना फैसला लिखकर बादशाह के सामने पेश कर दिया। उसने कहा–लडके की हत्या उसकी मा ने ही की है।

बादशाह ने कहा–यह बात कौन मान सकता है कि माता अपने पुत्र को मार डाले ! लोग न्याय पर सन्देह करेगे।

वजीर ने कहा—यह कोई अनोखी वात नही हे। धर्मशास्त्र के अनुसार पहला धर्म लज्जा हे। जहा लज्जा हे, वही दया हे। मेंने दोनो की लज्जा की परीक्षा की। पहली वाई ने मरना स्वीकार किया, पर लाज तजना स्वीकार न किया। वह धर्मशीला हे। इस दूसरी ने मुझे भी कलक लगाया ओर फिर लाज देने को तेयार हो गई। यह देखकर इसे पिटवाया तो लडके की हत्या करना स्वीकार कर लिया।

सारा मामला वदल गया। सच्चरित्रा वाई के सिर मढा हुआ कलक मिट गया। वादशाह ने सच्चरित्रा को धन्यवाद देकर कहा—'आज से तुम मेरी वहिन हो।"

लज्जा के प्रताप से उस बाई की रक्षा हुई। वह लाज तज देती तो उसके प्राण भी न वचते। वादशाह ने कुलटा को फासी की सजा सुनाई ओर सदाचारिणी से कहा—"वहिन ! तुम जो चाहो, मुझसे माग सकती हो।'

सदाचारिणी बाई ने उठ कर कहा—"आपके अनुग्रह के लिए आभारी हू। में आपके आदेशानुसार यही मागती हू कि यह वाई मेरे निमित्त से न मरी जाये। इस पर दया की जाये।"

वादशाह ने वजीर से कहा—"तुम्हारी वात विल्कुल सत्य हे। जिसमे लज्जा होगी, उसमे दया भी होगी। इस बाई को देखो। अपने साथ बुराई करने वाली की भी कितनी भलाई कर रही हे !'

वादशाह ने सदाचारिणी बाई की वात मानकर कुलटा को क्षमा—दान दे दिया। कुलटा पर इस घटना का ऐसा प्रभाव पडा कि उसका जीवन एकदम वदल गया।

साराश यह हे कि लज्जा एक वडा गुण हे। जिसमे लज्जा होगी, वह धर्म का पालन करेगा।

43 : खान–पान की शुद्धि और सामायिक

खान–पान और रहन–सहन की छोटी सी अशुद्धि भी चित्त को किस प्रकार अस्थिर बना देती है और चतुर श्रावक उस अशुद्धि को किस प्रकार मिटाता है, यह बताने के लिये एक कथित घटना इस प्रकार है –

एक धर्मनिष्ठ श्रावक था। वह नियमित रूप से सामायिक किया करता था और उसके लिए उन सब नियमोपनियमो का भली–भाति पालन करता था, जिनका पालन करने पर शुद्ध रीति से सामायिक होती है अथवा सामायिक करने का उद्देश्य पूरा होता है।

एक दिन वह श्रावक नित्य की तरह सामायिक करने के लिए बैठा। नित्य तो उसका चित्त सामायिक मे लगता था परन्तु उस दिन उसके चित्त की चचलता न मिटी। उसने अपने चित्त को स्थिर करने का बहुत प्रयत्न किया लेकिन सब व्यर्थ। वह सोचने लगा कि आज ऐसा कोन–सा कारण हुआ है, जिससे मेरा चित्त सामायिक मे नही लगता है किन्तु इधर–उधर भागा ही फिरता है। इस तरह सोचकर उसने अपने सब कार्यो की आलोचना की। अपने खान–पान की आलोचना की किन्तु उसे ऐसा कोई कारण न जान पडा, जो सामायिक मे चित्त को स्थिर न रहने दे । अन्त मे उसने विचार किया कि मै अपनी पत्नी से तो पूछ देखू कि उसने तो कोई ऐसा कार्य नही किया है जिसके कारण मेरा चित्त सामायिक मे नही लगता है । इस तरह विचार कर उसने अपनी पत्नी को बुलाकर कहा कि आज सामायिक मे मेरा चित्त अस्थिर रहा स्थिर नही हुआ। मेने अपने कार्य एव खान–पान की आलोचना की फिर भी ऐसा कोई कारण न जान पडा जिससे चित्त मे अस्थिरता आवे। क्या तुमसे कोई ऐसा कार्य हुआ हे जिसका प्रभाव मेरे खान–पान पर पडा हो और मेरा चित्त सामायिक मे अस्थिर हो रहा हो।

श्रावक की पत्नी भी धर्मपरायण श्राविका थी। पति का कथन सुनकर उसने भी अपने सव कार्यो की आलोचना की। पश्चात वह अपने पति से कहने

लगी कि मुझसे दूसरी तो कोई ऐसी त्रुटि नही हुई हे, जिसके कारण आपके खान–पान मे दूषण आवे ओर आपका चित्त सामायिक मे न लगे लेकिन एक त्रुटि अवश्य हुई हे। हो सकता हे कि मेरी उस त्रुटि का ही यह परिणाम हो कि आपका चित्त सामायिक मे न लगा हो। घर मे आज आग नही जल रही थी। मे भोजन वनाने के लिए चूल्हा सुलगाने के वास्ते पडोसिन के यहा आग लेने गई। जव मे पडोसिन के घर के द्वार पर पहुची, तव मुझे याद आया कि मे आग ले जाने के लिए तो कुछ लाई नही, फिर आग किस मे ले जाऊगी। मे आग ले जाने के लिए कण्डा ले जाना भूल गई थी। पडोसिन के द्वार पर कुछ कण्डे पडे हुए थे। मैने सहज भाव से उन कण्डो मे से एक कण्डा उठा लिया ओर पडोसिन के यहा से उस कण्डे पर आग लेकर अपने घर आई। मैंने आग जलाकर भोजन वनाया। पडोसिन की स्वीकृति विना ही में जो कण्डा उठाकर लाई थी, उस कण्डे को भी मैंने भोजन वनाते समय चूल्हे मे जला दिया। पडोसिन के घर से में विना पूछे जो कण्डा लाई थी वह कण्डा चोरी का था, हक का न था। इसलिए हो सकता हे कि मेरे इस कार्य के कारण ही आपका चित्त सामायिक मे न लगा हो क्योकि उस कण्डे को जलाकर वनाया गया भोजन आपने भी किया था।

पत्नी का कथन सुनकर श्रावक ने कहा कि वस, ठीक हे। उस कण्डे के कारण ही आज मेरा चित्त सामायिक मे नही लगा क्योकि वह कण्डा अन्यायोपार्जित था। अन्यायोपार्जित वस्तु या उसके द्वारा वनाया गया भोजन जव पेट मे हो, तव चित्त स्थिर केसे रह सकता हे । अव तुम पडोसिन को एक के वदले दो कण्डे वापस करो, उससे क्षमा मागो ओर इस पाप का प्रायश्चित्त करो। श्राविका ने ऐसा ही किया। यह कथानक या घटना ऐसी ही घटी हो या रूपक मात्र हो, इसका मतलव तो यह हे कि जो शुद्ध सामायिक करना चाहता हे, उसे अपना खान–पान ओर रहन–सहन शुद्ध रखना चाहिए। जव सामायिक मे मन न लगे तो खान–पान ओर रहन–सहन की आलोचना करके अशुद्धि मिटानी चाहिए।

44 : भार

एक सेठ के लडके का विवाह दूसरे सेठ के यहा हुआ था। उसकी स्त्री बहुत ओछे स्वभाव की थी। एक दिन सेठ का लडका भोजन कर रहा था और उसकी माता तथा पत्नी सामने बैठी थी। सास ने कहा—बहू, जरा शिला तो उठा लाओ मसाला पीसना है। बहू तडक कर बोली—मै क्या पत्थर उठाने यहा आई हू ? मैने अपने बाप के घर कभी पत्थर नही उठाए। सास गम्भीर और समझदार थी। उसने बहू से सिर्फ इतना कहा—मुझसे भूल हुई कि मैने तुम्हे यह काम करने को कह दिया। मै स्वय उठा लूगी। यह कहकर उसने स्वय शिला उठा ली और मसाला पीस लिया।

लडका यह सब देख—सुन रहा था। पत्नी के इस दुर्व्यवहार से उसके हृदय को बडी चोट लगी। वह सोचने लगा—' मेरी माता के प्रति इसका ऐसा व्यवहार है !" लडका कुलीन था। उस समय तो वह चुप रह गया पर उसने निश्चय कर लिया कि किसी तरकीव से इसकी अक्ल ठिकाने लानी होगी। ऐसा निश्चय करके वह चला गया। लडका सराफा की दुकान करता था। एक दिन उसकी दुकान पर एक हार बिकने आया। उसने वह हार खरीद लिया और सुनार को बुलाकर कहा—इस हार मे पान की जगह लोहे की अढाई सेरी सोने मे मढकर जड दो। ऊपर से कुछ जवाहर जड दो, जिससे भीतर लोहा होने का किसी को खयाल भी न आवे। सुनार ने ऐसा ही किया। लडका वह हार घर ले आया। उसने अपनी पत्नी से कहा—आज एक बहुत बढिया हार बिकने आया था। मैने उसे खरीद लिया है। बात इतनी ही है कि वह भारी बहुत है ओर तुम्हारा शरीर नाजुक है, वर्ना तुम्हारे लायक है। तुम उसका वोझ नही सम्भाल सकोगी।

पत्नी के दिल मे गुदगुदी पैदा हो गई। वह बोली— दिखाओ तो सही कितना भारी हे वह हार। मेने अपने पिता के घर बहुत भारी—भारी गहने पहने हे।

पति ने कहा– हा, देख लो। मगर तुम से वह उठेगा नही।

पत्नी ने हार देखा तो खुश हो गई। वह कहने लगी– मैने अपने पिताजी के घर पर तो इससे भी भारी हार पहने है। उनके सामने यह क्या चीज है ।

पति बोला–हा, पहने होगे। वह वडा घर है। अपनी शक्ति देख लो। पहन सको तो पहन लो ।

पत्नी–पहन तो मै लूगी । इसकी कीमत क्या है ?

पति–कीमत की चिन्ता मत करो । वह मैने चुका दी है।

स्त्री ने हार पहन लिया। हार पहनने की खुशी मे वह फूली नही समाई। घर का काम दौड–दौड कर करने लगी । हार बार–बार उसकी छाती से टकराता ओर छाती की हड्डिया चूर–चूर होने को हो गई, फिर भी वह हार का लोभ नही छोड सकी। हार पहन कर उसकी प्रसन्नता बहुत बढ गई।

लडके ने सोचा–हार के लोभ मे यह अन्धी हो गई है । इसे हार का भार मालूम ही नही होता । अगर अढाई सेरी की चोटे खाते–खाते छाती का खून जम गया तो नया बवाल उठ खडा होगा। दवाई–दारू की झझट तो मुझे ही करनी पडेगी।

एक रात जब स्त्री सो रही थी, उसके पति ने किसी ओजार से अढाई–सेरी से सोना हटा दिया। अढाई सेरी आधी नजर आने लगी। सुबह स्त्री ने उठकर देखा –अरे । हार तो लोहे का है । लोहा पहना कर मुझे बोझो क्यो मारा ? वैर ही भजाना था तो और तरह भजा लेते।

सेठ के लडके ने कहा–मैं तुम्हारी सुकुमारता की परीक्षा करना चाहता था। एक दिन मा ने शिला लाने को कहा था, तब तुम इतनी सुकुमार थी कि तुमसे शिला नही उठी। फिर तुम शिला से भी भारी बोझ गले मे लटकाये रही और कष्ट का अनुभव नही किया। आज जब तुमने देखा कि यह सोना नही लोहा हे तो फिर तुम्हे बोझ लगने लगा। बोझ क्या लोहे मे ही होता हे सोने मे नही ? तुम्हे सीख देने के लिए ही मेने यह उपाय किया था। तुम मेरी माता को देव–गुरु की तरह ही पूजनीय समझना। मे माता से द्रोह करके स्त्री का गुलाम होकर रहने वाले कपूतो मे नही हू।

अव आप अपने विपय मे सोचिये। आप पाप का बडे से वडा वोझ उठा लेते हे मगर धर्म का थोडा सा भार भी नही उठा सकते । सोने का वोझ प्रसन्नतापूर्वक सह सकते हे पर लोहे का वोझ नही सहा जाता । मगर ज्ञानी की दृष्टि मे सोने का वोझ ओर लोहे का वोझ समान हे।

45 : मिश्री का हीरा

एक बार अकबर बादशाह अपने महल मे सो रहा था। वर्षा की अधिकता के कारण यमुना नदी मे जोर का पूर आया। यमुना की घर्र–घर्र की ध्वनि से बादशाह की नीद टूट गई। बादशाह ने पहरेदार को बुलाकर पूछा–यमुना क्यो रो रही है ?

पहरेदार–जहापनाह इतनी बुद्धि मुझमे होती तो मै सिपाही क्यो बना रहता ? वजीर न बन जाता ?

बादशाह– ठीक है। जाकर वजीर को बुला लाओ।

पहरेदार वजीर को बुलाने गया। वजीर सो रहे थे। सिपाही ने आवाज लगाई। वजीर की नीद खुली। उसने पूछा–क्या मामला है ?

सिपाही–जहापनाह आपको याद फरमा रहे है।

वजीर – क्यो ? इस वक्त किसलिए ?

सिपाही ने सारा वृत्तान्त उसे बता दिया। रात का समय था। वर्षा हो रही थी। घोर अन्धकार छाया हुआ था, वजीर विवश थे, बादशाह की हुक्म–अदूली कैसे की जा सकती थी ? अतएव इच्छा न होने पर भी उसे बादशाह के पास जाना पडा।

यथोचित शिष्टाचार के पश्चात वजीर ने अपने को बुलवाने का कारण पूछा। बादशाह ने वजीर को वही प्रश्न पूछा– यमुना नदी क्यो रो रही है ?

वजीर ने उत्तर दिया–जहापनाह यमुना हिन्दुस्तान की नदी है। हिन्दुस्तान की नदी होने के कारण वह भी हिन्दुओ की रीति–नीति का पालन करती है। हिन्दुओ मे रिवाज है कि लडकी जब पीहर से अपने ससुराल जाती हे तब रोती जाती है। यमुना भी अपने पीहर से ससुराल जा रही है इसलिए रोती हुई जा रही है। इसका पीहर वह हिमालय पहाड है जहा से इसका उदगम हुआ हे और ससुराल समुद्र है।

वजीर की यह व्याख्या वादशाह को पसन्द आई। उसने वजीर को जाने की इजाजत दी।

वजीर घर जाने के लिए रवाना हुआ। रास्ते मे किसी घर मे एक बूढा जोर–जोर से रो रहा था। वजीर ने उसका रोना सुनकर सोचा–नदी का चढना ओर बादशाह का मुझे बुलाना इसी बूढे के निमित्त हुआ जान पडता है। अगर मैने इसका रोना सुन करके भी इसका दु ख दूर न किया तो मेरी बजारत को और साथ ही आदमियत को धिक्कार है।

जिस घर मे बूढा रो रहा था, उस घर का नम्बर नोट करके वजीर अपने घर चला गया। बूढे का रोना रात भर वजीर के दिल मे काटे की तरह चुभता रहा। वह सोचता रहा–कब सुबह हो और बूढे का दु ख दूर करू।

प्रात काल होते ही वजीर ने बूढे को बुला लाने के लिए आदमी भेजा। वजीर का बुलावा सुनते ही बूढा बुरी तरह घबराया। सोचने लगा–यह ओर नई मुसीबत कहा से आ पडी? परन्तु वह वजीर के आदमी के साथ हो लिया और वजीर के घर जा पहुचा।

वजीर ने बूढे से पूछा–चाचा, रात को रोते क्यो थे? सच बताओ।

बूढे ने जवाब दिया – हुजूर, मै कारीगर हू। जवानी मे में रफू करने का काम करता था ओर काफी कमा लेता था । पर जो कमाता था सब खर्च कर देता था, बचत नही करता था। उस समय बचत की आवश्यकता ही महसूस नही होती थी। जवान लडका था। सोचा था– बुढापे मे वह कमाएगा ओर मै वैठा–वेठा खाऊगा। इस प्रकार बेफिक्री मे अपना समय गुजार रहा था कि अचानक मेरा जवान बेटा चल बसा। में पापी बेठा रहा। अब हाथ–पेर थक चुके हैं। काम होता नही ओर गुजर करने को फूटी कोडी पास मे नहीं है। जिन्दगी मे कभी भीख नही मागी। भीख मागने का इरादा करते ही शर्म से गड जाता हू। इसी मुसीबत के मारे रात को रोना आ गया था।

मित्रो ! किसी सम्भ्रान्त व्यक्ति पर आर्थिक सकट आकर पडता हे तब उस पर क्या बीतती हे, इस घटना से यह जाना जा सकता हे।

वूढे की केफियत सुनकर वजीर ने कहा–तुम अब भी रफू करना जानते तो हो न ?

वूढा–जी हा जानता क्यो नही पर हाथ कापता हे।

इस पर वजीर ने उस बूढे को रुपये दते हुए कहा–मेने तुम्हे अपना चाचा वना लिया ह। अव चिन्ता–फिक मत करना।

बूढे ने कहा—जन्म भर मेने कभी मागा नही ह न किसी का मुफ्त का खाया है। अगर मुझे कुछ काम मिल जाये ओर फिर ये रुपये मिले तो ठीक होगा।

वजीर ने कहा – अच्छा तुम्हे काम भी देगे। लो यह मिश्री का टुकडा ले जाओ। इसे हीरा बनाकर ले आना। दिखने मे वह बिलकुल हीरा हो मगर पानी लगने से गल जाये। बूढे ने कहा— बहुत ठीक कहकर विदा ली।

अचानक सहायता मिल जाने से बूढे मे कुछ उत्साह आ गया था और वह कारीगर तो था ही। थोडे दिनो बाद मिश्री के टुकडे को वह हीरा बनाकर एक सुन्दर मखमल की डिब्बी मे सजा कर वजीर के पास ले आया।

वजीर हीरे को देखकर उत्यन्त पसन्न हुआ। उस ने कारीगर को बढिया—बढिया कपडे देकर कहा—तुम ये कपडे पहन कर हीरा लेकर बादशाह सलामत के दरबार मे हाजिर होना।

वजीर के आदेशनुसार कारीगर जौहरी बन गया। वह नकली हीरा लेकर बादशाह के समक्ष उपस्थित हुआ।

वजीर ने कारीगर को जौहरी बताते हुए उसकी खूब प्रशसा की। कहा—ये अमुक देश के प्रसिद्ध जौहरी है। इनके पास एक बढिया हीरा है। जहापनाह के लायक है। मैंने हीरा देखा है। वह मुझे बहुत पसन्द आया है।

बादशाह ने हीरा देखने की इच्छा प्रदर्शित की तो जौहरी ने डबिया खोलकर हीरा उनके सामने रख दिया। बादशाह को भी वह पसन्द आ गया। उसने कहा—जौहरियो को बुलाकर इसकी कीमत जचवाओ।

वजीर ने नकली जौहरी से कहा—आज आप जाइए। कल आइए, तब तक इसकी कीमत की जाच करा ली जायेगी।

वजीर ने कारीगर को रवाना किया और हीरा अपने पास रख लिया। वजीर ने सोचा—अगर जौहरी आये तो सारा गुड—गोबर हो जायेगा। फिर यह चालाकी न चल सकेगी। यह सोचकर उसने पहले ही उचित व्यवस्था करने का निश्चय कर लिया।

बादशाह जब दरबार से उठकर नहाने गया और नहाने लगा, तब वजीर ने कहा—हुजूर जौहरी आएगे तब में उस जरूरी काम मे लगा होऊगा। बेहतर होगा आप ही अपने पास इसे रखे और जौहरियो को दिखला ले।

बादशाह ने वह हीरा ले लिया और वही कही रख लिया।

वह नहाने लगा। बादशाह को क्या पता था कि हीरा मिश्री का हे और वह पानी लगने से गल जायेगा। वह नहाता रहा और पानी हीरे पर पडता रहा। नतीजा यह हुआ कि हीरा गल गया ओर बादशाह को पता ही न चला।

वादशाह स्नान करके अन्यत्र चला गया। उसे हीरे का खयाल न रहा। थोडी देर वाद जव उसे हीरा याद आया तो उसने स्नानगृह मे तलाश करवाया, पर हीरा नदारद था।

वादशाह ने नोकरो को डाटा–डपटा। उनकी चमडी उधडवा देने की धमकी दी, कोडे लगवाने का डर दिखाया। पर नतीजा कुछ न निकला। वेचारे नोकर हीरे के विषय मे क्या कहते! जव हीरा न मिला तो वादशाह ने वजीर को बुलवाकर पूछा–वजीर, तुम मुझे हीरा दे गये थे न?

वजीर– जी हा, जहापनाह, मैं आपके हाथ मे दे गया था ओर आपने स्नानघर मे अपने पास ही रख लिया था।

वादशाह–मुझे भी यही याद पडता हे। तुमने मुझे हीरा दिया ओर मैंने वही रख लिया। मैं नहाने लगा। नहाने के वाद म उसका खयाल भूल गया ओर वहा से चला आया। अव तलाश करवाया तो वह गायव हे। सिवाय नोकरो–चाकरो के स्नान–घर मे कोई जाता नही हे। साफ हे कि इन्ही मे से किसी की वदमाशी है। इनकी मरम्मत करो ओर हीरा निकलवाओ।

वजीर ने कहा–हीरा खाने की चीज तो हे नही जिसे कोई खा जायेगा। अगर कोई खा जायेगा तो मर जायेगा। इसके लिए मार–पीट करने से आपकी वदनामी होगी। वह परदेशी व्यापारी हे। सुनेगा तो देश–देशान्तर मे कहता फिरेगा कि इतने बडे वादशाह एक हीरा भी नही सम्भाल सके तो इतनी वडी सल्तनत को क्या खाक सम्भाल सकेगे! इससे आपकी नेकनामी मे धव्वा लगेगा। हीरा तो गया अव इज्जत क्यो जाने दी जाये? मेरी राय मे तो चुप रहना ही वेहतर हे।

वजीर की वात वादशाह समझ गया। उसने कहा– अच्छा इनकी तलाशी तो ले लो।

वजीर जानता था–हीरा पानी वन गया हे। उसने इधर–उधर की तलाशी ली जाकर वादशाह से वोला– अन्नदाता वहुत तलाश करने पर भी हीरे का पता नही चला। ऐसी वडी ओर वढिया चीज पर फरिश्ते भी आशिक हो जाया करते हे। मुमकिन हे कोई फरिश्ता ही उसे उडा ले गया हो। खेर हीरा गया सो गया। अव नोकरो को सख्त हिदायत कर दी जाये कि उसक गुम होने की खवर वाहर न पहुच सके। वादशाह की स्वीकृति से वजीर ने नोकरो को वुलाकर कहा–हीरा तुम्ही लोगो म गायव हुआ हे। फिर भी तुम्हे जहापनाह माफी वख्शते ह। मगर याद रखना हीरा गायव होने की खवर अगर वाहर गई तो सारा कसूर तुम्हारे ही सिर मढा जायगा ओर तुम्हारी खाल उतरवा ली जायगी।

सभी नौकर मन ही मन वजीर के पति कृतज्ञ हुए कि वजीर साहब ने आज हम लोगो को बचा लिया। इधर बादशाह वजीर के पति उपकृत थे कि हीरा तो चला ही गया था, वजीर ने बदनाम होने से बचा लिय– यह अच्छा हुआ। इसक बाद बादशाह ने कहा–हीरा तो गया अब वह व्यापारी आएगा तो क्या करना होगा ?

वजीर–व्यापारी आपको हीरा दे गया था। वह तो अपने हीरे की कीमत चाहेगा ही और उसे मिलनी भी चाहिए।

बादशाह – ठीक है, उसे पूरी कीमत मिलनी चाहिए।

दूसरे दिन जौहरी बना हुआ कारीगर फिर दरबार मे आया। वजीर ने उससे कहा–"तुम्हारा हीरा बादशाह सलामत को पसन्द आ गया है । अपने ईमान से उसकी कीमत बताओ।"

कारीगर–मै उस हीरे को ईरान, अफगानिस्तान, तुर्की आदि कई मुल्को मे ले गया हू। उसकी कीमत एक लाख पाच हजार लगी है। मै हिन्दुस्तान के बादशाह की बहुत तारीफ सुनकर यहा आया हू, कुछ अधिक पाने की उम्मीद से। अगर बादशाह सलामत इससे कम देगे तो मै इन्कार नही करूगा और अधिक देगे तो उनका बडप्पन समझूगा।

वजीर साहब की राय से एक लाख आठ हजार देना तय किया गया। कारीगर यह रकम लेकर खुशी–खुशी अपने घर चलता बना।

कारीगर फिर वजीर के घर पहुचा । उसने वजीर से कहा–इन रुपयो का क्या किया जाये ?

वजीर – यह रुपया तम्हारी कारीगरी से मिला है सो तुम्ही रखो।

कारीगर–' इसमे मेरा क्या है ? यह तो आपकी ही बुद्धिमत्ता और दया से मिला है। अन्त मे वजीर और कारीगर ने आपस मे कोई समझौता किया ओर रुपया रख लिया गया।

यह दृष्टान्त है। पुण्य की कारीगरी से बना हुआ यह मनुष्य–शरीर मिश्री के हीरे के समान हे। यह शरीर मिश्री के समान ही कच्चा है जरा से पानी से गल जाने वाला। चक्रवर्त्ती और वासुदेवो के शरीर भी गल गये तो दूसरो के शरीर की क्या चलाई है ? इसका गलना तो निश्चित है ही लेकिन किसी महात्मा रूपी वजीर के द्वारा परमात्मा की सेवा मे इसे समर्पित कर दिया जाये ओर वही जाकर गले तो कैसा अच्छा हो । अगर यह शरीर तप ओर शील की आराधना मे काम आए तो इससे अच्छा ओर क्या उपयोग हो सकता हे ? अतएव इस बात का विचार करो कि जो वस्तु तुम्हे प्राप्त हुई हे उसका सदुपयोग किस पकार किया जा सकता हे।

46 : कर्त्तव्य–पालन

एक सेठ थे, जिनका नाम मोतीलाल था। उनके दो पत्निया थी। एक बडी, दूसरी छोटी। छोटी ने विचार किया कि मै बडी सेठानी की मौजूदगी मे आई हूँ। इससे प्रगट है कि बडी ने पति की सेवा मे किसी प्रकार की कमी की है। ऐसा न होता, वह पति का मनोरजन करती रहती। पति की सेवा मे कोई त्रुटि न होने देती तो पति मुझे क्यो लाते? अतएव मुझे सावधान रहना चाहिए। मुझे ऐसा कुछ भी नही करना चाहिए, जिससे तीसरी के आने का अवसर उपस्थित हो।

छोटी सेठानी ने वडी सेठानी के कार्यों की देख–भाल की। बडी सेठानी एक मोटी–सी गद्दी पर बेठकर हाथ मे माला लेती ओर 'मोतीलाल सेठ, मोतीलाल सेठ'' कहकर अपने पति के नाम की माला जपा करती। यह देखकर छोटी ने सोचा–इस प्रकार पति का रजन होता तो मेरे आने का अवसर ही क्यो आता ? सेठजी को इससे सन्तोष नही हुआ इसलिए मुझे लाये हे। तब क्या मे भी बडी की भाति माला लेकर उनका नाम जपने बेठू? नही । मे तो सीधी–सादी एक बात करूगी। वह यह कि सेठजी के काम मे अपना काम । सेठजी की खुशी मे अपनी भी खुशी । जिस कार्य से सेठजी को प्रसन्नता होती हे, उसी से मे प्रसन्नता का अनुभव किया करूगी। इसके अतिरिक्त वे आज्ञा दे, उसे शिरोधार्य कर लेना। उनका काम पहले से ही कर रखना जिससे उन्हे कभी मेरा अपमान करने का मोका न मिले।

दोनो सेठानिया अपने–अपने तरीके से चलने लगी। एक दिन सेठ मोतीलाल जल्दी मे घबराये हुए से घर आये। दरवाजे के नजदीक पहुचते ही उन्होने पानी लाने के लिए पुकार की। उनकी पुकार सुनकर वडी सेठानी कहने लगी– न जाने इनकी केसी समझ हे? मे इन्ही के नाम की माला फेर रही हू आर यह स्वय उसमे विघ्न डाल रह हे। इतनी दूर चलकर आय ह

तो यही नही बनता कि दो कदम आगे चले आवे और हाथ से भर कर पानी पी ले। ऐसा तो करते नही और मुझ से कहते है—पानी लाओ, पानी लाओ। भला मै अपने जाप को कैसे खण्डित करू ?"

मन मे इस पकार कहकर बडी सेठानी अपने स्थान से न हिली और डुली और ज्यो की त्यो बैठी–बैठी माला सरकाती रही। उधर छोटी सेठानी आवाज सुनते ही दौडी और उसी समय पानी लेकर हाजिर हो गई।

सेठ ने छोटी सेठानी की तरफ नजर फैकी और पानी लेकर अपनी प्यास बुझाई। जैसे ही सेठ भीतर घुसा तो देखा बडी सेठानी बैठी उन्ही के नाम की माला जप रही है। बडी सेठानी ने सेठ को आते देखा तो अपना स्वर ऊचा कर दिया। अब वह तनिक जोर से "मोतीलाल सेठ,मोतीलाल सेठ" कहकर जाप करने लगी।

उधर छोटी सेठानी ने हाथ जोडकर प्रेम के साथ कहा—"भोजन तैयार है, पधारिये। भोजन का समय भी तो हो चुका है।"

आपके घर मे ऐसा हो तो आपका चित्त किस पर प्रसन्न होगा?

"छोटी पर ।"

पद्मिनी अपने "पिऊ" को नही भूलती, इसे स्पष्ट करने के लिए यह दृष्टान्त दिया गया है। इस दृष्टान्त मे दोनो स्त्रिया अपने पति को नही भूलती, पर दोनो मे से पति को प्रिय कौन होगी ?

'काम करने वाली ।"

ईश्वर के भजन मे भी यही बात है। ईश्वर का भजन करने वाले भी दो प्रकार के होते है। एक बडी सेठानी के समान ईश्वर के नाम की माला फेरने वाले और दूसरे ईश्वर की आज्ञा की आराधना करने वाले। इन दोनो भक्तो मे से ईश्वर किस पर प्रसन्न होगा ?

"आज्ञा की आराधना करने वाले पर ।"

मै यह नही कहता कि माला फेरना बुरा है, लेकिन इसका यह अर्थ नही है कि प्यास का मारा सेठ तो पानी की पुकार करे और सेठानी बैठी–बैठी उसी के नाम की माला जपे। क्या इस प्रकार की क्रिया विवेकशून्य नही है?

ईश्वर की आज्ञा की अवहेलना करके, उसके नाम की माला जप लेने मात्र से कल्याण नही हो सकता।

कदाचित् कोई यह कहने लगे कि मोतीलाल सेठ की बडी सेठानी यदि सचित्त पानी पिलाती तो उसे पाप लगता। इसी कारण उसने पानी नही पिलाया होगा। इस सम्बन्ध मे इतना ही समझ लेना पर्याप्त होगा कि जो इस

पाप से बचेगी, वह मोतीलाल जी की स्त्री भी न कहलाएगी। वह तो ससार-सम्बन्धी समस्त व्यवहारो से विमुख होकर आत्मकल्याण मे ही तत्पर रहेगी। जो उच्चतर स्थिति मे जा पहुचता हे, वह तो जगत् से नाता तोड लेता है और जगत् से नाता तोडकर भी सभी से नाता जोडता है अर्थात् वह सकुचित विचारो की परिधि से बाहर निकल जाता हे। सेठ के लिए वस्त्राभूषण पहनकर बनाव-सिगार करना, गाडी पर बैठना, सेठ के नौकरो पर हुक्म चलाना, ससार सम्बन्धी भोग-विलास करना, इन सबके लिये तो पाप का विचार न करे ओर सेठ के पानी मागने पर ही पाप के विचार से उसे पानी न देना निरी आत्म-वचना नही तो और क्या हे ? क्या यह धर्म का उपहास नही है?

47 : निष्काम सेवा

सच्चा सेवक वह है, जो स्वामी के कहने पर ही सेवा नही करता वरन् स्वामी पर ऐसी जिम्मेवारी डालता है कि उसे सेवा करानी ही पडे।

वन–गमन करते समय रामचन्द्र को नदी पार करने का काम पडा। आपकी दृष्टि मे तो नाव खेने वाला नीच है, लेकिन उसकी नाव मे बैठकर नदी पार करते समय वही नाविक कितना प्यारा लगता है, इसे कौन नही जानता ?

रामचन्द्र ने जाकर निषाद से कहा–भाई, हमे पार उतार दो। निषाद मन मे सोचने लगा–'यह मोहिनी मूर्ति कौन है ? कैसा यह पुरुष है, कैसी नारी है और क्या ही सौम्य उसका भाई है ।"

मन ही मन इस प्रकार सोच कर निषाद ने पूछा–'मैने सुना है, दशरथ के पुत्र रामचन्द्र वन को आये हैं। क्या तुम्ही तो राम नही हो?

राम–हा भाई, राम तो मै ही हू।

निषाद–मै इन्हे तो पार उतार दूगा, पर तुम्हे न उतारूगा।

राम–क्यो ? क्या हम इतने अधम हैं ।

निषाद–अधम तो नही हो, पर एक अवगुण तुम मे अवश्य है।

राम –वह कौन–सा?

निषाद–मैने सुना है, तुम्हारे पाव की धूल यदि पत्थर से लग जाती है तो वह पत्थर मनुष्य बन जाता है तो मेरी नाव तो लकडी की ही है। तुम्हारे पैर की धूल अगर इसे छू गई और यह भी मनुष्य बन गई तो मेरी मुसीबत हो जायेगी। मे कैसे कमा कर खाऊगा? तुम्हारे पैर मे रज तो लगी ही होगी और वह नाव से लगे बिना रहेगी नही। इसलिए मैं तुम्हे पार नही उतारूगा।

राम– तो क्या मै तैर कर नदी पार करू ? अगर बीच मे थक जाऊ तो डूब मरू?

निषाद– नही, तैर कर मत जाओ। जिसके पाव की रज से पत्थर भी मनुष्य बन जाता है, उसे डूबने कैसे दूगा ?

इतना कह कर निषाद ने लकडी की कठोती लाकर राम के आगे रख दी और बोला–अगर आप नाव पर चढकर पार जाना चाहते है तो इसमे पेर रख दीजिए। मै अपने हाथो से आपके पावो को धो लूगा और यह विश्वास कर लूगा कि आपके पावो मे धूल नही रही, तब नाव पर चढा कर पहुचा दूगा। हा, यह ध्यान रहे किसी को मैं आपके पैर न धोने दूगा। नही तो सम्भव है, रज रह जाये।

तुलसीदास की रामायण का यह वर्णन है। निषाद ये सब बाते इस मतलब से कह रहा था कि उसे रामचन्द्र की सेवा करनी थी और राम अपनी सेवा किसी से कराना नही चाहते थे। वे वनवासी थे, अतएव यथाशक्य स्वावलम्बी रहना चाहते थे। पर निषाद ने यह कहकर रामचन्द्र को पैर धुलाने के लिए विवश कर दिया। भक्तजन ऐसे ही उपायो से अपने स्वामी को सेवा कराने के लिए विवश कर देते हैं।

निषाद ने राम, लक्ष्मण और सीता, इन तीनो को बैठा कर बडे प्रेम से पाव धोये। इसके पश्चात् उसने उन्हे नाव मे बेठने को कहा। उसने सोचा–चलो, यह पानी भी बडे काम का है। इसमे वह रज है, जिससे पत्थर भी मनुष्य बन जाता है।

पैरो का वह धोवन (धोवण) लेकर निषाद अपने घर गया। उसने घर वालो से कहा–लो, यह चरणामृत ले लो। आज बडे पुण्य से यह मिला है। इस चरणामृत मे वह रज है जिससे पत्थर भी मनुष्य बन जाता है। पेट मे पहुच कर यह रज न जाने क्या गुण करेगी।

इधर राम ने सोचा–सेवाभक्ति किसे कहते हैं, यह लक्ष्मण को सिखाने का अच्छा अवसर हे जिससे लक्ष्मण का अभिमान समाप्त हो जाये। यह सोचकर रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा–देखो, निषाद क्या कर रहा हे ? हम लोगो को विलम्ब हो रहा हे।

रामचन्द्र के आदेश से लक्ष्मण निषाद के घर गये। वे निषाद से कहने लगे–भाई, चलो विलम्ब हो रहा हे।

निषाद ने कहा–अभी ठहरिये। हम प्रसाद बाट रहे हैं। जब सब ले लेगे तब आयेगे।

लक्ष्मण ने सोचा – में समझता था, रामचन्द्र का बडा भक्त मॅ ही हू पर निषाद ने मेरा अहकार चूर कर दिया। इसकी भक्ति के सामने तो मेरी भक्ति

नगण्य–सी हो जाती है। राम की सेवा करने मे मुझे कुछ आशा भी हो सकती हे पर निषाद को क्या आशा है ? भैया ने मुझे यहा भेजकर मेरी आखे खोल दी है। शायद उन्होने इसी उद्देश्य से मुझे यहा भेजा है। यहा आकर मैने जाना कि निषाद जो सेवा–भक्ति कर रहा है, मै उसका एक अश भी नही कर सकता।

निषाद आया। सीता, राम और लक्ष्मण उसकी नाव मे बैठकर नदी पार गये। रामचन्द्र निषाद के सोजन्य की पशसा करते जाते थे, पर निषाद अपनी पशसा की ओर ध्यान न देता हुआ भक्ति–रस मे डूब रहा था।

रामचन्द्र जी जब दूसरे किनारे पहुच गये, तब बडे सकट मे पडे। वे सोचने लगे–निषाद ने इतनी सेवा की है और बिना बदला दिये किसी की सेवा लेना उचित नही है। लेकिन इसे दे क्या ? क्षत्रियो का यह धर्म है कि सेवा का प्रतिफल अवश्य दे। मगर देने को कुछ भी नही है।

जब कोई देना चाहता है मगर पास मे कुछ न होने से दे नही सकता तब हृदय कितना सतप्त होता है, यह बात भुक्तभोगी ही भली–भाति समझ सकता है। रामचन्द्र ऐसी ही गहरी चिन्ता मे थे कि–

सिय पिय–हिय की जाननिहारी ।
मणि–मुदरी मन–मुदित उतारी ।।

सीता को अपने स्वामी के हृदय मे होने वाले सताप का पता चला। वे समझ गई कि पति इस समय सकट और सकोच मे है। पति यो तो सकटो से घबराने वाले नही है किन्तु यह सकट तो धर्मसकट है। जब सीताजी राम के साथ वनगमन के लिए तैयार हुई तो वे भी अपने सब आभूषण घर पर ही उतार आई थी सिर्फ एक अगूठी उगली मे रख ली थी । इस समय सीताजी ने बिना कहे–सुने ही अगूठी राम को सौप दी। रामचन्द्र सीता की प्रशसा करने लगे। पत्नी हो तो ऐसी हो।

आज तो पति भी अपना कर्त्तव्य भूले हुए है और पत्निया भी आभूषणो के लोभ मे पडकर अपना कर्त्तव्य बिसार बैठी है। मगर राम की यह कथा आज भी पति–पत्नी का आदर्श सामने उपस्थित करती है।

राम निषाद को वह अगूठी देते हुए बोले – भाई अपनी उतराई ले लो।

निषाद–उतराई देकर क्या आप मुझे जातिभ्रष्ट करना चाहते हे ?

राम–इससे जातिभ्रष्ट कैसे हो जाओगे

निषाद—अगर नाई नाई से वाल वनवाई के पेसे ले तो वह जाति से च्युत कर दिया जाता है। धोवी धोवी से धुलाई वसूल करे तो वह जाति से अलग कर दिया जाता हे। वे लोग अपने कुलो का काम करने वाले से मजदूरी नही लेते। फिर में आपसे केसे ले लू ? आपका ओर मेरा पेशा तो एक ही हे। जो काम में करता हूँ वही आप भी करते हें। ऐसी अवस्था मे में आपसे अपना पारिश्रमिक नही ले सकता । इससे तो मुझे जातिभ्रष्ट होना पडेगा।

राम—भाई, तुम्हारा ओर मेरा एक ही पेशा कैसे ? तुम्हारी वात ही कुछ निराले ढग की होती हे।

निषाद—मैं अपनी नाव मे वैठाकर नदी से पार उतारता हूँ ओर आप अपनी नोका पर चढाकर लोगो को ससार से पार उतारते हैं। पार उतारना दोनो का ही काम हे अगर मैं आप से उतराई ले लूगा तो फिर आप मुझे क्या पार करेगे ? हा, एक वात हो सकती हे। अगर आप वदला दिये विना नही रह सकते तो अच्छा—सा वदला दीजिए। मेंने आपको नदी से पार कर दिया है, आप मुझे भव—सागरो से पार कर दीजिए। वस, वदला हो जायेगा।

तात्पर्य यह हे कि सेवा करने वाले मे निष्कामता होनी चाहिए। जो सेवक निष्काम होता है, वेलाग रहता हे उनकी सेवा के वश मे सभी हो जाते हें, भले ही वह ईश्वर ही क्यो न हो । इसके विपरीत लालच के वश होकर सेवा करने वाले मे एक प्रकार की दीनता रहती हे। वह अपने आपको ओछा हीन ओर परमुखापेक्षी अनुभव करता हे। निष्काम भावना से सेवा भूषण वनती हे ओर कामना सेवा का दूषण वन जाती हे।

48 : ढ़ोंग

एक ठाकुर अपनी पत्नी की बहुत प्रशसा किया करता था। वह कहता—ससार मे सती स्त्रिया तो और भी मिल सकती है पर मेरी स्त्री जैसी सती दूसरी नही। कभी—कभी वह सीता, अजना आदि से अपनी स्त्री की तुलना करता और उसे उनसे भी श्रेष्ठ कहता। उसके मित्रो मे कई सच्चे समालोचक भी थे।

एक बार एक समालोचक ने कहा—ठाकुर साहब ! आप भोले है और स्त्री—चरित्र को जानते नही है। इसी कारण आप ऐसा कहते हैं। तिरिया—चरित को समझ लेना साधारण बात नही है।

ठाकुर ने अपना भोलापन नही समझा। वह अपनी पत्नी का बखान करता ही रहा। तब उस समालोचक ने कहा—कभी आपने परीक्षा की है या नही?

ठाकुर—परीक्षा करने की आवश्यकता ही नही है। मेरी स्त्री मुझसे इतना प्रेम करती है, जितना मछली पानी से प्रेम करती है। जैसे मछली पानी बिना जीवित नही रह सकती। उसी प्रकार मेरी स्त्री मेरे बिना जीवित नही रह सकती।

समालोचक—आपकी बातो से जाहिर होता है कि आप बहुत भोले हैं। आप जब परीक्षा करके देखेगे, तब सच्चाई मालूम होगी।

ठाकुर—अच्छी बात है। कहो किस तरह परीक्षा की जाये ?

समालोचक—आज आप अपनी स्त्री से कहिए कि मुझे पाच—सात दिन के लिए राजकीय काम से बाहर जाना है। यह कहकर आप बाहर चले जाना और छिप कर घर मे बेठे रहना। उस समय मालूम होगा कि आपकी स्त्री का आप पर केसा प्रेम है ! आप अपने पीछे ही स्त्री की परीक्षा कर सकते हे मोजूदगी मे नही।

ठाकुर ने अपने मित्र की वात मान ली। वह अपनी स्त्री के पास गया। उसने स्त्री से कहा–तुम्हे छोडने को जी नही चाहता मगर लाचारी हे। कुछ दिनो के लिए तुम्हे छोडकर वाहर जाना पडेगा। राजा का हुक्म माने विना छुटकारा नही।

ठकुरानी ने बहुत चिन्ता और आश्चर्य के साथ कहा–क्या हुक्म हुआ? कोन–सा हुक्म मानना पडेगा ?

ठाकुर–मुझे पाच–सात दिन के लिए वाहर जाना हे। जाऊगा।

ठकुरानी– आप राजा से कहकर किसी दूसरे को अपने बदले नही भेज सकते ?

ठाकुर–लेकिन ऐसा करना ठीक नही होगा। लोग कहेगे स्त्री के कहने मे लगा हे। मै यह कहूगा कि मुझसे स्त्री का प्रेम नही छूटता? ऐसा कहना तो बहुत बुरा होगा।

ठकुरानी–हा, ऐसा कहना तो ठीक नही होगा। खैर, जो होगा देखा जायेगा।

इतना कह कर ठकुरानी आसू बहाने लगी। उसने अपनी दासी से कहा–दासी, जा। कुछ खाने के लिए बना दे, जो साथ मे ले जाया जा सके।

ठकुरानी की मोह पैदा करने वाली बाते सुनकर ठाकुर सोचने लगा–मेरे ऊपर इसका कितना प्रेम है !

ठाकुर घोडी पर सवार होकर कोस दो कोस गया। घोडी को ठिकाने वाधकर वह लोट आया ओर छिपकर घर मे बेठ गया।

दिन व्यतीत हो गया। रात हो गई। ठकुरानी ने दासी से कहा– ठाकुर गया गाम म्हाने नी भावे धान। अभी रात ज्यादा हे। पास के अपने खेत से दस–पाच साठे ले आ जिससे रात व्यतीत हो। दासी ने सोचा–'ठीक हे। मुझे भी हिस्सा मिलेगा। वह गई ओर गन्ने तोड लाई। ठकुरानी गन्ना चूसने लगी।

ठाकुर छिपा–छिपा देख रहा था। उसने सोचा–मेरे वियोग के कारण इसे अन्न नही भाता। मुझ पर इसका कितना गाढा प्रेम हे !

ठकुरानी पहर रात तक गन्ना चूसती रही। गन्ना समाप्त हो जाने पर वह दासी से वोली–अभी रात वहुत हे। गन्ना चूसने से भूख लग गई हे। थोडे नरम–गरम वाफले ता वना डाल ! देख घी जरा अच्छा लगाना हा !

दासी न सोचा–चलो ठीक हे। मुझे भी मिलेगे। दासी ने वाफल वनाय आर खूब घी लगाया। ठकुरानी न वाफले खाए। खान क थाडी दर वाद वह

कहने लगी–दासी, बाफले तूने बनाये तो ठीक, पर मुझे कुछ अच्छे नही लगे। यह खाना कुछ भारी भी है। थोडी नरम–नरम खिचडी बना डाल।

दासी ने वही किया। खिचडी खाकर ठकुरानी बोली–तीन पहर रात बीत गई। अभी एक पहर और बाकी है। थोडी लाई (धानी) सेक ला। उसे चबाते–चबाते रात बिताये। दासी सेक लाई। ठकुरानी खाने लगी।

ठाकुर बैठा–बैठा सब देख सुन रहा था। वह सोचने लगा– पहली ही रात मे यह हाल है तो आगे क्या–क्या नही हो सकता ! अब इससे आगे परीक्षा न करना ही अच्छा है। यह सोचकर वह अपने घोडे के पास लौट आया। घोडे पर सवार होकर घर आ पहुचा।

दासी ने ठकुरानी को समाचार दिया–'होकम' पधार गए हैं। ठकुरानी ने कहा–'होकम' पधार गए है ! अच्छा हुआ।

ठाकुर से वह बोली–अच्छा हुआ, आप पधार गये। मेरी तकदीर अच्छी है। आखिर सच्चा प्रेम अपना प्रभाव दिखलाता ही है।

ठाकुर–तुम्हारी तकदीर अच्छी थी, इसी से मै आज बच गया। बडे सकट मे पड गया था।

ठकुरानी–ऐ! क्या सकट आ पडा था?

ठाकुर–घोडे के सामने एक भयकर साप आ गया था। मै आगे बढता तो साप मुझे काट खाता। मै पीछे की ओर भाग गया, इसी से बच गया।

ठकुरानी–आह ! साप कितना बडा था?

ठाकुर–अपने पास के खेत के गन्ने जितना बडा भयानक था।

ठकुरानी–यह फन तो नही फैलाता था?

ठाकुर–फन का क्या पूछना है! उसका फन बाफले जैसा बडा था!

ठकुरानी–वह दौडता भी था?

ठाकुर–हा, दौडता क्यो नही था! ऐसा दौडता था जैसे खिचडी मे घी।

ठाकर–हा ऐ से जोर का फुकार मारता था, जैसे कडेले मे पडी हुई धानी सेकने के समय फूटती है!

ठाकुर की बाते सुनकर ठकुरानी सोचने लगी–ये चारो बाते मुझ पर ही घटित हो रही है! फिर भी उसने कहा–चलो, मेरे भाग्य अच्छे थे कि आप उस नाग से बच कर घर लौट आये!

ठाकुर – ठकुरानी समझो। मै उस नाग से बच निकला मगर तुम सरीखी नागिन से बचना कठिन है।

ठकुरानी—क्या मैं नागिन हू? अरे बाप रे । मैं नागिन हो गई। भगवान् जानता है, सब देव जानते हैं। मैंने क्या किया, जो मुझे नागिन बनाते हो।

ठाकुर—मै नही बनाता, तुम स्वय बन रही हो । मैं अपने मित्रो के सामने तुम्हारी तारीफ बघारता था, लेकिन सब व्यर्थ हुआ ।

ठकुरानी—तो बताते क्यो नहीं, मैंने ऐसा क्या किया है? मै आपके बिना जी नही सकती और आप लाछन लगा रहे हैं।

ठाकुर—बस रहने दो। मै अब वह नहीं, जो तुम्हारी मीठी बातो मे आ जाऊ। तुम मुझसे कहा करती थी—तुम्हारे वियोग मे मुझे खाना नहीं भाता और रात भर खाने का कचूमर निकाल दिया।

ठकुरानी की पोल खुल गई। साराश यह है कि ससार मे इस ठकुरानी के समान पति से कपट करने वाली स्त्रिया भी हैं। पति के प्रति निष्कपट भाव से अनन्य प्रेम रखने वाली स्त्रिया भी मिल सकती है और मायाविनी भी है। प्रश्न यह है कि हमे क्या ग्रहण करना चाहिए? किसको अपनाने से हमारा जीवन उन्नत और पवित्र बन सकता है?

49 : समभाव

सामायिक को समझने वाला एक परिवार था। ऐसे परिवार के बालको मे सहज ही धर्म के सस्कार पड जाते है। उस परिवार मे जन्मी हुई एक कन्या का विवाह हुआ। उस लडकी की रग–रग मे धर्म की भावना भरी थी। वह समझती थी कि मुझे विवाह आदि सासारिक कृत्य तो करने ही पडते है, लेकिन यह ससार सदा साथ देने वाला नही है। साथ देने वाला तो एक मात्र धर्म ही है।

विवाह के बाद लडकी ससुराल गई। उसने देखा–मेरे ससुराल के सब लोग उदास है। उसने सोचा– और घरो मे नई बहू आने पर प्रसन्नता का पार नही रहता लेकिन इस घर मे मेरे आने पर उदासी छाई है। इस उदासी का क्या कारण होगा ? मे अब इस घर की सदस्या हो गई हू। मेरा कर्त्तव्य है कि घर वालो के सुख–दु ख को जानू ओर दु ख हो तो उसे दूर करने का यथाशक्ति प्रयत्न करू। ऐसा विचार कर उसने अपने साथ की दासी से कहा–सासजी से पूछो कि आज घर मे किस बात का दु ख है ? दासी गई और कारण पूछा।

सास समझदार थी। उसने सोचा–हम तो दु खी हे ही, नई आई बहू को क्यो दु खी करे ? यह सोचकर उसने दासी से कहा–बहू से कह दो कि तुम्हारी ओर का कोई दु ख नही है। दु ख का कारण तो और ही हे। तुम अभी यह जानकर चिन्ता मे क्यो पडती हो ? अगर तुम जान भी गई तो कुछ प्रतिकार नही होगा। इसलिए हमारा दु ख हम ही को भोगने दो।

वह स्वार्थी स्वभाव की नही थी। उसने यह नही सोचा कि अपनी ओर का दु ख नही हे। वस चलो छुट्टी पाई। अब हमे चिन्ता करने का क्या प्रयोजन हे ? बहू ने दासी को भेजकर फिर कहलाया–अगर कहने से कुछ नही होता तो इस तरह रोने से भी कुछ नही होता। रोने से दु ख मिटता नही

हे, प्रत्युत वढता हे। आखिर कहिए तो सही दु ख क्या हे ? कोन जाने, कोई उपाय निकल आए।

सास ने समझा—यह वहू कुछ ओर तरह की मालूम होती हे। आखिरकार धर्मात्मा के घर की बेटी है। वह स्वय बहू के पास आई ओर वोली—ओर कुछ दु ख नही है। इस मोहल्ले मे एक वुढिया रहती हे। उसका स्वभाव वडा लडाईखोर हे। वह चाहे जव, चाहे जिससे लडती थी। इसलिए यह ठहरा दिया है कि वह नित्य एक घर से लड लिया करे। सयोगवश आज अपने घर की बारी हे। आज ही तुम आई हो और आज ही वह न जाने क्या—क्या बकेगी। इसी विचार के कारण उदासी छाई हुई है।

सास की बात सुनकर बहू ने कहा—इस जरा सी वात के लिए इतनी भारी चिन्ता। आप सबने उसकी आदत बिगाड दी है नही तो वे माजी क्यो लडती? आप न लडने का उपाय करती तो वे लडना छोड देती। आज लडाई का सब काम मुझे सोप दीजिए। मै सब ठीक कर लूगी। मै इसका मत्र जानती हू।

सास ने कहा—'भले ही। मगर होशियार रहना। तुम नई आई हो ओर वह वडी लडने वाली है। उससे कोई जीत नही पाता।' बहू बोली— चिन्ता न कीजिए।'

बहू घर के दरवाजे मे बिछौना डालकर बेठ गई। उधर बुढिया ने सोचा—आज लडाई का अच्छा मोका हे। आज ही नई वहू आई हे ओर आज ही उस घर से लडने की बारी आई हे। उसने यह भी सुना हे कि नई बहू ही उससे लडने को तैयार हुई हे। यह सुनकर उसे ओर भी खुशी हुई। वह खान—पान से निवृत्त होकर हाथ मे लकडी ले वहा आ पहुची। आते ही उसने कहा—तू केसे गये—वीते घराने की हे कि इस तरह दरवाजे मे बेठकर मुझ वुढिया से लडने को तेयार हुई हे।

वहू को इस बात पर सहज ही क्रोध आ सकता था मगर बहू सामायिक को जानती थी। उसे क्रोध नही आया। उसने यह भी नही कहा कि लडने मे आई हूँ या तू आई हे ? उसने कुछ नही कहा तव बुढिया कहने लगी—राड अव वोलती भी नही हे । केसी चुप्पी मार कर वेठ रही हे । लेकिन वह हसती—हसती सुनती ही रही। तव वुढिया चिल्लाई—यह वशर्म हस रही ह। वडी निर्लज्ज ह । फिर भी वह कुछ न वोली। जव वुढिया धीमी पडती तव वह खास कर फिर हस देती। वुढिया का पारा फिर गर्म हा उठता। शाम तक यही क्रम चलता रहा। जव शाम हा गई तो दासी न कहा – जीमन का

समय हो गया है। रात होने को है। चलकर जीम लो। बहू ने कहा—यही भोजन ले आओ। यही जीम लेगे।

दासी भोजन ले आई। बहू ने बुढिया को भोजन की ओर इशारा करके कहा—आओ माजी, भोजन कर ले। बहू का इतना कहना था कि बुढिया गरज उठी—मै क्या भूखी मरती हू! क्या मुझे कुत्ती समझा है!

बहू ने धीमे से कहा— मनुहार करना मेरा काम था, सो मैने कर लिया। जीमना, न जीमना आपकी मर्जी की बात है।

बहू भोजन करने लगी। बुढिया बोली—कितनी बेशर्म है यह चण्डी कि मेरे सामने ही खा रही है ! इस प्रकार वह बडबडाती रही। बडबडाते उसकी आते चढ गई। वह बेहोश होकर गिर पडी। बहू ने उसी समय दासी को बुलाया और बुढिया को भीतर ले लेने को कहा। दोनो ने मिलकर उसे उठा लिया और घर के भीतर ले गई। पानी छिडका। बुढिया फिर होश मे आ गई। तब बहू ने पूछा—सासजी, अब आपकी तबीयत ठीक है न? आपका यह वृद्ध शरीर और इतना ज्यादा कष्ट उठाना पडा ! अगर मैंने सम्भाला न होता तो न जाने क्या होता? अब आप क्रोध मत किया करो—आज मैने जो उपाय किया है, वह मुहल्ले के सब लोग जान गये है। आप इसी तरह लडती रही तो वर्ष भर के बदले छह माह मे ही मर जाओगी। मरने के बाद न जाने कौन—सी गति मिलेगी। इसलिए अपनी सेवा का सौभाग्य मुझे दो। एक सास के बदले दो सास की सेवा कर के मुझे दुगुनी प्रसन्नता होगी।

बुढिया की आखे खुल गई। उसने सोचा—यह बहू कुछ और ही तरह की है। उसने कहा—बहू ! तू ठीक कहती है। भला मैं अकेली कब तक लड सकती हू ! सामने लडने वाला हो तो जोश भी आता है और विश्राम भी मिल जाता है। इस तरह जोश बढा कर ही लोगो ने मुझे लडना सिखाया है।

बहू की ऐसी मधुर बाते सुनकर बुढिया को शाति मिली। वह उसी के घर रहने लगी। बहू ने उसकी तन—मन से सेवा की। बुढिया ने बहू को अपने धन की स्वामिनी बना दिया। सब जगह बहू की तारीफ होने लगी। झगडे के समय लोग उसे मध्यस्थ बनाने लगे। मुहल्ले की अशान्ति मिटी और शान्ति का वातावरण फैल गया।

बहू सामायिक मे नही बैठी थी परन्तु फिर भी उसने सामायिक का फल पाया या नही ? इस प्रकार कही भी, किसी भी अवस्था मे समभाव रखने से सामायिक का फल अवश्य प्राप्त होता है।

50 : लेश्या

जैन शास्त्रो मे मानसिक भावो के लिए लेश्या का निरूपण किया गया है और उनकी शुद्धता–अशुद्धता को देख कर विशिष्ट ज्ञानियो ने उनके कृष्ण, नील आदि छह भेद भी बताये हैं। उत्तराध्ययन और प्रज्ञापना सूत्र मे लेश्याओ का विस्तृत वर्णन पाया जाता है । वहा उनके वर्ण, गन्ध, रस आदि का भी निरूपण किया गया है।

जिसके मन मे जैसे विचार होते है, वैसे ही परमाणु उसमे आ चिपटते है। जिसके मन मे किसी की हत्या के भाव होगे तो भद्दे पुद्गल आ चिपटेगे। तात्पर्य यह है कि खोटे परिणाम होने पर रग भी खोटा हो जाता है।

विज्ञान की अनेक उपयोगी बाते जैन शास्त्रो मे पहले ही बतला दी गई हैं, लेकिन आज वे बाते शास्त्रो के पन्नो मे ही पडी हुई हैं। यह हम लोगो की कमजोरी या उपेक्षा है। आज धर्म–शास्त्र को गहराई से अध्ययन करने वाले और साथ ही विज्ञान के पारगत पडित हमारे यहा नही है। अतएव उन सब शास्त्रीय बातो पर यथेष्ट वैज्ञानिक प्रकाश नही पडता।

लेश्याए छह है – (1) कृष्ण (2) नील (3) कपोत (4) पीत (5) पद्म (6) शुक्ल । इनमे से जब कोई मनुष्य कृष्ण लेश्या को त्याग कर नील लेश्या मे आता है, तब शास्त्रकारो के कथनानुसार वह कपोत लेश्या की अपेक्षा अधिक अशुद्ध है मगर कृष्ण लेश्या की अपेक्षाकृत अधिक उदारता और शुभ विचार आ गये हें। लेश्या के परिणामो की तारतम्यता समझाने के लिए एक उदाहरण इस प्रकार हे–

छह आदमी साथ जा रहे थे। उन्हे भूख लगी तो वे इधर–उधर दृष्टि दौडाने लगे । उन्हे एक फला हुआ आम का वृक्ष दिखाई दिया। सब ने आम खाने का निश्चय किया । यहा तक सबके विचारो मे समानता हे, मगर आगे उनके विचारो मे अन्तर पडता जाता हे। छहो मे इस प्रकार वार्तालाप होने लगा।

पहले ने कहा–अपने पास कुल्हाडी भी है और हम इतने आदमी भी हैं कि दो–दो हाथ मारते ही आम का पेड कटकर गिर जायेगा। तब हम लोग मनचाहे आम खा लेगे।

थोडे से आम खाने है मगर परम्परा तक वृक्ष काट गिराने से कितनी हानि होगी, इस बात का विचार इस आदमी को नही है।

दूसरे आदमी ने कहा–यह वृक्ष न जाने कितने दिन मे लगकर तैयार हुआ है, अतएव इसे काट डालना ठीक नही है। पेड तो हम लोगो को खाना नही है, आम खाने है। आम मोटी–मोटी डालिया काटने से भी मिल सकते है। इसलिए ये डालिया काट लेनी चाहिए।

तीसरे आदमी ने कहा–पहले आदमी की अपेक्षा तुम्हारा कहना ठीक है, लेकिन वास्तव मे तुम्हारा कहना भी ठीक नही। बडी–बडी डालिया काटने से लकडियो और पत्तो का ढेर लग जायेगा।

आम छोटी–छोटी डालियो मे लगे हैं, इसलिए छोटी डालिया ही काटनी चाहिए। इससे लकडियो और पत्तो का ढेर भी नही लगेगा और अगले वर्ष वे डालिया फिर फूट निकलेगी।

चौथे ने कहा–तुम्हारी बात भी ठीक नही जचती। छोटी–छोटी डालिया काटने से भी लकडी व पत्तो का ढेर हो जायेगा और दूसरो को लाभ न पहुचेगा। हमे फल खाने से मतलब है, इसलिए फलो के गुच्छे ही तोड लो।

पाचवे ने कहा–यह भी स्वार्थबुद्धि की बात है। फल खाना क्या तुम्ही जानते हो, दूसरे नही ? अगर तुम्हारी ही तरह पहले आने वालो ने विचार किया होता, सब कच्चे –पके फल तोड लिए होते तो आज तुम्हे ये फल कहा से मिलते ? इसलिए कच्चे आम रहने दो। पके–पके आम तोड लो।

छठे ने कहा–औरो से तुमने ठीक कहा है, पर आम का यह वृक्ष बडा है। इसमे पके फल बहुत अधिक है । हम लोग सभी फल नही खा सकेगे। फिर सब पके फल तोडने से क्या लाभ है ? तुम लोग जितने फल खा सको उतने ले लो। उससे अधिक लेने का तुम्हे क्या अधिकार है ? आम का वृक्ष प्रकृति से ही इतना उदार है कि वह पके फल अपने ऊपर नही रखता सर्वसाधारण के उपभोग के लिए उन्हे त्याग देता है। सो तुम नीचे गिरे हुए पके फलो से ही काम चला सकते हो। अधिक फल बिगाडने से क्या लाभ हे?

यहा छहो आदमियो के विचार आम खाने के होने पर भी छह प्रकार के विचार हुए। इसी प्रकार ससार के मनुष्य भी छह प्रकार के होते हैं। कई

अपने आराम के लिए दूसरो की जड काट देते है ओर कई दूसरो को हानि न पहुचाते हुए अपनी जीविका का निर्वाह कर लेते हैं। अपने थोडे से स्वार्थ के लिए महाआरम्भ करना और दूसरो को हानि पहुचाना ही कृष्ण लेश्या है। इसके पश्चात् ज्यो–ज्यो आरम्भ कम होगा, दूसरे की दया होगी, हृदय मे उदारता होगी, त्यो–त्यो लेश्या भी शुद्ध होती जाएगी। कृष्ण लेश्या से निकलने पर नील लेश्या, और नील लेश्या से निकलने पर कपोत लेश्या होती है। कपोत लेश्या से ऊचे उठने पर तेजो (पीत) लेश्या, तेजो लेश्या से पद्म लेश्या और पद्म लेश्या से भी ऊपर शुक्ल लेश्या होती है। तेजो लेश्या से धार्मिकता आरम्भ होती है। इन लेश्याओ के भी अवान्तर भेद अनेक हैं, परन्तु मुख्य भेद यही है। लेश्याओ का यह वर्णन सुनकर आप अपनी कसौटी कीजिए। देखिए, आप किस लेश्या मे है और किस प्रकार शुद्धता बढाकर आत्मशुद्धि प्राप्त करनी चाहिए।

51 : जीते जी पुनर्जन्म

एक साहसी और चतुर चोर ने एक बार राजा के महल मे प्रवेश किया। चोर के प्रवेश होते ही सयोगवश राजा जाग उठा। राजा को जगा देख कर चोर सिर से पैर तक काप उठा। उसने सोचा–पकड मे आ गया तो मारा जाऊगा। कही छिपने की जगह न देख कर वह सिर पर पैर रख कर भागा। राजा ने भी चोर को देख लिया था। राजा ने विचार किया कि मै चोर को न पकड सका तो मेरी बडी बदनामी होगी। सिपाहियो को आवाज देने, बुलाने और समझाने का समय नही था। अतएव राजा ने स्वय चोर का पीछा किया। आगे–आगे चोर और पीछे–पीछे राजा दौडा जा रहा था।

राजा को चोर का पीछा करते देख सिपाही भी दौडे। अपने पीछे राजा को और सिपाहियो को दौडते देख चोर की हिम्मत जाती रही। मगर पकड मे आते ही प्राणो से हाथ धोना पडेगा, इस विचार से वह रुक नही सका। कुछ और आगे भागा। मगर उसके पैरो ने जवाब दे दिया। इतने मे ही श्मशान आ गया। चोर ने सोचा–अब प्राण बचना कठिन है, फिर भी अन्त तक बचने का प्रयास तो करना ही चाहिए। अगर इस श्मशान मे मैं मुर्दे की तरह पडा रहू तो सम्भव है राजा मुझे मरा समझ कर छोड दे। बस, बचाव का एक ही उपाय है कि मुर्दे का स्वाग बना लू।

चोर श्मशान मे जाकर पड गया। मृतक की भाति अपनी नाडियो को सकुचित करके उसने ऐसा दिखावा किया, मानो वह सचमुच ही मर गया हो। इतने मे राजा और सिपाही भी वहा पहुचे। चोर को जमीन पर पडा देख सिपाहियो ने कहा–महाराज, देखिए तो सही, चोर आपके डर से गिर पडा और मर गया है। राजा ने कहा–अच्छी तरह जाच करो। यह मरा नही होगा, ढोग कर रहा होगा।

सिपाही चोर को इधर–उधर लुढकाने लगे, पर वह तो ठीक मुर्दे की तरह निश्चेष्ट ही बना रहा।

आपत्ति मनुष्य को अपूर्व शिक्षा देती है ओर वहुत बार उन्नत भी बनाती है। राम को बनवास न करना पडा होता तो उन्हे कौन जानता? भगवान् महावीर ने आपत्तिया सहन न की होती तो उनका नाम कौन लेता ? कैसे उनकी उन्नति होती ?

राजा को विश्वास नही हुआ कि चोर वास्तव मे मर गया है। उसने सिपाहियो से कहा–अच्छी तरह जाच करो, कपट करके पडा होगा।

सिपाहियो ने उसे मारना–पीटना शुरू किया तो चोर के शरीर से लहू बहने लगा। फिर भी उसने जरा भी चू–चा नही की, तनिक भी नही कराहा, चुपचाप पडा रहा।

राजा ने कहा – है पक्का ! इतनी मार खाने पर भी चुपचाप पडा है! मर जाने का ढोग करता है और हमारी आखो मे धूल झोकना चाहता है! मर गया होता तो लहू कैसे निकलता ? मरे शरीर से लहू निकलता ही नही है।

इसके बाद राजा ने एक सिपाही को बुलाकर कहा–धीरे से उसके कान मे कह दो कि राजा ने तेरा अपराध क्षमा कर दिया है। ढोग करके वृथा क्यो मार खाता है ?

अपने अपराध को क्षमा करने की बात सुनते ही चोर उठ खडा हुआ और हाथ जोडकर राजा के सामने पहुचा। उस समय राजा अपने मन मे सोच रहा था–'यह चोर मेरे भय से मुर्दा बन गया तो मुझे साक्षात् मृत्यु के भय से क्या करना चाहिए ? इस प्रकार विचार करके राजा ने चोर से पूछा–तू मुर्दा सरीखा बन कर क्यो पडा था ?

चोर–अन्नदाता, आपके भय से ही मैंने ऐसा किया था।

राजा–इतनी मार खाने के बाद भी तू बोला क्यो नही ?

चोर–जब मेने मुर्दा बन जाने का ढोग किया था तो केसे बोलता ?

राजा–तब तो बडा भक्त मालूम होता हे ?

चोर–महाराज, मे भक्त नही हू। मेने आपके भय से ही मुर्दे का स्वाग बनाया था।

राजा–जेसे मेरे डर से तू जमीन पर पड गया था, वेसे ससार के भय से डरे ओर पूरा स्वाग बनावे तो तेरा कल्याण हो जाए !

चोर–दयानिधान, मैं ऐसी बाते नही जानता। ऐसा ज्ञान मुझे नही हे, आपको ही हे।

राजा–ज्ञान तो आत्मा मे वहुत हे पर उसे प्रकट करने के लिए जीवन नीतिमय और धर्मयुक्त होना चाहिए। मैंने तेरा यह अपराध क्षमा कर दिया हे,

मगर यह जानना चाहता हूँ कि अब तेरा क्या विचार है? इस पापमय आजीविका का त्याग करना है या नही ?

चोर–इस प्रश्न की आवश्यकता ही नही रही महाराज, चोर के रूप मे तो मै तभी मर चुका, जब मैंने मुर्दे का स्वाग बनाया था। अब आपके सामने एक गरीब भला–मानस खडा है। मै रूखी–सूखी खाकर अपना गुजर–बसर कर लूगा, पर अनीति का धन्धा नही करूगा। आपने क्षमादण्ड देकर मेरा जीवन बदल दिया है। मैंने आज नया जन्म धारण किया है।

क्षमा, दया और सहानुभूति के कोमल शस्त्रो की मार गजब की होती है।

52 : निरन्वय नाश

एक मनुष्य ने दूसरे मनुष्य पर अदालत मे दीवानी दावा किया। वादी और प्रतिवादी अदालत मे उपस्थित हुए। वादी को प्रतिवादी से कुछ रकम लेनी थी, जो उसने कर्ज के रूप मे प्रतिवादी को दी थी। प्रतिवादी पहले तो टालमटूल करता रहा, कल दूगा, परसो दूगा, सुबह दूगा आदि मगर उसने अन्त मे देने से इन्कार कर दिया। तब वादी को विवश होकर दावा करना पडा। जब दोनो अदालत मे उपस्थित हुए और न्यायाधीश ने प्रतिवादी से पूछा—क्या तुम यह रकम देना स्वीकार करते हो ? तब वह बोला—वादी का दावा झूठा है। इसने मुझे कोई रकम नही दी और मैने इससे कोई रकम नही ली हे।

प्रतिवादी के द्वारा उपस्थित किया हुआ लेख—पत्र न्यायाधीश के सामने था। उसने पूछा—इस कागज पर तुम्हारे हस्ताक्षर है। इसमे कर्ज लेना स्वीकार किया गया हे। क्या यह झूठा है।

प्रतिवादी—ससार के सभी पदार्थ नाशवान है। क्षण—क्षण नष्ट होते जाते है। आत्मा भी नाशशील हे। जो पहले क्षण मे हे, वह दूसरे क्षण मे नही रहता। ऐसी स्थिति से देने वाला ओर लेने वाला—दोनो ही अब नही रहे। जिसने दिया था, वह देते ही नष्ट हो गया ओर जिसने लिया था, वह लेते ही समाप्त हो चुका। अब मै यह रकम क्यो चुकाऊ?

न्यायाधीश महोदय ने सोचा—यह मनुष्य दार्शनिक मान्यताओ के वहाने दूसरे की रकम पचा लेना चाहता हे। इसे सही शिक्षा मिलनी चाहिए। यह सोचकर उसने पूछा—तुम किस मकान मे रहते हो ?

प्रतिवादी—मेरा निजी मकान हे।

न्याया॰—उसे कब बनवाया था ?

प्रतिवादी—लगभग दस वर्ष पहले।

न्याया॰–(वादी से) तुम इनके मकान पर अपना अधिकार कर लो। उस मकान का मालिक यह नही है। जिसने उसे बनवाया था वह बनवाते ही नष्ट हो गया है। वह अब नही रहा। इसने दूसरे के मकान पर कब्जा कर रखा है।

पतिवादी यह सुनकर घबराया। उसने दीनता दिखलाते हुए कहा–हुजूर ऐसा मत कीजिए। जो रकम उनकी देनी है वह मै अभी अदालत मे ही चुका देता हू।

न्यायाधीश–ठीक है अभी गिनकर दे दो।

पतिवादी ने लाचार होकर सारी रकम चुकता कर दी। तब न्यायाधीश ने वादी से कहा–अब उस मकान पर कब्जा सरकार का रहेगा।

पतिवादी भौचक्का होकर रह गया। न्यायाधीश ने मुस्कुराते हुए कहा–जिसने रकम चुकाई वह दूसरा था। तुम दूसरे हो। आत्मा तो क्षण–क्षण मे बदलती रहती है न ? इसलिए उस मकान को बनवाने वाले तुम नही हो, कोई भी जीवित नही है। इसलिए वह मकान सरकार का होगा। यही नही, तुम्हारी पत्नी और सन्तान छीन ली जायेगी, क्योकि तुम जो इसी वक्त नये उत्पन्न हुए हो उसके पति या पिता नही हो।

पतिवादी की अक्ल ठिकाने आ गई। उसने गिडगिडाते हुए क्षमा मागी और पतिज्ञा की–अब किसी को दर्शनशास्त्र के नाम पर ठगने की कोशिश नही करुगा।

आत्मा का निरन्वय नाश मान लिया जाये तो ससार का व्यवहार एक क्षण मे भी नही चल सकता।

53 : मां–बाप सावधान

एक विधवा बुढिया को अपना इकलोता लडका बहुत प्यारा था। अपने भविष्य की उससे बडी आशाए थी। वह समझती थी कि मेरे पति के वश मे वही एकमात्र आशा की किरण हे। विधवा का वह पुत्र बडा लाडला था। उस पर किसी का दबाव नही था इस कारण वह स्वच्छन्द हो गया।

एक दिन वह किसी दुकानदार के यहा पहुचा। दुकानदार ऊघ रहा था। मोका पाकर वह कुछ पेसे चुरा लाया। घर आकर उसने वे पेसे अपनी मा को दे दिये। मा पेसे देखकर बहुत राजी हुई ओर पूछने लगी–ये पेसे कहा से लाया हे ? लडके ने सच–सच बता दिया। मा ने कहा–ठीक किया ओर उसे चोरी करने के इनामस्वरूप मे कुछ बतासे दिये।

लडके की प्रसन्नता का पार न रहा। उसने मन मे सोचा–मा को मेरा यह काम पसन्द आया हे। इसलिए तो मुझे उसने इनाम दिया हे। धीरे धीर वह ज्यादा चोरी करने लगा। वह जेसे–जेसे बडा होता गया वेसे–वेसे बडी चोरिया करने लगा।

पाप का घडा जब भर जाता हे तो फूटे बिना नही रहता। इस कहावत के अनुसार वह लडका एक दिन चोरी करते पकडा गया। एक चोरी पकडी गई तो कई चोरियो का भेद खुल गया। राजा ने विचार किया–यह बचपन से ही चोरी करता आया हे। इसने बहुत बार चोरी की हे। चोरी करना इसकी आदत मे शामिल हे आर यही इसका धन्धा हे। इसे फासी की सजा मिलनी चाहिए।

राजा ने फासी की सजा सुना दी । जल्लाद उसे फासी देने क लिए ल चल। तमाशा दखन के लिए बहुत स लाग इकट्ठे हो गये। लडका सोचन लगा – म पहल चोर नही था। मर कुल मे चोरी का धन्धा नही होता था। फिर यह आदत मुझम कहा स आ गई ? यह सोचत–सोचत अपन जीवन की

पिछली सारी घटनाए उसकी आखो के आगे नाचने लगी । उसे याद आया– पहले–पहले मैंने दुकानदार के पैसे चुराए थे और मा ने मुझे बतासे इनाम दिये थे। इस इनाम ने ही मुझे चोर बना दिया। मेरी मा ने अगर मेरा उत्साह न बढाया होता और चोरी करने के कारण मेरे गाल पर तमाचा जड दिया होता तो आज मुझे फासी के तख्ते पर चढने की नौबत नही आती।

फासी देने से पहले नियमानुसार उससे पूछा गया–"कुछ कहना चाहते हो ? किसी से मिलने की इच्छा है?" चोर ने कहा–'मै अपनी मा से मिलना चाहता हू।'

सिपाही उसकी मा के पास गया। सूचना दी–तुम्हारे बेटे को फासी दी जा रही है। अन्तिम समय मे वह तुमसे मिलना चाहता है। मा सिपाही के पीछे–पीछे चली। वह चिल्लाती जा रही थी–'हाय बेटा! मैने तुझे कितना समझाया कि चोरी मत कर। परन्तु तूने एक न मानी!' वह जब लडके के पास पहुची, तब भी यह कह कर रोने–चीखने लगी।

उधर लडके ने सोचा– मा जले पर नमक छिडक रही है। इसी ने मुझे चोर बनाया है और यही अब ऐसा कहती है ? पश्चात्ताप और क्रोध से वह पागल हो उठा। क्रोध ही क्रोध मे वह मा के पास पहुचा। उस समय उसके पास कोई शस्त्र नही था अतएव अपने दातो से ही उसने मा की नाक काट ली। मा चिल्लाने लगी– हाय ! मार डाला ! कैसा पापी लडका है कि आप फासी पर लटकने जा रहा है और ऐसे समय भी मुझे कष्ट दे रहा है ! इसके गुण फासी चढने लायक ही है।

वहा जो राजकर्मचारी उपस्थित थे, यह दृश्य देखकर हैरान हो गये। उन्होने चोर से पूछा–तूने अपनी माता की नाक क्यो काटी ? चोर ने कहा–'बस, रहने दीजिए। आप कारण न पूछिए। अब मेरी कोई इच्छा नही रह गई। फासी देना हो तो दे दीजिए।'

राजकर्मचारी ने सोचा–इस घटना के पीछे कोई बडा रहस्य अवश्य होना चाहिए। उन्होने उसे फिर राजा के सामने पेश किया और सारा हाल सुनाया। तब राजा ने चोर से पूछा–ठीक–ठीक कहो, तुमने अपनी माता की नाक क्यो काटी ?

पहले के लोग राजा और परमात्मा को समान समझते थे। इस कारण वे प्राय राजा के सामने झूठ नही बोला करते थे। मगर आज तो सबसे अधिक झूठ कचहरियो मे ही बोला जाता है।

चोर ने राजा से कहा–'महाराज, मै चोर नहीं था, मेरे बाप–दादे भी चोर नही थे । अपने पुरखाओ से मुझे चोरी करने के सस्कार नहीं मिले। फिर भी मैं चोर बन गया और आज फासी के तख्ते पर चढाया जा रहा हू । इसका कारण यह है कि छुटपन मे नासमझी के कारण मैं एक दिन कुछ पैसे चुरा लाया था। पैसे मैंने अपनी मा को दिये। मा ने मुझे चोरी करने के लिए दण्ड देने के बदले इनाम दिया। इसी कारण मै धीरे–धीरे चोर बन गया। मैंने सोचा–जब चोरी करने के अपराध मे मुझे फासी मिल रही हे तो चोर बनाने के अपराध मे मेरी माता को भी दण्ड मिलना चाहिए। दूसरी माताओ को इससे शिक्षा मिलेगी और वे अपने बेटो को चोर नही बनाएगी।'

चोर की बात सुनकर राजा ने सोचा–इसे अपने किये पर पश्चात्ताप है। चोरी के दुष्परिणाम का इसे भान भी हो गया। यह अब सुधर गया है और दण्ड देने का प्रयोजन अपराधी का सुधार करना ही है। ऐसी हालत मे इसे प्राणदण्ड देने की आवश्यकता नही है। फिर राजा ने उससे कहा– 'मै समझता हू कि तुमने चोरी की बुराई समझ ली है और आगे कभी चोरी नही करोगे। तुम्हे अपने अपराध का गहरा पश्चात्ताप हो रहा है। अत मै तुम्हे फासी की सजा से मुक्त करता हूँ।'

माता–पिता, सावधान । आप कभी अपनी सन्तान के किसी दुष्कर्म का, किसी बुरी आदत का समर्थन तो नहीं करते?

54 : विवेकहीनता

जब मनुष्य के निज का विवेक न हो तो उसे दूसरे से विवेक सीखना चाहिए। ऐसा करते–करते वह एक दिन स्वय विवेकवान् बन जाता है, कम से कम हानि से तो बच ही जाता है। पर बहुत बार ऐसा होता है कि मनुष्य स्वय अविवेकी होते हुए भी अपने को अविवेकी नही मानता। यह अविवेक की पराकाष्ठा है। ऐसी स्थिति मे वह ऐसे काम कर बैठता है, जिससे भयानक क्षति उठानी पडती है।

एक किसान था । उसके प्रान्त मे वर्षा नही हुई तो वह किसी दूसरे प्रान्त मे चला गया । उसे मेहनती देखकर किसी किसान ने अपनी लडकी से उसका विवाह कर दिया। कुछ दिन बाद किसान अपने घर वापिस लौटा तो वर्षा हो चुकी थी। उसने बाजरे की खेती की। खेत हरा–भरा हो गया। किसान अपनी स्त्री को लेने के लिए ससुराल गया।

ससुराल वालो ने उसकी महमानी करने के लिए खीर और मालपूवे बनवाये। उस किसान ने कभी मालपूवे नही खाये थे। वह असमजस मे पडा कि उन्हे किस प्रकार खाया जाये ? सोच–विचार के बाद उसने निश्चय किया टुकडे–टुकडे करके खाने मे मजा जाता रहेगा। पूरा मालपूवा उसने मुह मे डाला और किसी प्रकार खाने लगा। पास मे उसके साले वगैरह बैठे थे, वे हसने लगे।

अपने जमाता की मूर्खता देखकर सास ने दो उगलिया दिखाकर इशारा किया कि कम से कम दो टुकडे करके तो खाओ। पर मूर्ख किसान ने इस इशारे को उलटा समझा। उसने समझा–एक–एक खाने से नही, दो एक साथ खाने से ज्यादा मजा आता है। अब उसने दो–दो खाने शुरू किये। लोगो ने समझ लिया यह एक दम गवार है। आखिर उसे स्पष्ट करके समझाया कि टुकडे करके खाना चाहिए।

किसान को मालपूवे बडे स्वादिष्ट लगे। जब वह अपनी स्त्री को लेकर घर लौट रहा था तो रास्ते मे निश्चय करने लगा कि घर पहुच कर मालपूवा बनवाऊगा। मालपूवा बनाने की विधि वह ससुराल मे सुन चुका था। उनके लिए गेहू की आवश्यकता थी, इसलिए उसने बाजरा की जगह गेहू की खेती करने का निश्चय किया। जब वह घर पहुचा तो बाजरा पकने मे कुछ ही दिनो की देरी थी। मगर वह मालपूवा खाने के लिए गेहू बोने को उतावला हो रहा था। उसने अपने पिता से गेहू बोने के लिए कहा। पिता बोला—अपने खेतो मे बाजरे की ही खेती अच्छी होती है। यहा के कुओ मे उतना पानी भी नही कि गेहू सीचे जा सके।

मगर मालपूवो के लिए पागल बने उसने कहा—अजी नहीं, बहुत दिनो तक बाजरे की खेती की, मगर कुछ भी आनन्द नही आया। सारी मेहनत बेकार गई। अब कुछ तरक्की करनी चाहिए।

पिता बेचारा चुप रह गया ।

युवक किसान ने उसी समय बाजरे के खेत को खुदवा डाला और उसमे गेहू बो दिये। पर कुए मे इतना पानी कहा रखा था ? न बाजरा हाथ आया, न गेहू ही। सारी मेहनत बेकार हुई, खाने के लाले पड गए।

बिना सोचे—समझे काम करने वालो की ऐसी ही स्थिति होती है।

55 : चमार गुरु

ससार के झगडो मे न पडकर, ईश्वर से याचना करो तो ऐसी चीज की याचना करो कि जिससे फिर कभी, किसी से, किसी प्रकार की याचना ही न करनी पडे। एक दूसरे की दी हुई चीज कैसा अनर्थ करती है, इस सम्बन्ध मे एक दृष्टान्त लीजिए।

एक चमार था। वह जूते बनाया करता था। जूते बनाते–बनाते ही वह यह भजन गाया करता–

'तोय मागि मांगिबो न मांगिबो कहायो।'

अर्थात् – हे प्रभो ! तुझसे मागने वाला मगता नही है, क्योकि तुझसे मागने पर मगतापन ही मिट जाता है।

यह भजन गाता–गाता चमार मस्त हो जाता। जिस जगह बैठकर चमार जूते सिया करता था, उसके सामने ही एक सट्टे–बाज सेठ रहता था। चमार का भजन सुनकर सेठ की नीद खुल–खुल जाती। वह सोचता–यह चमार कितना मस्त है !

एक दिन सेठ ऐसा सोच रहा था उसी समय उसे तार मिला – रुई का भाव घट गया है। सेठ यह समाचार पाकर सन्ताप करने लगा। सोचा–कल ही तो माल खरीदा था और आज इतना नुकसान हो गया? इसके बाद उसे किसी दूसरे सौदे मे भी घाटा लग गया। व्यापारी के लिये घाटे की मार बुरी होती है।

सेठ इतनी चिन्ता मे पड गया कि करवटे बदलते ही उसकी रात बीतती। उसका मुह सूखता चला जाता। कभी सरकार को, कभी प्रजा को और कभी गाधी को दोष देने लगता। इस प्रकार दस–पाच दिनो मे ही सेठ की शारीरिक दशा बिगड गई। वैद्य दवा करने आये, मगर चिन्ता की दवा उनके पास नही थी। जैसे–जैसे बाजार गिरता जाता, सेठ का दु ख बढता

ओर स्वास्थ्य गिरता जाता था। सेठ को सारा ससार सूना दिखाई देने लगा। उसकी दृष्टि मे धर्म या ईश्वर कोई नहीं रहा। पेसे जाते ही धर्म ओर ईश्वर पर से विश्वास भी चला गया। एक दिन चमार ने फिर गाया –

सुर नर मुनि असुर नाम साहब तो घनेरे।

चमार के गाये हुए भजन को सुनकर सेठ को कुछ सान्त्वना मिली। वह सोचने लगा–इस चमार के पास तो कुछ भी नही हे ओर इतना घाटा होने पर भी मेरे पास लाखो का धन मोजूद हे। यह कुछ न होने पर भी इतना मस्त रहता है ओर लाखो की सम्पत्ति होने पर भी मै रोता हू।

चमार ने सेठ के हृदय मे एक कुतूहल पेदा कर दिया। उसने चमार को अपने पास बुलवाया और पूछा–क्या गाते रहते हो, चौधरी ?

चमार बोला–सेठजी, मेरे काम मे हरकत होती हे। काम करने दीजिए।

सेठ–दो घडी बैठो तो सही।

चमार–दो घडी मे एक जूता बनता है।

धनिक लोग घण्टो–पहरो ऐश–आराम ओर साज–सिगार मे व्यतीत कर देते हैं। उन्हे जूतो पर पालिश करवाने और बाल सवारने के लिए ही घण्टो का समय चाहिये। वे आलस्य मे अपना समय व्यतीत करते हैं। चमार जूता वनाता हे, सो कहते हे कि अधर्म करता हे ओर स्वय गप्पे मार कर क्या धर्म करते हे? चमार जूता बना कर अपना पेट भरता है, और साथ ही दूसरो के पेरो को आराम पहुचाता है। पर गप्पो से किसका पेट भरता हे ? किसे सुख पहुचता हे ?

सेठ ने चमार से कहा–तुम जो भजन गाया करते हो, उसे एक बार सुना दो।

चमार–भजन मैं वही से सुनाऊगा ।

सेठ–भजन तो मेने कई वार सुना हे, यह बताओ कि उसका अर्थ क्या हे ?

चमार–उस भजन का अर्थ इतना ही हे कि ईश्वर मेरा दाता हे। वही मेरा दु ख हरण करने वाला हे। दूसरा कोई दु ख दूर नही कर सकता।

चमार की वात सुनकर सेठ सोचने लगा–इसकी भावना गजव की है। मेरे पास अव भी लाखो की सम्पत्ति हे। फिर भी में ईश्वर को कोसता हूँ। और एक यह हे जो रोज मजदूरी करके खाता हे, फिर भी ईश्वर पर अखण्ड विश्वास रखता है। यह चमार क्या मुझसे अच्छा नही हे ?

बात सेठ की समझ मे आ गई। सेठ ने चमार की दवा खाई। उसने अपने लम्बे–चौडे सट्टे के व्यापार को समेट लिया और ऐसा धन्धा करने लगा, जिससे खुद को भी शान्ति मिले और दूसरो को भी। थोडे ही दिनो मे सेठ भी मस्त बन गया। उसे वैद्यो और डाक्टरो की दवा की जरूरत नही रही।

सेठ चमार को अपना उपकारी मानने लगा। वह सोचा करता– जिसने मुझे ईश्वर पर भरोसा करना सिखलाया और जिसने मुझे ऐसी दवाई दी है, जैसी कि वैद्य और डाक्टर हजारो रुपया लेकर भी नही दे सकते थे, वह चमार मेरा बडा उपकारी है।

लोग ताकत के लिए दवा खाते है, मगर अनुभवी लोगो का कहना है कि जितने आदमी रोग से नही मरते, उतने दवा से मरते है।

सेठ ने सोचा–इस चमार का उपकार मानना उचित है। अतएव उसने चमार को बुलवा कर पचास रुपये के नोट उसके सामने रख दिये। उससे कहा–मेरे ऊपर तुम्हारा बडा उपकार है, इसलिए यह नोट ले लो। चमार ने प्रथम तो बहुत मनाही की, मगर सेठ के आग्रह करने पर उसने नोट ले लिए।

नोट लेकर चमार अपनी दुकान पर आया। सोचने लगा–इन नोटो को कहा रखू ? इस चिन्ता से उसने जल्दी दुकान बन्द कर दी और घर चला गया। उसे एकदम पचास रुपये मिल गये। भला उसे क्या कमी रह गई ? घर आकर भी वह इसी विचार मे पडा रहा कि इन्हे रखू कहा ? कही ऐसा न हो कि चोर ले जावे या बच्चे ही फाड डाले ? आखिर चमडे के टुकडे रखने की एक टूटी सी पेटी मे उसने नोट रख दिये। इससे अधिक सुरक्षित जगह उसके पास थी ही नही। रात को वह सोया तो था मगर उसे यही चिन्ता बनी रही कि कही चूहे नोटो को काट न खाए। इस तरह चिन्ता करते–करते ही उसकी सारी रात व्यतीत हुई।

सवेरा हुआ। चमार सोचने लगा–रात मे नीद नही आई और ईश्वर के भजन मे भी मन नही लगता। दुकान जाने को भी चित्त नही चाहता। यह सब इन नोटो की ही करामात है। जब तक इन नोटो को अपने घर से निकाल न दूगा, मुझे चैन नही मिलने की। नोट है तब भी हाय–हाय कराते है और कही नष्ट हो गए, तब भी हाय–हाय कराएगे। अतएव इन्हे सेठजी को सौप देने मे ही मेरा कल्याण हे।

वह नोट लेकर सेठ की दुकान पर पहुँचा। उसने नोट सेठ के सामने रख दिये ओर कहा–अपनी चीज आप ही सभालिए।

सेठ ने कहा—यह नोट वापिस लेने के लिए नही दिये है। तुमने मेरा उपकार किया है, इसलिए यह पुरस्कार मे दिये है।

चमार—आपका पुरस्कार मुझे नही चाहिए। इसे आप ही सभालिए। मुझे तो भजन मे ही आनन्द मिलता है।

इसके बाद चमार ने रात वाली समस्त घटना सेठ को सुनाई और अन्त मे कहा—उपकार के बदले यह न देकर हम दोनो ही भगवान् के भजन मे मस्त रहे इसी मे आनन्द है।

आखिर चमार ने नोट सेठ की ओर सरका दिये और आप उठ कर चल दिया। उसे ऐसा लगा, मानो सिर पर लदा हुआ भारी बोझ उतर गया है। वह हल्का हो गया और अपनी धुन मे मस्त रहने लगा।

चमार की इस निस्पृहता का सेठ पर बहुत प्रभाव पडा। वह सोचने लगा—इतनी सम्पत्ति होने पर भी मुझे सन्तोष नही है और इस चमार को देखो कि कुछ न होते हुए भी कितना मस्त है ! चमार ने प्रत्यक्ष बतला दिया है कि सुख का असली कारण धन नही, चित्त का सतोष है। मै इतने दिनो तक व्यर्थ ही चक्कर मे पडा रहा।

कुछ दिनो बाद चमार बीमार पड गया । बीमारी मे भी वह उसी भजन को गाया करता ओर कहता —प्रभो ! अब तो बस, तू ही तू है। पहले तो मुझे काम भी करना पडता था, परन्तु अब तो वह सभी छूट गया है। मै यही चाहता हूँ कि इस बीमारी मे भी मुझे किसी के आगे दीनता न दिखानी पडे। तेरे प्रति मेरी श्रद्धा अखण्ड ओर अटल बनी रहे।

चमार की बीमारी का हाल सेठ को मालूम हुआ। सेठ ने जाकर उसे देखा तो उस बीमारी मे भी वह उसी प्रकार गा रहा था ! घर मे खाने को नही है, फिर भी वह मस्त हे और किसी के आगे हाथ नही पसारना चाहता। ओह ! इसकी महानता के आगे मे कितना तुच्छ हू ! सब कुछ होते हुए भी में इस दैवी सम्पदा के बिना दरिद्र हू !

सेठ ने ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि उसके परिवार को किसी प्रकार का कष्ट न होने पाये। चमार ने ऐसा करने से सेठ को बहुत रोका पर सेठ ने कहा—मैं भिखारी समझ कर दान नही दे रहा हू। यह तो तुम्हारे उपकार का नगण्य उत्तर हे। तुमने मुझे धर्म पर स्थिर किया हे।

चमार के चित्त मे लोभ नही था इसी से वह भक्ति मे लगा रहता था। कहा भी है—

कामी कपटी लालची, इनसे भक्ति न होय।
भक्ति करे कोई शूरमा, जाति वर्ण कुल खोय।।

भक्ति वही करेगा, जिसने वर्ण और जाति का अभिमान भी त्याग दिया हो। हरिकेशी मुनि से कौन प्रेम नही करता।

चमार निरोग भी हो गया और धीरे–धीरे उसकी स्थिति भी सुधर गई। सेठ उसे अपना गुरु समझने लगा और वह भी भक्ति के मार्ग पर आ गया।

56 : परमात्म–प्रीति

जैसी दृष्टि हराम पै, तैसी हरि पै होय।
चला जाय वैकुण्ठ मे, पल्ला न पकडे कोय।।

ससार के पदार्थो मे, नीच कर्मो मे जैसी प्रीति है, वैसी प्रीति अगर परमात्मा मे हो जाये तो ईश्वरप्राप्ति मे देरी ही न लगे। हराम से प्रीति छोडकर हरि से प्रीति करो तो बेडा पार है । बहुत से लोग ढोग के लिए ईश्वर– प्रेम का दिखावा करते हैं । पर जो सच्ची प्रीति करते हैं उन्हे ईश्वर मिलता है ओर जो ढोग करते हैं उन्हे ढोग ही मिलता है । ईश्वर की प्रीति कैसी हो, यह समझने के लिए एक स्थूल दृष्टान्त लो –

एक महात्मा नगर के शहरपनाह के किनारे ध्यान मे खडे थे। उस नगरी की एक वेश्या सजधज कर नगर के भीतर रहने वाले अपने किसी प्रेमी से मिलने निकली थी मगर नगर–फाटक बन्द हो चुका था, भीतर जाने का दूसरा मार्ग नही था। उसने इधर–उधर देखा तो एक ऊची सी चीज खडी हुई उसे दिखाई दी। प्रेमी से मिलने की आतुरता मे उसने यही समझा कि यह कोई ठूठ खडा हे । उसने उसके ऊपर पेर रखकर ज्यो ही शहरपनाह चढना चाहा, त्यो ही महात्मा क्रोधित हो उठे। ध्यान खोलकर उन्होने कहा–दुष्टे ! तुझे दिखता नही कि में मनुष्य हू। तू इतनी अधी हो रही हे !

महात्मा की बात सुनकर वेश्या सहम गई। उसने मन ही मन कहा–आतुरता मे मॅने इन महात्मा को ठूठ ही समझ लिया था ! वह ऊपर से नीचे गिर पडी। महात्मा से बोली–क्षमा कीजिए महाराज ! मेने समझा था कि यह कोई ठूठ खडा हे।

महात्मा–तुझे इतना गर्व हे कि तू मनुष्य ओर ठूठ को एक ही समझती ह ! मुझे इतना क्रोध ह कि चाहू तो अभी तुझे भस्म कर दू!

वेश्या ने महात्मा को सन्तोष देना उचित समझा। वह बोली– महाराज मुझसे तो भूल हुई ही मगर आप वहा क्या करते थे ?

महात्मा–देखती नही, हम साधु है? हमे और क्या काम है परमात्मा का ध्यान लगा रहे थे।

वेश्या–महाराज ढिठाई क्षमा हो। मै पूछना चाहती हू कि आपका परमात्मा मेरे पेमी से बडा है या छोटा ?

महात्मा–परमात्मा तेरे पेमी से क्या सारे ससार से बडा है।

वेश्या–मै तो परमात्मा से अपने पेमी को बडा समझती हू।

महात्मा–क्यो ? केसे समझती है ?

वेश्या–मै अपने पेमी की धुन मे ऐसी मस्त थी कि आपका होना मुझे मालूम नही हुआ। पर आप परमात्मा के ध्यान मे थे, फिर भी आपको मेरा होना मालूम हो गया। अब आप ही सोचिए कि आपका परमात्मा बडा है या मेरा प्रेमी ? अगर आपका परमात्मा बडा था और आप उसकी धुन मे लगे थे तो लगे रहते। इस झमेले मे क्यो पडे ?

वेश्या की बात सुनकर महात्मा विचार मे डूब गए। सोचने लगे–वास्तव मे वेश्या ठीक कह रही है। अगर इसके प्रेमी से मेरा परमात्मा बडा है तो उसकी धुन भी बडी होनी चाहिए और उस धुन मे यह पता क्यो लगना चाहिए कि शरीर पर कौन चढता है और कौन उतरता है। आखिर महात्मा ने वेश्या से कहा–तुम ठीक कहती हो। वास्तव मे मेरा ध्यान पूरी तरह परमात्मा मे नही था। जैसा तेरा ध्यान तेरे प्रेमी मे है वैसे ही मेरा ध्यान परमात्मा मे लग जाये तो मै तुझे अपना गुरु मानूगा। हे प्रभो ! *यह वेश्या जैसे अपने प्रेमी को तन्मय* दृष्टि से देखती है वैसी ही दृष्टि मेरी भी तुझे देखने मे हो जाये।

तात्पर्य यह हे कि जैसा प्रेम दुनिया के पदार्थों के प्रति है, वैसा ही प्रेम अगर ईश्वर के प्रति हो जाये तो सिद्धि मिलने मे देर न लगे। सासारिक प्रेम को वैकारिक प्रेम को ईश्वर की ओर मोड लेना ही मुक्ति का मार्ग है। इसी को साधना कहते हैं।

57 : लक्ष्मी

एक सेठ बडे धनवान् और जितने धनवान् उतने ही उदार ओर जितने उदार उतने ही दानी तथा निराभिमानी थे। रात्रि के समय वह सो रहे थे। पिछली रात्रि के समय एक देवी ने आकर उनसे कहा–सेठ, सोते हो या जागते हो?

सेठ ने पूछा – कौन है?

देवी ने उत्तर दिया–मे हू तुम्हारे यहा की लक्ष्मी।

सेठ–क्यो, क्या कहना हे?

लक्ष्मी –मे यह कहने आई हू कि अव तुम्हारे घर से जाऊगी।

सेठ–मेरे यहा तुम सात पीढियो से रहती हो अब क्यो जा रही हो? कुछ कारण वताओगी?

लक्ष्मी–एक घर मे रहते–रहते ऊव गई हू। अव किसी दूसरे घर जाऊगी।

सेठ–अच्छी बात हे। जाती हो तो मे मनाही नही करता परन्तु तीन दिन ओर ठहर जाओ।

लक्ष्मी ने तीन दिन ओर ठहरना स्वीकार किया। सेठ ने विचार किया–आखिर यह लक्ष्मी रहेगी तो नही फिर इसके द्वारा मे कुछ लाभ क्यो न प्राप्त कर लू? यह विचार कर सेठ ने इन तीन दिनो मे घर मे जितनी सम्पत्ति थी सव जीवरक्षा, परोपकार आदि मे खर्च करके अपना सव वेभव घर–द्वार आदि दान कर दिया। अपने घर की सव महिलाओ को अपने–अपने पीहर जाने की सलाह दी। पुत्रो से कह दिया–तुम परदश या जहा सुभीता आर निर्वाह दखो वहा चले जाआ।

सठ न लक्ष्मी स वार्तालाप का वृत्तान्त सुनाकर कहा–मन तीन दिन क लिए उस राका ह। तीन दिन के पश्चात वह निश्चित रूप स जाएगी।

इसलिए मै जो कुछ कर रहा हू, उसमे दु ख न मानकर आनन्द मानो। जब समय पलटेगा तब फिर हम सब लोग इकट्ठे हो जाएगे।

सब अपने–अपने ठिकाने चले गए। सेठ ने अपना सभी कुछ लुटा दिया। तीसरे दिन, पिछली रात के समय लक्ष्मी फिर आई और कहने लगी–'अब मैं जाती हू।'

सेठ ने उत्तर दिया–मुझे जो कुछ करना था, कर चुका। अब तुम भले ही जाओ।

उधर लक्ष्मी गई, इधर`सेठ ने सन्तोष के साथ विचार किया– जो भाग्य मे होगा, करेगे।

अपने सर्वस्व का दान करने से सारे नगर मे सेठ की कीर्ति फैल गई थी। वह जिधर जाता, उधर ही लोग उस का आदर–सम्मान करते और 'सेठजी' कहकर पुकारते। परन्तु वह कहता–मै सेठ नही रहा। मै अब गरीब हू, अकिचन हू। मगर लोग यह सुनकर उसकी और अधिक इज्जत करते थे।

दो–तीन दिन बीते कि लक्ष्मी फिर आई। उस समय सेठ निश्चित भाव से किसी धर्मशाला मे सो रहा था। पिछली रात के समय सेठ को आवाज देकर कहा सेठ, जागते हो या सोते हो?

सेठ ने कहा–जागता हू, कौन हे?

लक्ष्मी–यह तो मै लक्ष्मी हू।

सेठ–कहो केसे आई ?

लक्ष्मी–मे फिर तुम्हारे घर आती हू।

सेठ–तुम्हे जाने के लिए किसने कहा था ? जो इस प्रकार बिना कारण चली जाये उसे आना ही क्यो चाहिए ? तुम सात पीढियो से मेरे यहा रहती थी, फिर भी चले जाने मे झिझक नही हुई ? अब भी क्या भरोसा है? जिसके स्वभाव मे ऐसी चपलता है उसे रखने मे क्या लाभ है ? देवी, अपने लिए और कोई ठिकाना खोजो। मै इसी हालत मे मजे मे हू।

लक्ष्मी–मुझसे भूल हुई परन्तु अब मै तुम्हारे यहा ही रहूगी।

सेठ–अच्छा यह तो बताओ कि इतने दिन कहा रही और लोट कर मेरे पास क्यो आई हो?

लक्ष्मी– मे पहले राजा के पास गई। वहा भण्डार भरे थे पर मुझे सन्तोष नही हुआ। वह अन्याय का पेसा था। मैने विचार किया– अन्याय के इस पसे मे रहने से मेरी कद्र घट जाएगी। तब वहा से चलकर सेठ–साहूकारो

के यहा गई। मगर तुम्हारे सरीखा धर्मात्मा कोई नही मिला। इस कारण मे फिर तुम्हारे पास आई हू।

सेठ –आई तो अच्छी बात, मगर अब तो मेरे पास घर भी नही है। तुम्हे रखूगा कहा ?

लक्ष्मी – इसकी चिन्ता न करो । मे जो उपाय बताऊ सो करो। तुम सब जगल जाते हो न ? लौटते समय तुम्हे एक साधु मिलेगा। उस साधु को आदर के साथ अपने यहा ले आना और खीर या जो भी कुछ हो, खिला कर एक डण्डा मारना। डण्डा मारते ही वह सोने का पुरुष बन जाएगा। उस पुरुष का सिर मात्र बाकी रख कर सारा शरीर नित्य काट लेना और फिर उसे कपडे से ढक देना वह जैसे का तैसा हो जायेगा।

सेठ– ठीक है, पर एक बात सुन लो। तुम आती हो, यह हर्ष की बात है, मगर तुम्हे जाने की इच्छा हो तो कह कर जाना ओर कहना भी सात दिन पहले। तुम्हे यह बात स्वीकार हो तो मै तुम्हारे आने का स्वागत करूगा।

लक्ष्मी ने सेठ की यह बात स्वीकार की और अपने स्थान को चली गई।

जो मनुष्य धर्मनिष्ठा रखता है, उसे किसी भी अवस्था मे दु ख नही रहता। ओर ज्यो–ज्यो वस्तु पर आसक्ति की जाती है, त्यो–त्यो वह दूर भागती हे। अगर इस हालत मे मध्यस्थ भाव रखा जाये तो गई हुई वस्तु भी मिल जाती हे। कदाचित् न मिले तो भी उसके जाने की पीडा नही होती।

सवेरे सेठ को जगल की ओर से आता हुआ एक साधु मिला। सेठ उसे सत्कारपूर्वक अपने यहा ले आया। उसे भोजन करा चुकने पर ज्यो एक लकडी मारी कि बाबाजी स्वर्ण–पुरुष बन गए। सेठजी को सन्तोष हुआ। उन्होने पेर की तरफ से सोना काट–काट कर घर आदि तेयार करवाए। अपने सब कुटुम्बी–जनो को बुलवा लिया ओर पहले से भी अधिक आनन्द के साथ रहने लगे।

इस सेठजी के पडोस मे एक ओर सेठ रहता था। वह था तो मालदार मगर उसकी प्रकृति दुनिया से न्यारी थी 'चमडी जाय पर दमडी न जाय यह उसकी जीवननीति का मूल–मन्त्र था। कभी एक पाई भी दान न देता था।

पूर्वोक्त सेठ ओर कजूस सेठ की पत्नियो मे मित्रता थी। कजूस सेठ की पत्नी ने एक दिन दानी सेठ की पत्नी से पूछा–तुम्हारे पति ने एक दिन सबकुछ दे दिया था फिर एकदम इतना ठाठ केसे हो गया? किस उपाय से इतना धन बरस पडा हे? वह उपाय तो हमे भी बतलाओ न ? कही चोरी करके तो नही लाये हे? नही तो उसके साथ तुम्हे ओर तुम्हारे लडको को भी भुगतना पडेगा। तुम्हे न मालूम हो तो सेठजी से पूछ लेना।

दानी सेठ की पत्नी ने कहा– बात तो ठीक है पूछूगी। ओर उसने घर आकर पति से पूछा–यह धन कहा से आ गया? पहले तो सेठ ने टालमटूल की। उसने सोचा–स्त्री को गुप्त भेद नही बताना चाहिए क्योकि स्त्रियो मे पाय विवेक नही होता। वे स्वभाव की भोली होती है। दूसरो की बातो मे आकर जल्दी भेद खोल देती है।

सेठ को टालते देख वह बोली–मै समझ गई। कही से चोरी करके लाये हो इसलिए तो बतलाते नही। पर जबतक न बतलाओगे मे अन्न–जल ग्रहण नही करूगी।

सेठानी के सत्याग्रह के सामने सेठजी को झुकना ही पडा। उन्होने बाबा का मिलना उसे भोजन कराना, डण्डा मारना और उसका स्वर्णपुरुष बन जाना आदि वृत्तान्त कह दिया। सेठानी पसन्न हुई और जब अपनी सखी से मिली तो उसने यह वृत्तान्त उसे बतला दिया।

कजूस की सेठानी पहले तो अचरज मे पड गई ओर फिर लोभ मे आ गई। उसने सोचा– धनी बनने का कितना सरल और सुन्दर उपाय है। उसने पति से सब हाल कहा और साधु को ले आने की भी सिफारिश की।

सेठ लोभी तो था ही, ऊपर से पत्नी का दबाव भी पडा। वह सुबह उठा ओर जगल की ओर से आने वाले एक साधु को ले आया। उसे बडे प्रेम से उत्तम भोजन कराया और उसके बाद पूरी ताकत से एक लट्ठ दे मारा। परन्तु सेठ का दुर्भाग्य समझो कि साधु सोने का पुरुष नही बना। यही नही, वह जोर–जोर से चिल्लाने लगा।

सेठ ने सोचा – शायद मेरा लट्ठ धीरे लगा है, इसी कारण यह सोने का नही बना। अब की बार उसने सारी ताकत लगाकर लट्ठ लगाया। बाबाजी ने और चिल्लाना शुरू किया। मगर सेठ लोभ मे पागल हो गया था। उसने आगा–पीछा कुछ नही सोचा और जब तक बाबाजी के तन मे प्राण रहे, वह लट्ट लगाता ही रहा । अन्त मे बाबाजी चल बसे।

बाबाजी की चिल्लाहट सुनकर बहुत से लोग सेठ के घर के सामने इकटठे हो गये। उन्होने सेठ को पकडा और राजा के पास ले गए।

राजा ने सेठ को बाबाजी की हत्या करने के अपराध मे समुचित दण्ड दिया।

तात्पर्य यह है कि उस उदार सेठ ने तो दान देकर, अपना सर्वस्व लुटा कर स्वर्ण–पुरुष बनाया था मगर कजूस सेठ दान दिये बिना ही स्वर्ण–पुरुष बनाने चला तो उसकी दुर्गति हुई । जीवन मे उदारता नीति ईमानदारी और समभाव होता हे तो किसी भी अवस्था मे मनुष्य सुखी रह सकता है। ऐसा जीवन बिताने वाले को लक्ष्मी बिना बुलाये प्राप्त होती हे।

58 : ठसक का रोग

एक सेठ के लडके की सगाई दूसरे सेठ की लडकी के साथ हुई। लडकी वाला अधिक धनवान् था और लडके वाला कम। जो ओछा होता है, वह अपना बडप्पन अधिक दिखलाना चाहता है। अतएव लडके वाले ने सोचा–लडके का विवाह करने जाना है तो ठसक से जाना चाहिए। यह सोचकर उसने भीतर चाहे ताबा ही रहा हो परन्तु सोने के कडे, कण्ठी अगूठी आदि गहने बनवाए। सेठजी सब गहनो से सज कर और बारात लेकर लडके के ससुराल गये। कभी अगूठी पहनी तो थी नही, इसलिए अगूठी पहन कर हाथ कडे से हो गए। वह किसी को बुलाने जाए तो भी हाथ लम्बे ओर उगलिया कडी करके कडे और अगूठिया दिखलाते हुए 'पधारो साहब कहते थे।

लडकी वाले ने कहा–हमारे समधी को ठसक रोग हो गया है। मगर इस रोग की दवा मेरे पास हे। इनका इलाज कर देने मे ही इनका कल्याण हे। इस विचार से उसने हीरो का एक कण्ठा गले मे डाल लिया ओर हाथो मे हीरो की पहुचिया पहन कर अपने समधी के समान ही हाथ लम्बे करके उससे कहा 'पधारिये साहब, पधारिये।'

उस कण्ठे ओर पहुचियो को देखते ही सेठजी का नूर घट गया। चित मलिन हो गया मानो किसी ने उनका सारा जेवर छीन लिया हो।

विचार कीजिए उसने पहना था तो इसका दिल क्यो दु खा ? इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया जाये तो कई बाते स्पष्ट हो जाएगी। मनुष्य का आनन्द गहनो मे होता तो जो गहने पहले इस सेठ को आनन्द द रहे थे वे ही बाद मे काटे की तरह क्यो चुभने लगते? वास्तव मे मनुष्य इस कल्पना मे सुख मानता हे कि मेर पास अमुक चीज हे जो दूसरो क पास नहीं हे। लेकिन वह चीज जब दूसरो के पास भी हो जाती हे तो उसका आनन्द जाता रहता हे।

कल्पना कीजिए, किसी बाई के हाथो मे चादी की चूडिया है। उसके सामने सोने की चूडियो वाली एक बाई आ बैठती है। अब चादी की चूडियो वाली बाई कहेगी–मेरी चूडिया क्या है, कुछ भी नही, और सोने की चूडियो वाली की प्रसन्नता का पार न रहेगा। वह अभिमान मे डूब जाएगी। वह अपने को सुखी अनुभव करेगी। उसी समय हीरो की चूडियो वाली एक महिला वहा आ पहुचती है। उसे देखकर सोने वाली के सुख पर पानी फिर जाएगा उसका सुख हवा हो जायेगा। वह अपनी चूडियो को कुछ भी नही समझेगी।

यह सब क्या बात है ? सुख कहॉ है? सोने मे सुख है या मनोभावना मे ? ठीक तरह सोचो, विचार करो, समझो। अगर मनोभावना मे ही सुख है तो तुम्हे कही भटकना नही है। वह तुम्हारे पास है। मृगतृष्णा मे क्यो पडते हो ?

59 : हठ

एक मनुष्य काशी गया। जब वह लौटकर आया तो अपनी मा से कहने लगा—मैने काशी के सब पण्डितो को हरा दिया।

मा— ने पूछा— कितने पडित थे ?

उसने कहा— करीब 500 होगे ।

मा कैसे विद्वान् थे ?

बेटा— बडे—बडे विद्वान् थे, ऐसे कि कुछ न पूछो बात ।

मा— परन्तु तू पढा तो है नही। उन्हे कैसे जीत लिया ?

बेटा— मै पढा नही तो क्या हुआ ? मुझे जीतने की कला तो पूरी आती है।

मा— केसे जीता ?

बेटा— वे सब कुछ—कुछ बोलते रहे, परन्तु मे यही कहता रहा कि तुम झूठे हो और मे सच्चा हू।

इस प्रकार वह काशी मे जीत गया। मूर्ख मनुष्य दूसरो की सुनता नही, समझता नही और अपनी—अपनी हाके जाता हे। उसके हठ को कोन तोड सकता है ?

60 : महल का द्वार

किसी सेठ ने बहुत सुन्दर और बडा विशाल महल बनवाया। एक दिन उस सेठ के महल की ओर से एक महात्मा गोचरी (भिक्षा) के लिए निकले। सेठ ने सोचा–साधु जी आ गए है तो उन्हे अपना महल दिखलाऊ। महल देखकर महाराज प्रसन्न होगे और जगह–जगह उसका बखान करेगे। महाराज की गति सेठ को मालूम नही थी।

सेठ महात्मा को अपने महल मे ले गया और वहा के ठाट–बाट बताने लगा। महात्मा ज्ञानी थे, इसलिए उन्होने विचार किया कि मकान देखे बिना उपदेश देना ठीक नही।

सेठ ने बडी प्रसन्नता के साथ महल दिखलाते हुए कहा– देखिए, यह दरीखाना है, यह भोजनगृह है, यह शयनगृह है, यह बैठक है। इसके सामने के झरोखे को म्युनिसिपैलिटी ने रोक दिया था, परन्तु मैंने लाखो रुपये खर्च करके झरोखा बनवाया है। यह देखिए ऊपर चढने के लिए 'लिफ्ट ' लगा है। पहले के लोगो को ज्यादा ज्ञान नही था। इस कारण वे चढने के लिए सीढिया रखते थे। अब विज्ञान का बोलबाला है। पैसे लगते हैं मगर कितना सुभीता हो गया है। 'लिफ्ट' पर बैठे कि ऊपर चढे। और यह धुआ निकलने की जगह है। इस प्रकार सेठ ने सारा महल दिखला कर महात्मा से पूछा–कहिए, कोई कसर तो नही है।

साधु को सेठ का महल देखकर क्या आनन्द हो सकता था ? उन्होने महल के प्रधान दरवाजे की ओर सकेत करके कहा– इसमे एक बात खराब है यह दरवाजा। यह क्यो रखा है ?

सेठ मुस्कुराया। उसने कहा –आखिर आप साधु ही तो ठहरे। आप मकान का हाल क्या जाने ? दरवाजा न होता तो आते–जाते कहा से ? साधुजी बोले– कुछ भी हो, परन्तु यह दरवाजा नही रखना था।

सेठ ने कहा– आप कैसे भोलेपन की बात करते हैं।

साधु ने गम्भीरता से कहा– मै ठीक कहता हू। किसी रोज लोग इसी दरवाजे से तुझे निकाल देगे।

साधु की बात सुनकर सेठ का नशा उतर गया। साधु ने एक लम्बी सी सास लेते हुए कहा– मूर्ख, जहा जाना है, उस दरवाजे की तो तुझे चिन्ता नही है और ऐसी भावना मे पडा है, जैसे अमर रहेगा। मै इस महल मे रहने के लिए तुझे मनाई नही करता, मगर यह कहता हू कि इसमे लिप्त न हो जाना। इस दरवाजे को सदा याद रखना कि इसी से तुझे जाना होगा। उस समय इस घर मे रहने वाला कोई भी व्यक्ति तेरा साथ नही देगा। तेरा किया हुआ धर्म ही साथ जाएगा। इसलिए जब तू इस महल मे रहे तो अपने मन के महल मे परमात्मा को रखना।

61 : पतिव्रता

राम–चरित्र मे दो मित्रो की कथा आई है। दो मित्र थे। उनमे से एक का विवाह हो गया। दूसरे ने उसकी पत्नी को देखा तो उस पर मोहित हो गया। उसे खाना –पीना, सोना–बैठना कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। वह दिनो–दिन सूखता चला जाता था।

पहले मित्र ने पूछा– तुम बिना रोग सूखते क्यो चले जाते हो?

दूसरा मित्र– कुछ भी तो नही है। पता नही, क्या कारण है।

पहला– छिपाने का यत्न मत करो। हो सकेगा तो मै तुम्हारी चिन्ता दूर करने का उपाय करूगा।

दूसरे मित्र ने पहले तो टालमटूल की, मगर अन्त मे मित्र का आग्रह देख सच्ची बात कह दी। आखिर मित्र से कपट तो वह कर नही सकता था। कहा भी है –

गुरु से कपट, यार से चोरी,
कै हो अन्धा, कै हो कोढी।

मित्र के हृदय की बात सुनकर वह सोचने लगा–विचित्र समस्या है। ऐसे अवसर पर मुझे क्या करना चाहिए ? अन्त मे उसने निर्णय किया– मैं अपनी मित्रता को निबाहूगा और देखूगा कि इसका परिणाम क्या निकलता है ?

इस प्रकार सोचकर उसने अपने मित्र को तसल्ली देते हुए कहा–धैर्य रखो। यही बात है तो मै अपनी स्त्री तुम्हे दूगा।

पहले मित्र के आश्चर्य का ठिकाना नही न रहा। लज्जा और आश्चर्य के कारण वह अवाक् होकर अपने मित्र की ओर देखने लगा। थोडी देर मे सभल कर उसने कहा– नही, ऐसा मत करना।

घर आकर उसने अपनी पत्नी से कहा– मे जो कहूगा सो करोगी ?

पत्नी– आज ऐसी शका क्यो ? क्या मेने कभी आपकी आज्ञा का उल्लघन किया है ?

तब वह बोला– नही, सदा और बात हुआ करती थी, आज और ही बात है !

पत्नी – मैं आपको सावधान देखती हू । आप जो आज्ञा देगे, उचित ही देगे। फिर मुझे उचित और अनुचित का विचार करने की आवश्यकता ही क्या है ? आप आज्ञा दीजिए, मैं उसका अवश्य पालन करूगी।

वह बोला– तुम शृगार करके मेरे मित्र के घर जाओ।

पत्नी ने आखे गडाकर अपने पति के चेहरे की ओर देखा कि कही दिल्लगी तो नहीं कर रहे हैं ? मगर उसके चेहरे की गम्भीरता ने तत्काल ही उसकी शका का निवारण कर दिया। तब उसने सोचा– आज पति का प्रेम कुछ निराला ही है। मेरी इज्जत से पति की इज्जत ज्यादा है। फिर न मालूम क्या उदारता दिखलाने के लिए यह आज्ञा दे रहे हैं। वह धर्मसकट मे पड गई। वह मन ही मन परमात्मा से प्रार्थना करने लगी– प्रभो ! मुझे रास्ता दिखलाइए। पति की आज्ञा न मानना भी उचित नही है और मानती हू तो धर्म–भग होता है। ऐसी अवस्था मे मुझे क्या करना चाहिए ?

अन्त मे उसके हृदय की भावना फूली। उसने विचार किया–मनुष्य चाहे तो किस जगह और किस परिस्थिति मे अपने धर्म की रक्षा नही कर सकता ? ओर उसने पति से कह दिया– आपकी आज्ञा शिरोधार्य करके मै अवश्य जाऊगी। पर आप विचार कर ले। आप स्वय धर्मात्मा हें और बुद्धिमान् हें। अत मुझे अपनी बुद्धि दोडाने की आवश्यकता नही हे।

पति ने कहा– अच्छी बात है, जाओ।

पति की आज्ञा मानकर स्त्री चली। पति भी पीछे–पीछे चला कि देखे, क्या होता है ! स्त्री ने जाकर मित्र के किवाड खटखटाए। मित्र ने पूछा– कौन?

स्त्री– जिसे याद करते हो, वही।

वह आश्चर्य–युक्त होकर उठा ओर उसने किवाड खोले। मित्र की स्त्री को देखकर उसके आसू निकल पडे। वह सोचने लगा– दुनिया मे मेरे समान कोई नीच नहीं है जिसने अपने मित्र की स्त्री की माग करते हुए सकोच नही किया! मैं कितना पामर हू! पशुओ से भी गया बीता! और वह मित्र? धन्य है वह मनुष्य नहीं देवता है!

उसने आई हुई मित्र–पत्नी को बैठाया। इसी समय उसका मित्र भी आ पहुचा। उसने आते ही अपने मित्र की जो मुखमुद्रा देखी तो समझ गया कि कुछ गजब होने वाला है।

पहला मित्र उन्हे वही बैठा छोड पिछवाडे की ओर गया और फासी का फन्दा लगा कर प्राण त्यागने को तैयार हो गया। दूसरे मित्र को पहले ही आशका हो गई। वह भी पिछवाडे की ओर पहुचा। मित्र को फासी लगाते हुए देख उसने फासी का फदा काट दिया और कहा– पागल हुए हो ? यह क्या कर रहे हो ?

उसने हडबडा कर कहा–तुम यहा क्यो आये हो ? मुझ पापी को मरने देना ही योग्य है।

दूसरे मित्र ने कहा–मैं जान गया था कि तुम इधर क्यो जा रहे हो। खैर, जो हुआ सो हुआ, इसमे मेरी और तुम्हारी कोई विशेषता नही है। विशेषता है इस पति–भक्ता स्त्री की, जो सब पुरुषो को भाई–समान समझती हुई भी मेरी आज्ञा मानकर तुम्हारे पास चली आई।

पहले मित्र ने कहा– यह मेरी माता है। इसने मुझे नया जीवन दिया है।

स्त्री ने कहा– मैने परमात्मा से रास्ता दिखलाने के लिए प्रार्थना की थी। उसने रास्ता दिखलाया और मैं चली आई। मै जानती थी कि मेरा हृदय जब तक पवित्र है तो उस के सामने अपवित्रता टिक नही सकती।

पतिव्रता की शक्ति के सामने दानव भी हार मानते है।

62 : आप मरे बिना स्वर्ग नहीं मिलता

किसी किसान ने एक खेत बोया। खेत मे पक्षियो ने जुआर के पाधो मे घोसला बना दिया। घोसले मे पक्षी भी रहते थे और पक्षियो के बच्चे भी रहते थे। बच्चे उडने नहीं लगे थे, इस कारण पक्षिणी चुग्गा ला–लाकर उनके मुह मे देती थी।

एक दिन किसान अपने खेत की मेड पर आया। उसने आशा और सन्तोष की नजर सारे खेत पर डाली । फिर सोचा – खेत पक गया है, अब काट लेना चाहिए। यह सोचकर उसने खेत के रखवाले ओर अपने लडके से कहा– देखो भाई, खेत अब पक गया है। काटने मे ढील करना ठीक नही है। आज फला गाव से पाहुने आने वाले है। उनकी सहायता से कल खेत काट डालेगे।

पक्षी के बच्चो ने किसान की बात सुनी। वे बुरी तरह घबराए। पक्षिणी के आते ही वे रोकर कहने लगे– मा, अब इस जगह रहना ठीक नही है। जल्दी से जल्दी यहा से उड चलना चाहिए।

पक्षिणी ने पूछा– क्यो ? क्या बात है ?

बच्चे बोले– मा, आज खेत का मालिक किसान आया था। वह कहता था– कल पाहुनो की सहायता से खेत को काटेगे। खेत कल कट जायेगा। अपने यहा रहकर क्या करेगे ? यहा रहे तो खेत के काटते समय मुसीबत भी आ सकती हे। उड चलना ही ठीक हे।

पक्षिणी ने हसकर कहा–बच्चो तुम भोले हो। तुम फिक्र मत करो। पराये भरोसे खेत नहीं कटा करते।

बात भी ऐसी ही हुई। खेत नही कटा।

दूसरे दिन किसान फिर आया। उसने रखवाले से फिर कहा–कल पाहुने नही आये ओर खेत भी नही कटा। अब गाव के अपने भाई– बन्धुओ को बुला लेगे और उनकी सहायता से खेत काट लेगे।

पक्षी के बच्चो ने फिर यह बात सुनी और पक्षिणी के आते ही कहा– मा कल नही उडे तो आज ही उड चले। कल किसान अपने भाई–बन्धुओ की सहायता से खेत काटेगा। हम लोगो को पहले से ही चला जाना चाहिए।

पक्षिणी ने कहा–तुम चिन्ता मत करो। बिना अपने किये कुछ नही होता। अपनी ताकत के बिना कोई मददगार नही होता।

पक्षिणी ने ठीक ही कहा था। दूसरे दिन भी खेत नही कट सका।

तीसरे दिन किसान फिर आया और कहने लगा – बडी भूल की, जो पाहुनो और भाई–बन्धुओ के भरोसे बैठे रहे, नही तो खेत कभी का कट जाता। दूसरो के भरोसे काम नही होता। कल अपने सब घर वाले ही भिड पडे और खेत काट ले। लडके, तू कल सवेरा होते ही घर के सब लोगो को लेकर आ जाना। और रखवाले, तू भी तैयार रहना। कल खेत अवश्य काट लेगे।

पक्षी के बच्चो ने फिर किसान की बाते सुनी और अपनी मा के आते ही कहा– मा, अब तो उडना ही पडेगा। किसान ने अपने घर वालो के साथ आकर कल खेत काटने के लिए कहा है।

पक्षियो ने कहा– हा, अब उड जाना चाहिए। किसान ने जब स्वय खेत काटने का विचार किया है तो जरूर कट जायेगा। जो अपनी हिम्मत से काम करता है, वही काम कर पाता है और पक्षी, पक्षिणी तथा बच्चे उस खेत से उड गए।

किसान पाहुनो और भाई–बन्धुओ के भरोसे रहा तो उसका काम नही हुआ। वे उसके काम न आये। आज वह स्वय अपने घर वालो को लेकर भिड पडा। तब भाई–बधुओ ने देखा कि खेत कट रहा है और हम मदद करने नही जाएगे तो कल हमारी मदद कौन आयेगा? यह सोचकर वे भी आ पहुचे और खेत कट गया।

यह दृष्टान्त हे। जब पक्षिणी भी सोचती है कि पराये भरोसे काम नही होता तब क्या आप लोगो को नही सोचना चाहिए ? आज आप लोग परावलम्बी है आलसी है सब काम नोकरो से ही कराते है और खुद काम करने मे असमर्थ हे। इस मनोवृत्ति से न व्यावहारिक कार्य होता है ओर न धामिक ही हो पाता हे। निश्चित समझ लीजिए कि पराये भरोसे काम नही होता। कहावत प्रसिद्ध ह आप मरे बिना स्वर्ग नही मिलता।

63 : वीर

एक सेनापति मुनियो के समीप बेठा था। मुनिया ने साधुता की प्रशसा करते हुए कहा–'वीर पुरुप ही साधु हो सकता हे।'

सेनापति ने कहा– 'आप अपने ही मुख से अपनी प्रशसा कर रहे हैं। अगर आप हाथ मे तलवार ले तो पता चलेगा कि वीरता किसे कहते हैं ? आप साधुओ को वीर वतलाते हे पर जहा तलवारो की खडखडाहट होती हे वहा साधु नही ठहर सकते।

सेनापति की वात सुनकर साधु हस दिये । फिर वोले– 'सेनापति! जोश मे आ जाने से सच्ची वात समझ मे नही आती। शातिपूर्वक विचार करोगे तो साधु की वीरता का पता चल जायेगा। अगर एक आदमी अकेला ही दस हजार योद्धाओ को जीत ले तो उसे आप क्या कहेगे ?

सेनापति– ऐसा सम्भव प्रतीत नही होता फिर भी यदि कोई दस हजार योद्धाओ को जीत ले तो वह अवश्य ही वीर कहलायेगा।

साधु– ठीक हे। लेकिन कोई दूसरा आदमी दस हजार योद्धाओ को जीतने वाले को भी जीत ले तो उसे आप क्या कहेगे ?

सेनापति– उसे महावीर कहना होगा।

साधु– देखो ससार मे वडे–वडे वस्त्रधारी थे। उदाहरण के लिए रावण को ही समझ लीजिए । रावण प्रचण्ड वीर था। उसने लाखो पर विजय प्राप्त की थी। मगर जिस काम न उसे भी जीत लिया वह वीर कहलायेगा कि नही ? रावण ने हजारा– लाखो योद्धाओ को पराजित कर दिया मगर वह सीता की आखा का न जीत सका। अतएव काम न पराजित करक उस नचा डाला। जिसक प्रवल प्रताप क आग वडे–वड राजा–महाराजा नतमस्तक होत थ जिसकी प्रचण्ड शक्ति स वड–वड शूरवीर भी अभिभूत हो जात थ

वह लाखो को जीतने वाला रावण, अबला कहलाने वाली सीता के आगे हाथ जोडने लगा और उसके पैरो मे पडने लगा। मगर सीता ने उसे ठुकरा दिया।

यहा पश्न खडा होता है–वीर कौन था ? रावण या काम ?

सेनापति– काम। काम को जीतना बहुत कठिन है।

साधु– काम लाखो को जीतने वाला वीर है। मगर जो सत्यशाली पुरुषवीर काम को जीत लेता है उसे क्या कहना चाहिए ? काम–विजय का ढोग करने की बात दूसरी है, मगर सचमुच ही जो काम को पराजित कर देते है, उन्हे क्या कहेगे ? ऐसा महान् पराक्रमी पुरुष 'महावीर' कहलाता है।

साधु अकेले काम को ही नही जीतता, किन्तु क्रोध, मोह, मत्सरता आदि विकारो को भी जीतता है। इस प्रकार इन सब विकारो को जीत लेना क्या साधारण बात है?

मुनि के स्पष्टीकरण को सेनापति ने सहर्ष स्वीकार किया। उसने कहा– काम, क्रोध, मोह आदि समस्त विकारो को जीत लेना तो वीरता है ही, किन्तु इनमे से एक को जीत लेना भी वीरता है।

64 : व्यापारी की बेईमानी

सुनने मे आता हे कि कई लोग दो तरह के वाट–पेमाने रखते है। एक तो नियत–पेमाने से कम होते हैं और दूसरे अधिक। जब किसी को कोई वस्तु देनी होती हे, जव तो उन बाट–पेमाने से तोलते–नापते हे, जो कम होते हे ओर किसी से लेनी होती है, तव उन बाट–पमाने से तोल–नापकर लेते हें, जो अधिक होते हें। कई लोग पूरे बाट–पेमाने रखकर भी तोलने–नापने मे ऐसी चालाकी से काम लेते हें कि दी जाने वाली वस्तु तो कम जाए ओर ली जाने वाली वस्तु अधिक आए। तोलने–नापने मे किस तरह वेईमानी की जाती हे, इसके लिए एक दृष्टान्त दिया जाता हे।

सग्रामसिह नाम के एक सज्जन राजपूत थे। वे थे तो गरीव, परन्तु थे सत्यभक्त। उनकी स्त्री भी बडी पतिव्रता थी। दम्पती वडे धेर्य–पूर्वक अपनी गरीवी के दिन काटते थे। गरीबी से घवडा कर सत्य छोडने का तो वे कभी विचार भी नहीं करते थे।

सग्रामसिह की स्त्री गर्भवती थी। जब प्रसवकाल समीप आया, तब उसने अपने पति से कहा–'सन्तान–प्रसव के पश्चात् ही मुझे अजवायन आदि की आवश्यकता होगी। घर मे अजवायन था तो सही, परन्तु वह कही ऐरी जगह रखा गया हे जो मिलता नही हे। ठीक समय पर अजवायन के लिए दाड–धूप न करनी पडे इसलिए कही से एक सेर अजवायन उधार ले लेते तो अच्छा होता।'

पत्नी की वात के उत्तर मे सग्रामसिह ने कहा– म किसी से उधार लेना अनुच्ति समझता हू। जय पास मे पेसे होगे तब मोल ले आऊगा।

सग्राम की पत्नी ने फिर प्रार्थना की– 'हम सव गृहरथ हे, इसलिए ऐसे समय म उधार लेने म कोई हर्ज ता नही ह। अजवायन की आवश्यकता शीघ्र होगी आर पसा का क्या ठीक हे कि कव हाथ म आए ? फिर भी यदि

आप उधार लाना ठीक न समझे तो घर का कोई बर्तन बधक रखकर ले आवे।"

घर की एक थाली बधक रखकर अजवायन लाने के लिए सग्रामसिह बाजार गये। एक दुकान पर जाकर सग्रामसिह ने दुकानदार से कहा--मुझे एक सेर अजवायन दे दीजिए।

सग्रामसिह की गरीब दशा को दुकानदार जानता था, इसलिए उसने यह समझकर कि ये अजवायन उधार माग रहे हैं --सग्रामसिह की बात सुनी--अनसुनी कर दी। सग्रामसिह के दो--तीन बार कहने पर भी, जब दुकानदार ने ध्यान नही दिया, तब सग्रामसिह दुकानदार का अभिप्राय ताड गये और पास की थाली दुकानदार को बताते हुए कहा कि मैं उधार लेने नही आया हू। उसकी कीमत के बदले यह थाली बधक रखकर अजवायन लेने आया हू।

थाली देखकर दुकानदार ने सग्रामसिह की बात सुनकर एक सेर अजवायन तोल दिया और अजवायन की कीमत के बदले थाली बधक रख ली।

कपडे मे अजवायन लेकर सग्रामसिह अपने घर गये। घर पहुचने पर, उनकी स्त्री ने उनसे कहा-- मैंने आपको अकारण ही कष्ट दिया। घर मे रखा हुआ अजवायन मिल गया, अत इस अजवायन की आवश्यकता नही रही। पत्नी की बात सुनकर सग्रामसिह वैसे ही दुकानदार के यहा लौट गये और उससे कहा कि मेरे घर मे अजवायन मिल गया है, इसलिए आप अपना अजवायन लौटा लीजिए। दुकानदार नाराज होकर सग्रामसिह से कहने लगा-- मैं बेची हुई चीज नही लौटाता। अब इस अजवायन का तुम चाहे जो करो।

सग्रामसिह ने नम्रतापूर्वक दुकानदार से कहा -- 'आपके अजवायन का कुछ बिगडता तो है नही। अभी ही ले गया और अभी ही लौटा रहा हू। मेरे यहा जब अजवायन मिल गया, तब इस अजवायन का क्या करूगा? क्या ठीक है कि पैसे कब हाथ मे आवे ओर तब तक एक बर्तन आपके यहा बधक रखा रहेगा, जिसके बिना घर मे कष्ट होगा। यद्यपि आपको कोई हानि तो हुई नही है, फिर भी यदि आप चाहे, तो नुकसान--स्वरूप कुछ पैसे ले लीजिए।

सग्रामसिह की अतिम बात मान कर, दुकानदार ने कृपा दिखाते हुए अजवायन वापस लेना स्वीकार किया। उसने अजवायन को फिर तौला और

जिसे उसने सेर भर कहकर दिया था, उसे ही तीन पाव ठहरा कर सग्रामसिह से कहने लगा कि तुम वेईमानी करते हो । पाव भर अजवायन घर रख आये अब लौटाने आये हो ।

सग्रामसिह ने कहा— मैं अजवायन को जैसा ले गया था, वैसा ही लौटा लाया हू। इसमे से एक दाना गिरने भी नही दिया है, निकालना तो दूर रहा। ऐसी दशा मे एक दम से पाव भर अजवायन कैसे कम हो गया?

चोर दूकानदार सग्रामसिह की इस बात पर कब ध्यान देने वाला था? दूकानदार की यह बेईमानी देखकर सग्रामसिह को ससार से घृणा हो गई। वे दूकानदार को अजवायन लौटा कर, थाली भी उसी के यहा छोड आये और घर आकर ससार से विरक्त हो गये। उनके नाम से बना हुआ निम्न पद्य आज भी गाया जाता है।

संग्राम कहे सुणो साह जी, है वो को वो ही सेर।
लेतां देतां पाव को, पड्यो किसी विध फेर ?
पड्यो किसी विध फेर, कमी नहीं राखी काई।
तोबा बार हजार, इसी थे करी कमाई।।
साहब लेखो मांगसी, लेसी मूंडो फेर।
संग्राम कहे सुणो साहजी, है वो को वो ही सेर।।

65 : आत्म–निरीक्षण

एक बार बादशाह ने एक चोर को प्राण–दण्ड की आज्ञा दी। प्राण–हरण के लिए बादशाह ने उपाय बताया कि एक मैदान मे बहुत से पत्थर एकत्रित किये जावे और चोर को उस मैदान मे खडा किया जावे। फिर सारे नगर के लोग चोर को पत्थरो से मारे और इस प्रकार चोर का प्राण–हरण किया जावे।

बादशाह के आदेशानुसार एक मैदान मे पत्थर एकत्रित किये गये और ढिढोरे द्वारा सारे नगर के लोग वहा बुलाये गये। चोर को भी उस मैदान मे खडा किया गया। लोगो को बादशाह का हुक्म सुनाकर कहा गया कि सब लोग इस चोर को पत्थरो से मारे। बादशाह का हुक्म सुनकर सब लोग चोर को पत्थर मारने के लिए तैयार हुए। इतने मे ही वहा ईसा आ गये। चोर को पत्थर मारने के लिए तैयार हुए लोगो को रोक कर ईसा ने कहा–इस चोर को वही पत्थर मार सकता है जो स्वय चोर न हो। दूसरे के हको को जबरदस्ती हरण करना ही चोरी है, फिर चाहे प्रत्यक्ष रूप से दूसरे के हको का हरण किया जावे या परोक्ष रूप से, और सभ्य उपायो से हरण किया जावे, या असभ्य उपायो से। आप लोग अपने–अपने मन मे विचार कर देखे कि आप स्वय तो किसी के हको का हरण नहीं करते ? यदि आप लोग भी दूसरे के हको का हरण करते हैं तो फिर इस चोर को पत्थर मारने के आप अधिकारी कैसे हें? स्वय वही अपराध करना और उसी अपराध के लिए दूसरे को दण्ड देना न्याय नही है।

ईसा की उक्त बात का लोगो पर ऐसा प्रभाव पडा कि लोग हाथो से पत्थर डालकर अपने–अपने घर चले गये।

बादशाह के पास ईसा के नाम की पुकार गई कि ईसा ने पत्थर मारने के लिए आये हुए सब लोगो को भडका दिया, इससे सब लोग अपने–अपने

घर चले गये। बादशाह ने ईसा को पकड मगवाया और ऐसा करने का कारण पूछा।

ईसा ने बादशाह से कहा— आपने इस चोर को पत्थरो से मार डालने की आज्ञा दी है, परन्तु आप अपने हृदय मे भली—भाति विचार करके कहिये कि आप चोर नही हैं ? प्रत्यक्ष मे या परोक्ष मे, सभ्य उपायो से या असभ्य उपायो से, दूसरे के हको का हरण करना ही चोरी है। क्या आप दूसरो के हको का हरण नही करते ? यदि करते हैं तो क्या आप चोर नहीं हैं? ऐसी दशा मे, आप इसे पत्थर मार कर मार डालने की आज्ञा देने के अधिकारी कैसे रहे? आप पत्थर मार—मार कर चोरी को ही क्यो नहीं मार डालते? आप अपनी चोरी को तो मारते नही और इस चोर को मार डालने की आज्ञा देते हैं। यह कहा का न्याय है?

ईसा के उक्त कथन का बादशाह पर भी बहुत प्रभाव पडा। उसने पश्चात्ताप किया और ईसा को छोड देने के साथ ही चोर को भी छोड दिया।

66 : सभ्य चोरी

कई लोगो ने विज्ञापनवाजी को ही चोरी का साधन [illegible] पत्रो, हैण्ड–बिलो आदि द्वारा विज्ञापन करके, लोगो से आर्डर [illegible] हैं, परन्तु विज्ञापन के अनुसार न माल ही देते हैं, न कार्य ही करते हैं [illegible] द्वारा किस तरह चोरी की जाती है, इसके लिये एक विज्ञापन के [illegible] हुई बात इस प्रकार है –

एक विज्ञापनबाज ने मक्खियो से बचने की दवा का विज्ञापन [illegible] उसने अपने विज्ञापन मे लिखा कि केवल 1 आने के टिकट भेज [illegible] हम वह दवा भेजते हैं, जिसे भोजन करते समय पास रखने पर मक्खियां [illegible] सतातीं। लोगो ने उसके पास एक–एक आने के टिकट भेजे। विज्ञापन [illegible] टिकटो मे से तीन पैसे के टिकट तो अपनी जेब मे रखे और एक पैसे के कार्ड पर टिकिट भेजने वालो को उत्तर दे दिया कि "आप भोजन करते। समय एक हाथ हिलाते जाइये, फिर मक्खिया नही सता सकती।"

मतलब यह हैं आज के कानूनो मे असभ्य चोरियो की सख्या चाहे कम हो गई हो, परन्तु सभ्यता की ओट मे होने वाली चोरियो की सख्या मे तो वृद्धि ही सुनी जाती है। असभ्य उपायो से चोरी करने वाले को राज्य भी दण्डित करता है और समाज भी घृणा की दृष्टि से देखता है, परन्तु इन सभ्य उपायो से चोरी करने वाले को न तो राज्य ही दण्ड देता है और न समाज मे ही वह घुणित माना जाता है। हा, ऐसी चोरी करने वाला, समाज मे 'चतुर' या 'होशियार' अवश्य कहलाता है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि आज ससार का अधिकाश समाज चोरी के पाप मे पडा हुआ है।

67 : परोपकारी

ससार मे श्रमजीवी मूर्ख समझे जाते हैं , मगर देखा जाये तो ससार का अमन–चेन उन्ही पर निर्भर है। बुद्धिजीवी लोगो को प्राण देने वाले श्रमजीवी ही हैं। 'अन्न वै प्राणा अर्थात् अन्न ही प्राण हैं,' इस उक्ति के अनुसार श्रमजीवी कृषक ही तो बुद्धिजीवी लोगो को अन्न रूप प्राण देते हैं।

एक व्यक्ति को लोग मूर्खराज कहा करते थे। वह वास्तव मे मूर्ख नही, दयालु था। उसे किसी प्रकार तीन बूटिया मिल गई। उनमे यह गुण था कि उनमे से एक का सेवन करने से सव प्रकार के रोग नष्ट हो जाते थे। मूर्खराज के पेट मे दर्द था, अतएव एक बूटी उसने खुद खाली। उसने सोचा– अपने ऊपर प्रयोग करना ठीक भी होगा। इससे पता चल जायेगा कि वास्तव मे यह बूटी सब रोगो का नाश करने वाली हे या नही ? उसने बूटी खाई ओर उसके पेट का दर्द चला गया। बूटी की परीक्षा भी हो गई, मूर्खराज बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सोचा– वडी अच्छी चीज हे।

मुर्खराज घर आया। उसने देखा– घर का कुत्ता पडा तडप रहा हे। कुत्ते मुह से अपना दर्द नहीं बतला सकते। अतएव मूर्खराज को समझ मे नही आया कि कुत्ते को क्या दर्द हे ? उसने सोचा सम्भव हे, कुत्ता भूखा हो ओर भूख का मारा तडप रहा हो। वह घर मे से रोटी लाया। कुत्ते के सामने रख दी। मगर कुत्ते ने रोटी नही खाई। तव मूर्खराज ने विचार किया–इसे कोई दर्द मालूम होता हे। मेरे पास जो बूटी हे, वह फिर क्या काम आएगी ? एक बूटी से मेरा दर्द गया हे ओर दूसरी से इसका दर्द मिटा देना चाहिए।

क्या वुद्धिवादी लोग ऐसा करने को तेयार होगे ? क्या कुत्ते के प्राणो की उनके आगे इतनी कीमत हे कि ऐसी अनमोल बूटी देकर उसके प्राणो की रक्षा की जाये ? बुद्धिवादी ऐसा करना बूटी का अपव्यय समझेगा। मगर वह तो मूर्खराज ठहरा ? उसने एक बूटी रोटी मे मिलाकर किसी तरह कुत्ते

को खिला दी। थोडी देर मे कुत्ता ठीक हो गया ...
प्रकट करने लगा।

जो मनुष्य कुत्ते को एक भी टुकडा ...
नही है लेकिन मनुष्य क्या करता है? लड्डू खिला ...
भोकने से कब चूकता है ? लोग लड्डू खिलाने ...
है और उस पर भोकने लगते है। फिर भी मनुष्य ...
कोई कीमत नही है।

जब घर वालो ने देखा कि मूर्खराज ने ...
लिया है तो वे कहने लगे–हम इसे मूर्ख समझ ...
जान पडता है। इसने देखते ही देखते कुत्ते को ...
पूछा– क्या तुम्हे कुछ जादू आता है कि ...
दिया?

मूर्खराज ने बाकी बची बूटी दिखाकर कहा ...
हू, पर मेरे पास यह बूटी है। इस बूटी की करामात ...
है। इस बूटी से सब प्रकार के रोग मिट जाते है।

जो मूर्खराज अभी–अभी होशियार हो गया ...
गया। घर के लोग उससे कहने लगे– आखिर मूर्खराज ...
अमृत सरीखी अनमोल बूटी कुत्ते को खिलाकर ...
दिखाया। भला, यह कुत्ता अच्छा होकर क्या करेगा ? ...
किया होता तो कुछ लाभ भी होता।

बुद्धिमान कहलाने वाले अन्य लोग भी ऐसा ही ...
कुत्ते पर कौन दया करना चाहता है ? लेकिन किसी प्रकार ...
किसी का भला करना सच्ची करुणा नही है। निरीह भाव से–बदले ...
आशा न रखते हुए दूसरो की भलाई करना ही वास्तव मे करुणा है

भगवान् पार्श्वनाथ को साप से कुछ मिलना नही था। फिर भी ...
से प्रेरित होकर भगवान ने उसका उपकार किया ही था। करुणा ...
प्रकार का भेद–भाव नही रखती और जो लोभ मे पडा है उससे भेद–भाव
नही छूट सकता। अतएव करुणा करने के लिए मूर्खराज सरीखा ...
पडता है।

मूर्खराज के माता–पिता भी जब उसकी अवहेलना करने लगे और
कुत्ते को बूटी खिला देने के लिए उपालभ देने लगे तो उसने उत्तर दिया–
आप लोगो के लिए वह कुत्ता है और मेरे लिए मेरे ही समान प्राणी है। अतएव
उसके लिए मै अपने प्राण भी दे सकता हू।

घर वाले खिन्नचित्त होकर कहने लगे– चलो जो कुछ हुआ सो हुआ। अव एक वूटी है, वह किसी को मत देना।

मूर्खराज ने कहा– ठीक है। मे इसे नष्ट नही करूगा।

सयोगवश उस शहर के वादशाह की लडकी वीमार हो गई। लडकी वादशाह और उसकी पत्नी को अत्यन्त प्रिय थी। इसलिए वादशाह ने ढिढोरा पिटवाया कि जो मेरी लडकी को अच्छा कर देगा उसे मे मुहमागा इनाम दूगा। वादशाह द्वारा पिटवाये गये ढिढोरे को मूर्खराज के घर वालो ने भी सुना। उन्होने मूर्खराज से कहा– वूटी की वदोलत अब तेरा भाग्य खुल जायेगा। तेरे पास जो वूटी हे, उसे बादशाह की लडकी को खिला दे। लडकी अच्छी हो जायेगी तो उसके साथ तेरा विवाह हो जायेगा। तू सुखी हो जायेगा और तेरे साथ हम लोग भी सुखी हो जायेगे।

मूर्खराज ने माता–पिता आदि की बात स्वीकार करते हुए कहा–ठीक है, मै जाऊगा।

माता–पिता आदि ने मूर्खराज को स्नान करवाया, अच्छे कपडे पहनने को दिये और बादशाह के पास जाने को रवाना किया। मूर्खराज वूटी अपने साथ लेकर बादशाह के महल की तरफ चल पडा। मार्ग मे उसने देखा कि एक स्त्री को लकवा मार गया हे, जिसके कारण वह चल– फिर नही सकती। उसका हाथ बेकार हो गया हे ओर मुँह टेढा हो गया है। मूर्खराज ने उस स्त्री से पूछा –'माजी ! क्या हो गया है तुम्हे ?'

स्त्री– बेटा, देख ले। मेरी केसी वुरी हालत हे ! मेरा शरीर वेकार हो गया। पेट पालने के लिए दूसरो की मोहताज हो गई हू। वडा कष्ट हे !

मूर्खराज मन ही मन सोचने लगा– यह वूढी मा इतने कष्ट मे हे। मेरे पास वूटी हे। मे इसका कष्ट मिटा सकता हू। यह वूटी किस काम आएगी? गरीविनी वुढिया का कष्ट मिटा देना उचित हे।

मूर्खराज ने बुढिया से कहा– लो माजी ! यह वूटी खा लो। तुम्हारा रोग अभी चला जाएगा।

वुढिया बोली– वेटा मेरा रोग मिटा देगा तो मे समझूगी कि तू मेरे लिए ईश्वर हे।

मूर्खराज– म ईश्वर नही हू। मुझे यह वूटी कही मिल गई हे। इसका दूसरा क्या उपयोग हो सकता ह? तू इस खा ले।

वुढिया ने वूटी खाई। वह चगी हो गई। उसे सहसा अपना चगापन देख विस्मय के साथ आनन्द हुआ। मूर्खराज को सकडा आशीर्वाद दिए।

मूर्खराज सन्तोष के साथ अपने घर लौट आया। उसे आया देख घर वाले पूछने लगे– क्यो, बादशाह के पास नही गया ? लौट क्यो आया ?

मूर्खराज– मार्ग मे मुझसे एक अच्छा काम हो गया, इसलिए लौट आया हू।

घर वालो को बडी चिन्ता हुई। उन्होने पूछा– क्या हुआ, कुछ बता भी सही।

मूर्खराज ने बुढिया का वृत्तान्त कह सुनाया। घर वालो ने यह सुना तो क्रोध के मारे पागल हो उठे। कहने लगे– मूर्खराज कही के! तूने हमारे सारे मसूबे मिट्टी मे मिला दिये ! भगवान् पार्श्वनाथ को तो आप भी पुकारते हैं, मगर किसलिए पुकारते है ? आप उनके शिष्य कहलाते हे, मगर क्या करने के लिए? पार्श्वनाथ के शिष्य कहला कर भी क्या आप मे मूर्खराज सरीखी दया है ? मूर्खराज की निस्पृह दया कितनी सराहनीय है ! क्या आपका अन्त करण इस प्रकार की दया से जीवन मे एक बार भी कभी द्रवित हुआ है ? स्वय मे ऐसी दया होना तो दूर रहा, आपके घर का कोई आदमी इस मूर्खराज के समान कार्य करे तो आप उसे शायद घर से निकाल देने के लिए तैयार हो जाए ! ऐसी स्थिति मे आप भगवान् पार्श्वनाथ द्वारा दी गई दया का असली महत्त्व समझ सकते है ? अगर आप सचमुच ही दया का महत्व समझते है तो अछूतो को व्याख्यान सुनने देने से क्यो वचित रखते है ? मैं आपके मकान मे ठहरा हू। अतएव आपकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नही कर सकता। किसी को आने या न आने देने का मुझे अधिकार नही है। लेकिन इस विषय मे आप क्या चाहते है ? अगर हम आपके मकान मे न ठहरे होते और प्राचीन काल के मुनियो की तरह जगल मे ठहरे होते तो हमारा व्याख्यान सभी लोग सुन सकते थे। वहा किसी के प्रति किसी प्रकार का भेदभाव का व्यवहार नही किया जा सकता था। भगवान् के समवसरण मे बारह प्रकार की परिषद् होती थी। उसमे किसी के प्रति, किसी भी प्रकार का भेदभाव नही किया जाता था। अगर आपके अन्त करण मे भगवान् पार्श्वनाथ के समान दया है तो आप किसी भी जाति वालो को व्याख्यान सुनने से न रोके।

मूर्खराज के घरवाले क्रोध से बावले हो उठे। कहने लगे– यह मूर्ख कितना अभागा है ! पहले तो इसने कुत्ते को बूटी खिला दी और अब जब कि सभी का भाग्य चमकने वाला था, किसी बुढिया को बूटी देकर चला आया। ऐसा न किया होता और बादशाह की लडकी की बीमारी मिटाई होती तो खुद बादशाह का दामाद बन गया होता और हम लोगो को इस मकान

के बदले राजमहल मिला होता। हमारा घर धन से भर जाता और सब दु ख दूर हो गये होते ।

मूर्खराज ने अपने घरवालो से कहा– आप लोग मुझे क्षमा कीजिए। मेरा नाम मूर्खराज है । मै आप लोगो की बुद्धि के अनुसार काम कैसे कर सकता हू ? आप मुझसे वृथा आशा रखते हैं। मैं मूर्ख ठहरा, सामने किसी दुखी को देखता हू तो अपने को रोक नही सकता। मेरे पास जो कुछ होता है, सभी देने को उद्यत हो जाता हू और दे डालता हू। मेरी प्रकृति ही ऐसी बनी है। क्या करू?

मूर्खराज की सरल–सीधी बात सुनकर सन्तान–प्रेम के कारण माता–पिता आगे कुछ न कह सके। वे चुप रहे। सोचने लगे– इसका क्या दोष ? दोष अगर है तो हमारी तकदीर का ही है।

मूर्खराज के हृदय मे यह था कि जो दुखी सामने आए, उसका दु ख दूर करने के लिए, अपने पास जो भी कुछ हो, दे देना चाहिए। मगर आपके हृदय मे क्या है ? जरा अपने हृदय को टटोलो। आप भगवान् पार्श्वनाथ के शिष्य है। आपके अन्त करण मे दया का कैसा शीतल झरना बहना चाहिए ? भगवान् साप सरीखे जहरीले प्राणी के लिए भी हाथी से नीचे उतरे, उन्होने पास जाकर उसे उपदेश का अमृत पिलाया। मगर आप दया–दया की पुकार करते हुए भी मान के हाथी पर सवार बने रहते है। ऐसी दशा मे कैसे कहा जा सकता हे कि आपने दया को पहचाना है ? दया करने के लिए मूर्खराज के समान बनना पडता है। मूर्खराज को जैसी बूटी मिली थी, आपको वेसी मिल जाये तो आप उसे लेने को तैयार हो जायेगे । ओर कदाचित् मूर्खराज मिल जाये तो कहने लगेगे, 'यह तो मूर्खराज हे । हम इसे लेकर क्या करेगे? आप मूर्खराज का अस्थिपजर लो, यह मे नही कहता। में कहता हू कि मूर्खराज के गुणो को ग्रहण करो । जिस प्रकार मूर्खराज नि स्वार्थ ओर निष्पक्ष होकर दया करता था, उसी प्रकार आप भी दया करो।

खरगोश हाथी का क्या लगता था ? हाथी को उसकी रक्षा करने से क्या मिलने वाला था ? हाथी को खरगोश से कुछ भी आशा नही थी। फिर भी उसने घोर वेदना सहन करके भी खरगोश की रक्षा की। इसी तरह आप भी निष्काम भाव से दीन–दु खी पर दया करो। बुद्धि के चक्कर मे मत पडो। दया करने के लिए मूर्खराज के सदृश बनो। आपमे मूर्खराज की सी आदत नही है, इसी कारण आप किसी के मरने के बाद तो उसकी याद करके रोते

हो परन्तु जब वह जीवित रहता है, तब तक उसकी पूरी सम्हाल नही करते और उसे कल्याण के मार्ग पर नही लगाते।

यदि ससार मे मूर्खराज के समान ही प्राणी जन्मे जो दिन-रात दूसरे की दया करने मे ही लगे रहे तो ससार सुखी हो सकता है। यह खूब समझ लो कि ऐसे दयालु और परोपकारी मनुष्य ही ससार के शृगार है। ससार मे अगर कुछ सार है तो ऐसे मनुष्य का जीवन ही है। ऐसे दयावान मनुष्य ही ससार मे सुख और शान्ति का प्रसार करते हैं। मारकाट मचाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने मे सलग्न रहने वाले बुद्धिवादी लोग ससार को सुखमय नही बना सकते। मूर्खराज कपडे पहन कर बादशाह की बेटी को बूटी देने चला था, मगर मार्ग मे बीमार वृद्धा को देखते ही उसका दिल द्रवित हो गया और उसने उसे बूटी खिला दी। मूर्खराज का यह त्याग मामूली नही कहा जा सकता। उसे राजकुमारी पत्नी मिल सकती थी, कदाचित् राज्य का भी कुछ भाग उसे मिल सकता था और कीर्ति तो मिलती ही, पर उसने इन चीजो की तनिक भी परवाह नही की। सच्ची दया वही है, जहा लेश मात्र भी स्वार्थ नही है। मगर बुद्धि की खटपट त्याग कर मूर्खराज के समान बनने पर ही ऐसी दया की जा सकती है।

68 : मनोयोग

कई लोग चित्त की चचलता को सर्वथा ही रोक देने की चेष्टा करते है और उसी मे कल्याण समझते है, किन्तु ऐसा होना दु साध्य है। ज्यो–ज्यो आप चित्त को रोकने का प्रयत्न करेगे, वह अधिकाधिक चचल होता जायेगा। अतएव उसे सर्वथा रोकने का विचार छोड कर उसकी चाल की चौकसी करना और उसे टेढा–मेढा जाने से रोकना ही अधिक व्यवहार्य है। किसी अच्छे प्रकार के चिन्तन मे फसाये रहने से ही मन टेढी चाल से बचता है। वह खाली रहने पर बडा उत्पात मचाता है। इस सम्वन्ध मे एक उदाहरण लीजिए–

एक मनुष्य किसी सिद्ध पुरुष की सेवा करता था। सिद्ध ने उसकी मनोकामना पूछी। सेवक ने कहा– महाराज ! मैं खेती कर–कर के मरता–पचता हू, फिर भी पेट नही भर पाता। इससे विपरीत जब नगर मे जाकर नागरिक लोगो को देखता हू तो वे लोग अल्प परिश्रम करके भी खूब मजा–मोज लूटते ह। मे साल भर मे जितना कमाता हूँ, उतना वे एक ही दिन मे उडा देते हे। उन्हे देखकर मे भी उन्ही सरीखा धनी बनना चाहता हू। इसी इच्छा से आपकी सेवा कर रहा हू।

सिद्ध बोले– ठीक, मैं तुझे एक मन्त्र वतलाता हू। उस का जाप करने से एक भूत तेरे कब्जे मे आ जायेगा। वह तेरा सव काम किया करेगा ओर तेरी समस्त इच्छाए पूरी करता रहेगा।

किसान ने मन्त्र लिया ओर उसकी साधना की। साधना से भूत आया। वह वोला– अव में तुम्हारे आधीन हू। किन्तु एक भी क्षण म वेकार नही रहूगा। अगर वेकार रहा तो तुम्हे खाऊगा। यह मेरा स्वभाव हे।

किसान ने यह वात स्वीकार कर ली। फिर उसने भूत को काम वतलाना शुरु किया। खेत जोतना वोना मकान बनाना भोगोपभोग की

सामग्री प्रस्तुत करना आदि सभी कार्य उसने बात की बात मे पूरे कर दिये। यह सब काम पूरे करके भूत ने कहा– अब क्या करना है ? काम बताओ, नही तो मैं तुम्हे खाता हू।

किसान ने घबराकर कहा– भाई, थक गये होओगे। अब कुछ देर विश्राम कर लो ! फिर काम बतला दूगा।

भूत– अगर कोई काम न बतलाया तो मैं अपने नियम के अनुसार अभी तुम्हे खाऊगा।

किसान सकपकाया। सोचने लगा– इसकी अपेक्षा तो मै पहले ही अच्छा था। उस समय यह बला तो नही थी। अब इससे किस प्रकार पिड छुडाया जाये। क्यो न उन्ही सिद्ध पुरुष की सेवा मे जाऊ और उन्ही से अपनी रक्षा की भिक्षा मागू।

उसने भूत से कहा–तू मेरे पीछे–पीछे चल, अभी यही काम बतलाता हूँ। इस प्रकार दोनो सिद्ध पुरुष के पास पहुचे और सिद्ध पुरुष से किसान ने कहा–महाराज ! आप अपना भूत सम्भालिए ! बाज आए इससे ! कहा तक इसे काम बताऊ ? अगर कभी न बतला पाया तो मुझे खा जायेगा ! ऐसे भूत की मुझे आवश्यकता नही । न जाने कब मुझे खा जाये ।

सिद्ध ने किसान को सात्वना देते हुए कहा– भाई, डरो मत। इसे एक खम्भा बनाने का काम बतला दो। किसान ने सिद्ध के कथनानुसार भूत को खम्भा बनाने का काम बता दिया। भूत ने पलभर मे खम्भा तैयार कर दिया। तब सिद्ध ने कहा– अब इसे कह दो कि जब मै जो काम बताऊ, तब वह काम करना। शेष समय मे इस खम्भे पर चढते–उतरते रहना। भूत चढने–उतरने लगा।

इस चढने–उतरने से भूत हैरान हो गया। उसने कहा– माफ करो भाई मै तुम्हारे बुलाने पर आ जाया करूगा। शेष समय मे कार्य नही होगा तो तुम्हे नही खाऊगा।

किसान भी यही चाहता था। उसने प्रसन्नतापूर्वक भूत की बात मान ली। भूत अपना पिड छुडा कर भागा और किसान ने अपना पिड छूटा जान सन्तोष की सास ली और अपने घर आ गया।

यह उदाहरण सिर्फ मनोरजन के लिए नही है। इसमे अनेक तत्व भरे है। जैसे किसान ने भूत पैदा किया, उसी प्रकार आत्मा ने मन पैदा किया है। भूत काम लगे रहने पर शान्त रहता है और खाली रहने पर खाने को दौडता है। इस पकार मन भी निरन्तर क्रियाशील रहना चाहता है। खाली रहना उसे

पसन्द नही, उसे कोई न कोई चटपटी बात सदैव चाहिए। जब यह निकम्मा रहता है तो हमे खाने को दौडता है और इतना खाता है कि पागल बना कर छोडता है। यह भूत कोई साधारण नही है। सभी के पीछे यह पडा हुआ है। जब इसके लिए कोई काम न रहे तो इसे खम्भा बता देना चाहिए, जिस पर चढता–उतरता रहे। वह खम्भा कौनसा है ? भगवत् भजन का।

तुम समरन बिन इण कलियुग मे, अवर न को आधारो ।
मै वारी जाऊ तो समरन पर, दिन–दिन प्रीत वधारो ।।
पदम प्रभू पावन नाम तिहारो ।।

69 : स्वामी नहीं, ट्रस्टी

(1)

शिमला मे एक पुरुष और एक स्त्री को देखकर गाधीजी का हृदय आनन्दित हो उठा। वे दोनो गाधीजी के पास आये ओर उन्होने सौ रुपये का एक नोट निकाल कर एक सस्था की सहायता के लिए गाधीजी के सामने रखा। वह सस्था सेठ जमनालालजी बजाज द्वारा सचालित होती थी। गाधीजी ने कहा–'जमनालाल जी के पास पेसे की कमी नही। उनके पास काफी पैसा है। उस सस्था को सहायता की आवश्यकता नही है। अत आप यह रुपया अपने पास ही रहने दीजिए।

यह सुनकर आगन्तुक पुरुष ने कहा– 'जिस किसी कार्य मे रुपये की आवश्यकता हो उसी मे यह लगा दीजिए। अमुक कार्य मे रुपया लगाने की शर्त लगाना व्यर्थ है–भूल ह। इस बात को मेरी अपेक्षा आप अधिक समझते हे। अतएव अब इस विषय मे मैं आपसे कुछ न कहूगा। मैने सरकारी नौकरी करके पेतीस हजार रुपया बचाया ओर इस समय भी मेरी आय लगभग एक हजार रुपया मासिक हे। इस सम्पत्ति को मै अपनी नही समझता। चाहता हू कि आप इसकी व्यवस्था करे ओर अपने हाथ मे ले ले। इसी से आनन्द होगा। मे इस सम्पत्ति पर अपना आधिपत्य हटा लेना चाहता हू जिससे अपने उत्तरदायित्व से बच सकू।

मित्रो! आप लोगो के पास जो द्रव्य है, उसे अगर परोपकार मे सार्वजनिक हित मे ओर दीन–दुखियो को सहायता पहुचाने मे न लगाया तो याद रखना इसका ब्याज चुकाना तुम्हे कठिन हो जायेगा। ऐसे द्रव्य के स्वामी बनकर आप फूले नही समाते होगे कि चलो हमारा द्रव्य बढा हे मगर शास्त्र कहता हे ओर अनुभव उसका समर्थन करता हे कि द्रव्य के साथ क्लेश बढता हे। जब आप बेक से ऋण रूप मे रुपया लेते हे तो उसे चुकाने की

कितनी चिन्ता रहती है ? उतनी ही चिन्ता पुण्य रूपी बेक के द्रव्य को चुकाने की क्यो नही करते ? समझ रखो यह सम्पत्ति तुम्हारी नही हे। इसे परोपकार के अर्थ अर्पण कर दो। याद रखो कि दूसरे की यह जोखिम मेरे पास धरोहर हे। अगर इसे अपने पास रख छोडूगा तो यह तो यही रह जायेगी लेकिन इस का बदला चुकाना मेरे लिए बहुत भारी पड जायेगा।

श्रावक के तीन मनोरथो मे से एक मनोरथ यह भी हे कि–'लोभ की वृद्धि करने वाले ओर खराबी पैदा करने वाले परिग्रह का त्याग करके कव मे आत्म–कल्याण मे लगूगा ? अतएव परिग्रह के पाश को ढीला होने दो–उससे बाहर निकलने का प्रयत्न करो।

गाधीजी ने आगन्तुक पुरुष से कहा–'तुम इस धन के ट्रस्टी रहो। जब किसी कार्य मे इसे लगाने की आवश्यकता होगी, तब उस काम मे लगा दिया जायेगा।

(2)

एक महिला को उसके पिता से बहुत–सी सम्पत्ति मिली। उसका पति आचारभ्रष्ट हे ओर उसने दूसरा विवाह भी कर लिया है। वह महिला उससे अलग रहती हे । जेसे पूर्वोक्त पुरुष ने अपनी सम्पत्ति का त्याग किया उसी प्रकार वह भी अपनी पेतृक सम्पत्ति का दान करना चाहती हे। वह देशसेवा के फलस्वरूप दो बार जेलयात्रा कर चुकी हे ओर चर्खा आदि कातकर उसी की आमदनी से अपना निर्वाह करती हे। वह भी एक वार गाधीजी के पास आई ओर अपनी सम्पत्ति के दान के विषय मे गाधीजी से निवेदन किया। गाधीजी ने उससे भी वही वात कही कि उस सम्पत्ति को तुम अपनी न समझ कर अपने को उसका ट्रस्टी मानो ओर उसे सम्भालो।

मित्रो ! अगर आप लोग भी अपनी सम्पत्ति से पाप न करके उसके ट्रस्टी भर वने रहे तो क्या उस सम्पत्ति को कुछ दाग लग जायेगा? हा उस अवस्था मे अपने भोग–विलास मे उसका दुरुपयोग न कर सकोगे। लेकिन वहुत लोगो की तो ट्रस्टी वनने की भावना नही होती। क्या श्रावक की जिन्दगी ऐसी होती हे कि वह धन के कीचड मे फसा रहे ओर उससे अपनी आत्मा को मलिन वना डाले उसे परोपकार मे न लगावे? क्या श्रावक का धर्म पर विश्वास नही हे? वक पर विश्वास करके उसम लाखो रुपगा जमा करा देन वाला को धर्म रूपी वेक पर क्या विश्वास नहीं हे ?

70 : समझदारी

भक्त तुकाराम का कहना है कि निन्दक का घर मेरे समीप ही हो तो अच्छा है। वह जब–तब मेरी निन्दा करेगा और उसके द्वारा की हुई निन्दा से मुझे बहुत कुछ जानने को मिलेगा। इससे मेरी अवनति रुकेगी और उन्नति होगी। मेरी आत्मा की अशुद्धि हटेगी और शुद्धि की वृद्धि होगी।

किसी कवि ने राजा से कहा –'आप के शत्रु चिरजीव हो।' यह विचित्र आशीर्वाद सुनकर राजा नाराज हो गया। दूसरे सुनने वालो को भी इस आशीर्वाद से बुरा लगा। मगर उनमे एक पकी हुई बुद्धि का समझदार आदमी था। उसने राजा से कहा– आप यह आशीर्वाद सुनकर नाराज क्यो होते है? आपको तो प्रसन्न होना चाहिए।

राजा झुझलाकर कहने लगा– यह तो शत्रुओ के लिए आशीर्वाद दे रहा है ? तब उस समझदार आदमी ने कहा– ऐसा आशीर्वाद देकर कवि ने आपका हित ही चाहा है। जब आपके शत्रु जीवित रहेगे तो आप मे बल, बुद्धि पराक्रम और सावधानी जागृत रहेगी। आप सावधानी रखने के कारण ही राजा है। राजा को सदा सावधान रहना चाहिए। सावधानी तभी रह सकती है, जब शत्रु का भय हो। शत्रु होने पर ही होशियारी आती है। इस प्रकार कवि ने आपको दुराशीष नही वरन् शुभाशीष ही दिया है। कवि ने सूचित किया है कि आप आलसी और भोग के कीडे मत बन जाना किन्तु बलवान् और सावधान् रहना। इसमे आप के नाराज होने योग्य कोई बात नही।

•

71 : अदृश्य शक्ति

एक मजदूर था। मजदूरो की स्थिति बडी बेढगी होती है। अगर वह किसी दिन मजदूरी न करे तो उसे भूखा रहना पडता है। खास कर वर्षा ऋतु मे तो मजदूरो की हालत और भी खराब हो जाती है। इस ऋतु मे इन्हे बराबर काम नही मिलता। एक दिन जोरो की वर्षा हुई और इस कारण उस मजदूर को कोई काम नही मिला। वह इसी चिन्ता मे बैठा था कि कल क्या होगा? इतने मे एक सेठ उसके घर आया। उसने कहा–यह दो हजार की थेली है। अगर अमुक गाव मे अमुक के घर पहुचा आओ तो आठ आना मजदूरी दी जायेगी। मजदूर ने थेली ले ली और नियत जगह पहुचाना स्वीकार कर लिया।

उसी मजदूर के घर के पास एक मकरानी पठान रहता था। उसने सोचा–यह रुपयो की थैली लेकर गाव जा रहा है। आज लूटने का अच्छा अवसर मिला है। रास्ते मे मजदूर के प्राण लेकर रुपया लूट लेना कोई कठिन बात नही है। यह सोचकर पठान ने कहा–मुझे भी किसी काम से उस गाव जाना हे।

मजदूर ने कहा– चलो , एक से दो भले। अच्छा हुआ कि तुम्हारा साथ मिल गया।

पठान ने अपनी बन्दूक ले ली। उसने सोचा–इसी बदूक से मजदूर को काम तमाम कर दूगा ओर उससे रुपया ले लूगा। बेचारे भोले मजदूर का पठान की बदनीयत का पता नही था। दोनो रवाना हुए। जब वे रास्ते मे जा रहे थे तो अचानक घन–घोर घटा छा गई और मूसलाधार पानी बरसने लगा। दोनो के कपडे पानी मे भीग गए। दोनो एक सघन पेड के नीचे जा खडे हुए। वर्षा होते देखकर मजदूर कहने लगा–लोग परमात्मा–परमात्मा चिल्लाते हैं परमात्मा है कहा ? अगर सचमुच परमात्मा होता तो हम जेसे गरीबो के ऊपर

दया न करता ? देखो न, मेरे सारे कपडे पानी से तरबतर हो गए हैं और दूसरे कपडे मेरे पास हैं नही।

मजदूर की बात सुनकर पठान ने कहा--तुम यही समझ लो कि खुदा ने तुम्हारे ऊपर आज बडी महरबानी की है।

मजदूर– पानी बरसने मे मेरे ऊपर खुदा की क्या महरबानी हुई ?

पठान– देख, यह बन्दूक मैं इसलिए लाया था कि रास्ते मे तुम्हे इससे ठिकाने लगा दूगा और तुम्हारे पास जो रुपये है, छीन लूगा। मगर कुदरत को तुम्हारी मौत मजूर नही थी। मूसलाधार पानी बरसा और बन्दूक मे डाला बारूद गीला हो गया। अब यह बन्दूक बेकार है। इस प्रकार तुम कुदरत की मेहर से ही आज बच सके हो। पानी न बरसा होता तो आज तुम इस बन्दूक के शिकार हो गए होते और तुम्हारे पास के रुपये मेरे कब्जे मे होते। तुम चाहो तो बदला ले सकते हो। मगर सच्ची बात मैने तुम्हे बता दी।

मजदूर पठान की बात सुनकर प्रसन्न हुआ। उसे ऐसा लगा मानो उसने नया जीवन पा लिया हो। वह अपने प्राणो की रक्षा करने के लिए परमात्मा का धन्यवाद देने लगा। वह सोचने लगा–"मै बाहर ही बाहर देख रहा था, पर कौन जानता है कि भीतर ही भीतर कुदरत की करामात कैसी है ? दरअसल दु ख का कारण अज्ञान है। अज्ञान के कारण ही मजदूर वर्षा और परमात्मा को कोस रहा था।

72 : दूसरा विवाह

साधारण लोग अपने विषय मे जो बात सोचते है वही दूसरो के विषय मे नही सोचते। इसी कारण घोर अन्याय हो जाता है। आज पुरुषो मे यह पद्धति प्रचलित हो गई है कि अपना स्वार्थ देखते है। उन्हे लेश मात्र भी यह विचार नही आता कि जो काम स्वय उन्हे पसन्द नही है, वह स्त्रियो को कैसे पसन्द आता होगा। इस विषय मे गुलिश्ता मे एक कथा कही गई है। उसमे कहा है–

एक अमीर की स्त्री मर गई। अमीर के मित्रो ने उससे कहा–तुम्हारे पास अखूट धन–सम्पत्ति है। तुम दूसरा विवाह कर लो।

अमीर ने कहा– मुझे बूढी स्त्री पसन्द नही है।

मित्र–यह कौन कहता है कि तुम बुढिया के साथ विवाह करो। किसी नवयुवती के साथ शादी कर लो। तुम्हे किस चीज की कमी है?

अमीर – तुम मेरे कहने का मतलब नही समझे। मेरे कहने का आशय यह है, जब मुझे बूढी स्त्री पसन्द नही तो नवयुवती स्त्री को मुझ जैसा बूढा क्यो पसन्द आने लगा ? मैं अपना ही मतलब समझू और दूसरो के हित–अहित का विचार न करू, यह किस प्रकार उचित कहा जा सकता है ?

क्या आपको अमीर की बात युक्तिसगत जान पडती है ? अगर वास्तव मे आप अमीर के कथन को सत्य और न्यायसगत समझते है तो आपको विवाह–सम्बन्धी अन्यायपूर्ण कार्यो मे कदापि भाग नही लेना चाहिए। जहा किसी वृद्ध का तरुणी के साथ विवाह होता हो तो वहा आपको सम्मिलित नही होना चाहिए। वृद्ध–विवाह मे भाग लेने से तुम पाप के भागी हो ओर उसमे अपना सहयोग न देकर अपने आपको पाप से बचा सकते हो।

73 : चार ब्राह्मण

अगर सब जीवो को मित्र बनाने से काम नही चलेगा तो क्या सब को शत्रु मानने से ससार का काम ठीक चलेगा ? अगर आपका यह विचार हो कि सब शत्रु बनाने से ही ठीक काम चल सकता है तो आप भी सबके शत्रु माने जायेगे और इस दशा मे ससार मे एक क्षण का जीवन भी कठिन हो जायेगा। सब को मित्र बनाने से क्या फल होता है और शत्रु बनाने का परिणाम क्या निकलता है, इसके लिए एक उदाहरण लीजिए–

किसी दातार ने चार ब्राह्मणो को एक गाय दी। चारो भाई–भाई थे, मगर अलग–अलग हो गये थे। उनके चूल्हे अलग–अलग जलते थे और दरवाजे भी अलग–अलग हो गये थे। दान मे मिली हुई गाय पहले बडे भाई के यहा लाई गई। उसने सोचा –'गाय को आज मै खिलाऊगा तो कल उसका दूध होगा। वह दूध मेरे किस काम का ? कल वह दूसरे के यहा चली जाएगी और वही कल दूध दुहेगा। ऐसा सोचकर उसने दूध तो दुह लिया, मगर खाने को नही दिया। दूसरे दिन दूसरा भाई गाय को अपने घर ले गया। उसके मन मे भी यही विचार आया–कल यह दूसरे घर चली जायेगी, फिर आज खिलाने से मुझे क्या लाभ है ? कल का दूध तो मुझे मिलना नही। अतएव इसके स्तनो का दूध ले लू। कल वह आप खिलाएगा। ऐसा सोचकर उसने भी दूध दुह लिया और खाने को कुछ नही दिया। शेष दो भाइयो के घर भी यही हुआ। भूख के मारे गाय की हड्डिया निकल आई। चार ही रोज मे गाय का कायाकल्प हो गया। उसकी दुर्दशा देखकर लोग कहने लगे –यह ब्राह्मण है या कसाई ! इन्हे गाय की रक्षा करते हुए दूध लेना था, मगर यह तो उसका खून पीने पर उतारू हो गये है। इसी प्रकार किसी दूसरे दाता ने भी किन्ही चार भाइयो को गाय दी। उन्होने सोचा –'दाता ने उदारतापूर्वक कृपा करके हमे गाय दी है तो हम उसे माता के समान मान कर उसकी रक्षा करेगे। उसे किसी प्रकार का कष्ट न देगे । इस प्रकार विचार कर उन्होने गाय को खिलाया–पिलाया। उन्हे दूध भी मिला और गाय की रक्षा भी हुई।

74 : छोटा और बड़ा

एक अमीर अपनी बाए हाथ की छोटी अगुली मे अगूठी पहने था। किसी गरीब ने उसके पास आकर पूछा–'दाहिना हाथ बडा होता हे या बाया?' अमीर ने उत्तर दिया– 'जो हाथ ज्यादा काम करता हे, इस कारण वही बडा माना जाता हे।' अब गरीब ने कहा– तो आपने अगूठी बाए हाथ मे क्यो पहन रखी है ? दाहिने हाथ को क्यो नहीं पहनाई ? अमीर बोला–मेंने पहले ही कहा कि जो ज्यादा काम करे, वही बडा है। जो छोटे से काम कराता है, वह बडा नही है। मैने बाए हाथ मे अगूठी पहन रखी हे, इससे दाहिने हाथ का बडप्पन आप ही प्रकट हो जाता हे। छोटे को देना ही तो बडप्पन है। बडप्पन और क्या हे ? मेंने दुनिया को यही सीख देने के लिए बाए हाथ मे अगूठी पहनी है। इस से यह जाहिर हो जाता है कि छोटे के श्रृगार करा दो, जिससे बडे के बडप्पन को धक्का न लगे।

गरीब ने फिर अमीर से पूछा– अच्छा, यह अगूठी बडी अगुली को न पहना कर सब से छोटी को किसलिए पहनाई हे ?

अमीर ने कहा– दाहिना हाथ बडा ओर बाया हाथ छोटा होता हे, यह बात तो मैं बता चुका हू, लेकिन यह और जान लो कि इस हाथ मे यह उगली सब से छोटी है। सबसे छोटी होने के कारण ही इसे अगूठी पहना रखी हे। छोटे की सार सम्भाल करने वाला बडा कहलाता हे।

जो बडा कहलाने वाला पुरुष इस बात का ध्यान रखता हे, वह नीचे नही गिरता, किन्तु चढता ही जाता हे। यद्यपि बडप्पन ओर छुटपन सापेक्ष हे, तथापि छोटो की रक्षा करने वालो का बडप्पन बढता ही हे, घटता नही।

अमीर की बात सुनकर गरीब ने कहा –'आपके विचार बडे उत्तम हें, इसी कारण आप बडे हैं। जो मनुष्य अपने शरीर के सम्बन्ध मे ऐसा विचार रखता है, वह छोटो को क्यो नही बढाएगा?

75 : सत्यनिष्ठा

मनुष्य को जब तक अनुभव नही हो जाता, तब तक सत्य का महत्व उसकी समझ मे नही आता। जब उसके सिर पर कोई ऐसी आपत्ति आ पडती है, जो असत्य का आश्रय लेने से उत्पन्न हुई हो तो तत्काल ही समझ जाता है कि सत्य का क्या महत्व है। इसके लिए प्राचीन कथा का उदाहरण दिया जाता है–

एक मनुष्य ने अपने पुत्र को नाना प्रकार की शिक्षाए देने का प्रयत्न किया, अनेक प्रकार से उसे समझाने की चेष्टा की, किन्तु उसके दिमाग मे एक भी न जची और वह कुसगति छोडने को तैयार न हुआ। अन्तत कुसगति का जो फल हो सकता है, वही हुआ। धीरे–धीरे वह चोरी करने लगा। पिता ने अनेक प्रयत्न किये, किन्तु सब निष्फल। वह लडका सुधर न सका और दिन–दिन चौर्य–कर्म मे नैपुण्य प्राप्त करने लगा। पिता से तिरस्कृत होकर भी उसने अपना काम बन्द न किया और एक दिन राजा के भण्डार पर छापा मारा।

राजा की निपुणता से चोरी का पता लग गया, चोर भी पकडा गया। पकड लिये जाने पर उस लडके ने यह जाल रचा कि जिस दिन राज–भण्डार मे चोरी हुई, उस दिन मैं नगर मे था ही नहीं। इस बात को उसने अपने मित्रो की गवाही दिला कर प्रमाणित कर दिया। चालाकी पूरी चली, यह देखकर राजा दग रह गया। उसने अपने मन मे सोचा कि यद्यपि चोरी इसी ने की है तथापि जब तक इसकी चोरी नियमानुसार प्रमाणित न हो जाये, तब तक इसे चोर कैसे ठहराया जा सकता है ? इतने ही मे राजा को युक्ति याद आई। उस लडके का पिता सत्य–भाषण के लिए प्रख्यात था। राजा ने उसी की साक्षी पर मुकदमे का निर्णय छोड दिया।

लडके ने जब यह जाना कि मेरे पिता की साक्षी पर ही मेरा भाग्य निर्भर है तो वह दौडा हुआ अपने पिता के पास गया। वहा जाकर उसने पिता

के पैरो पर गिरकर प्रार्थना की यद्यपि चोरी मैंने ही की है, तथापि यदि आप राजा के सम्मुख यह कह देगे कि उस दिन मेरा लडका नगर मे नहीं था तो मै बच जाऊगा।

लडके ने यद्यपि उक्त प्रार्थना नम्रता पूर्वक की, किन्तु वह श्रावक ऐसा न था। उसे सत्य की अपेक्षा अपना अन्यायी पुत्र कदापि प्रिय नही हो सकता था। वह एक विद्वान् के निम्न कथन का कट्टर समर्थक था कि–

आत्मार्थे वा परार्थे वा, पुत्रार्थे वापि मानवा. ।
अनृत ये न भाषन्ते, ते बुधा स्वर्गगामिनः ।।

'जो अपने या पराये मतलब के लिए या अपने पुत्र के लिए भी असत्य नही बोलते, वे ही बुद्धिमान देवलोक को जाते हैं।'

पिता ने उत्तर दिया– यद्यपि पिता होने के कारण तेरी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है, लेकिन 'सत्य' मेरा सर्वस्व है। सत्य ही मेरा परम मित्र है। सत्य से ही मेरी रक्षा होती है, उस परम प्रिय सत्य को छोड कर, मैं तेरे अन्याय का समर्थन करने के लिए झूठ बोलू, कदापि सम्भव नही है। यदि सत्य से तू बचता हो, तो मै सब कुछ कर सकता हू।

अन्यायी मनुष्य मे क्रोध बहुत होता है। पिता का यह उत्तर सुनकर इस लडके का क्रोध उमड पडा। उसने कहा–तुम मेरे बाप क्यो हुए ? पुत्र पर दया नही आती और उसकी जान लिवाने को तैयार हो । क्या तुम ही अनोखे बाप हो या दुनिया मे और भी किसी के बाप हैं ? अच्छी सत्य की पूछ पकड रखी है । लडका चाहे बचे या मर जाये, किन्तु आप अपने सत्य को ही चाटा करेगे ।

पिता – पुत्र । तुझ पर मेरी अनन्त दया हे लेकिन तेरे सिर पर इस समय क्रोध का भूत सवार है। इसी से मेरा अच्छा स्वरूप भी तुझे उल्टा दीख रहा है। ऐसा न होता तो तू स्वय समझता कि मै तुझे बचाने के लिए असत्य भाषण कर दू तो मेरा 'सत्य–व्रत' भग हो जायेगा।

पुत्र– तुम्ही मेरी जान ले रहे हो।

पिता– मैं तेरी जान नहीं ले रहा हू, लेकिन तेरा पाप तेरी जान ले रहा है। मैं तो तेरी रक्षा ही चाहता हू। इसलिए तुझे बचपन से ही बुरे कर्म से बचने का उपदेश देता रहा। लेकिन तू मेरी शिक्षा की उपेक्षा करता रहा। अब भी मैं तुझे यह उपदेश देता हू कि सत्य की शरण जा, सत्य ही तेरी रक्षा करेगा। यदि असत्य से प्राण बच भी गये, तब भी मृतक के ही समान हे और सत्य से प्राण गये, तब भी जीवन से श्रेष्ठ है।

निश्चित समय पर राजा ने श्रावक को बुलाया ओर गवाह के कठघरे मे खडा करके पूछा–कहिये सेठजी जिस दिन राज्य–भण्डार मे चोरी हुई उस दिन क्या तुम्हारा लडका यहा नही था ओर उसने चोरी नही की हे ?

सेठ– उस दिन वह नगर मे ही था और चोरी उसी ने की है।

धन्य है इस श्रावक को, जिसने अपने पुत्र के लिए भी झूठ बोलना उचित न समझा। यदि वह चाहता तो झूठ बोलकर अपने लडके को निरपराध सिद्ध कर सकता था, लेकिन उसने अपने लडके से भी सत्य को कही विशेष उच्च समझा। वह श्रावक तो अपने लडके के लिए भी झूठ नही बोला, लेकिन आज के लोग कौडी–कौडी के लिए झूठ बोलने मे नही हिचकिचाते। इतना ही नही बल्कि अकारण ही हसी–मजाक और अपनी या दूसरे की प्रशसा तथा निदा के लिए भी झूठ को ही महत्त्व देते है। कहा तो यह श्रावक जिसने प्राण–पिय सन्तान को भी सत्य के आगे तुच्छ समझा और कहा आज के लोग जो सत्य को कौडियो से भी तुच्छ समझते है। अस्तु। श्रावक चाहता तो झूठ बोल सकता था, लेकिन वह इस बात को जानता था कि पुत्र की रक्षा वास्तव मे सत्यवादी ही कर सकता है, मिथ्यावादी नही।

सेठ का उत्तर सुनकर राजा धन्यवाद देता हुआ सेठ से कहने लगा–तुम्हारे जेसे सत्यवादी सेठ मेरे नगर मे है, यह जानकर मेरे आनन्द की सीमा नही रही। मेरे नगर मे जैसे चोर है, वैसे ही सर्वथा सत्य बोलने वाले मनुष्य भी मौजूद है यह अति आनन्द की बात है। मै तुम पर प्रसन्न हू। तुम इच्छानुसार याचना कर सकते हो। मै तुम्हारी इच्छा पूर्ण करने की प्राणपण से चेष्टा करूगा।

सेठ प्रतीक्षा कर रहा था कि देखे लडके को उसके अन्याय का क्या दण्ड मिलता हे ? किन्तु राजा के मुख से यह सान्त्वना पूर्ण वचन सुनकर वह एकान्त मे जा बेठा और अपने लडके को बुलाकर उससे बातचीत करने लगा।

पिता– पुत्र तेरे ऊपर चोरी का अपराध प्रमाणित हो गया हे। अब तुझे जीवित रहने की इच्छा हे या मरने की ? तू मुझे कहता था कि झूठ बोलकर बचाओ किन्तु अब देख कि सत्य बोल कर भी मे तुझे बचा सकता हू। धर्म रहे तो जीवित रहना उत्तम हे किन्तु यदि धर्म जाने की स्थिति उत्पन्न हो जाये तो धर्म जाने के पूर्व मृत्यु ही श्रेष्ठ हे। यदि तुझे जीवित रहने की इच्छा हो तो पाप–कर्मो को छोडकर सत्यमार्ग ग्रहण कर। यदि तू मेरे धर्म का अधिकारी बनना चाहे तो मै राजा से तुझे छोड दने की प्रार्थना करू। इसके पश्चात यदि मै तेरा आचरण अच्छा देखूगा तो तुझे अपना उत्तराधिकारी बनाऊगा अन्यथा नही।

पुत्र– आपने पहल भी मुझे यही उपदेश दिया था किन्तु म वरावर कुमार्ग पर चलता रहा। यदि अव मे जीवित वच जाऊगा तो सदेव अच्छा आचरण रखूगा। पिताजी ! थोडी देर पहले आप मुझे पिशाच के समान मालूम होते थे , किन्तु अव आपके वचन सुनकर मेरी दृष्टि ऐसी स्वच्छ हो गई हे कि आप मुझे ईश्वर के समान पवित्र मालूम होते हे। जहा सत्य हे वहीं ईश्वर हे। यह वात में आज समझ सका। आप धन्य हैं, जो अपने सत्यव्रत के सम्मुख पुत्रप्रेम को भी हेय समझते हैं। मे आपको प्रणाम करता हू ओर प्रतिज्ञा करता हूँ कि भविष्य मे मे सत्य का पालन करूगा। यदि में अपने इस व्रत का ठीक तरह से पालन न कर सकूगा तो प्राण त्याग दूगा। अव आपकी इच्छा पर निर्भर हे–चाहे जिलावे या मारे।

हृदय की साक्षी हृदय करता हे। जव सामने वाले का हृदय स्वच्छ होगा तो तुम्हारा भी हृदय स्वच्छ ही रहेगा।

लडके की स्वच्छ हृदय से कही हुई वात सुनकर सेठ राजा के पास गया ओर प्रार्थना की कि मेरा लडका भविष्य मे सत्यमार्ग पर चलने का सच्चे हृदय से प्रण करता हे, अत में आप से यही चाहता हू कि आप उसे छोड दे। मुझे ओर किसी चीज की आवश्यकता नही हे।

राजा ने कहा– हम अपराधी को इसलिए दण्ड देते हे कि वह भविष्य मे अपराध न करे। किन्तु यदि कोई अपराधी सच्चे दिल से अपने अपराध पर पश्चात्ताप कर ले, तो हमे उसके छोड देने मे कोई आपत्ति नही हो सकती। मे तुम्हारे विश्वास दिलाने पर इसे छोडता हू ओर आशा करता हू कि यह अव तुम्हारे आदर्श से पवित्र वन जायेगा।

पहले के राजा लोग कुमार्ग से सन्मार्ग पर लाने के लिए ही अपराधी को दण्ड दिया करते थे, आजकल की तरह जेलो मे ठूसकर केवल वदियो की सख्या वढाना उन्हे अभीष्ट नही था। वे राज्य मे शान्ति ओर प्रजा को सुखी वनाने के ही इच्छुक रहा करते थे। यदि अपराधी सच्चे हृदय से अपन अपराध का पश्चाताप करके भविष्य मे फिर अपराध न करने की प्रतिज्ञा करता तो उसे क्षमा कर दिया जाता था। ऐसी ही उदारता का प्रभाव मनुष्य के मन पर पडा करता हे ओर भविष्य मे वह कुमार्ग पर चलने की इच्छा नहीं करता।

76 : सत्य–भाषण

सत्यव्रत के पालने वाले मनुष्य मे ऐसी शक्ति होती है कि उसके एक बार के सम्पर्क से ही पतित से पतित व्यक्ति अपना कल्याणमार्ग देख लेता है। जिसने सत्यव्रत का एक देश भी ग्रहण कर लिया, वह भविष्य मे पूर्ण सत्यव्रती बन सकता हे। सत्य के प्रभाव से परिस्थितिया ही ऐसी उपस्थित होती है कि वे उस मनुष्य को उत्थान की ओर ले जाती है। इसके लिये जैन ग्रन्थो मे वर्णित जिनदास नाम के एक श्रावक की कथा इस प्रकार हे –

राजगृह नगर मे एक बडे व्यापारी के यहा जिनदास नाम के श्रावक कार्यवश गये। जिनदास उस समय बडे आदमियो मे गिने जाते थे। व्यापारी ने उन्हे अपना स्वजातीय अतिथि समझ कर भोजन का विशेष रूप से प्रबन्ध किया। जिनदास ने व्यापारी से कहा–आप मेरे लिए कष्ट न कीजिए। मेरा नियम हे कि जिसकी आय सत्य द्वारा होती है मै उसी के यहा भोजन करता हूँ। मै विश्वास कर लेता हू कि जिसकी आय असत्य से होती है, उसके यहा भोजन नही करता। यदि आप मुझे अपने यहा भोजन कराना चाहते है तो अपना आय–व्यय का लेखा मुझे बतलाइये। उससे यदि विश्वास हो गया कि आपकी आय सत्य से होती हे तो मुझे भोजन करने मे किसी प्रकार की भी आनाकानी न होगी।

जिनदास श्रावक का व्यापारी से यह कहना कि–'मै उस मनुष्य के यहा भोजन नहीं करता जो असत्य से जीविकोपार्जन करता है यथार्थ है। यह वात अनुभवसिद्ध है कि जो मनुष्य जेसा भोजन करता है, उसकी बुद्धि भी वेसी ही हो जाया करती है। श्रीकृष्ण ने इसी सिद्धान्त को सामने रखकर दुर्योधन के यहा भोजन करने से इन्कार कर दिया था और विदुर के यहा जाकर साधारण भोजन किया था।

कई लोग कहते हे कि सामायिक करते समय न मालूम क्यो हमारा चित्त स्थिर नही रहता लेकिन ऐसा कहने वाले लोग यह विचार नही करते

कि अनीति से पेदा किया हुआ अन्न पेट मे होने पर मन स्थिर केसे रह सकता हे । चित्त स्थिर तभी रहेगा, जव नीतिपूर्वक अर्जित अन्न पेट मे होगा तथा नीतिपूर्वक जीवन बिताने की भावना होगी।

जिनदास इस बात का अनुमान पहले ही कर लिया करते थे कि इसका भोजन कैसा है ? इसलिए उन्होने व्यापारी से अपना आय–व्यय का लेखा बताने को कहा। व्यपारी ने उत्तर मे कहा कि आप तो स्वय नीतिज्ञ हें ओर भली–भाति जानते है कि अपनी आय का भेद दूसरे को न बताया जाये। ऐसा होते हुए भी मुझे आपका आय–व्यय का लेखा वताने के लिए बाध्य करना, उचित कैसे कहा जा सकता है?

जिनदास– आप अपना लेखा नही बताना चाहते हैं तो आपकी इच्छा। मै अपने निश्चयानुसार बिना विश्वास किये भोजन करने मे असमर्थ हू।

व्यापारी जिनदास के शब्दो को सुनकर विचारने लगा– इनकी प्रतिज्ञा तो ऐसी है और ऐसे सत्पुरुष को बिना भोजन कराये घर से जाने देना भी अपने भाग्य को बुरा बनाना है। ऐसी अवस्था मे क्या करना चाहिए? क्योकि अतिथि को निराश लौटाने के लिए कहा है –

अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते।
स तस्मै दुष्कृत दत्त्वा पुण्यमादाय गच्र्छात।।

अर्थात्– कोई अतिथि निराश होकर घर से लौट जाये तो वह उस गृहस्थ की पुण्यवानी लेकर, अपने दुष्कृत्य उसे दे जाता हे।

इस प्रकार सोच–विचार कर व्यापारी ने जिनदास से कहा– आप लेखा देखकर क्या करेगे, सच्ची बात मे जबान से ही सुनाये देता हू। वास्तव मे मै तो रात को चोरी करके धन कमाता हू ओर दिन को व्यापार का ढोग रचाकर प्रतिष्ठा प्राप्त करता हू।

व्यापारी की बात सुनकर जिनदास ने कहा– ऐसी दशा मे मे आपके यहा भोजन नही कर सकता।

व्यापारी– यह आपका अन्याय हे। दूसरो की अप्रतिष्ठा भी करना ओर फिर भोजन भी न करना यह कैसे उचित है ?

जिनदास – यद्यपि मेने आपकी कोई अप्रतिष्ठा तो नही की हे फिर भी यदि आप मेरी एक बात को स्वीकार कर ले तो मे भोजन कर सकता हू।

व्यापारी के पूछने पर जिनदास ने कहा– आप चाहे अपने चोरी के कार्य वन्द करे या न करे परन्तु सदा सत्य बोलने की प्रतिज्ञा कर ले। यदि आपने यह प्रतिज्ञा धारण कर ली तो मै भोजन कर लूगा।

व्यापारी के ऊपर पतिभाशाली जिनदास के शब्दो का वहुत पभाव पडा। उसने जिनदास की बात स्वीकार करके असत्य न बोलने की पतिज्ञा कर ली। जिनदास भोजन करके विदा हो गये।

सदा की भाति व्यापारी आधी रात के समय चोरी करने निकला। परन्तु आज राजा श्रेणिक और पधान अभय कुमार प्रजा का सुख–दु ख जानने के लिए नगर मे चक्कर लगा रहे थे।

आधी रात के समय अकेला जाते देख, अभयकुमार ने व्यापारी को रोक कर पूछा–कौन है ? व्यापारी इस पश्न को सुनकर भयभीत तो अवश्य हुआ परन्तु अपनी प्रतिज्ञा याद आते ही, उसने निर्भय हो उत्तर दिया–चोर। व्यपारी का उत्तर सुनकर राजा और पधान विचारने लगे– कही चोर भी अपने आप को चोर कहता है? यह झूठा है। उन्होने व्यापारी से प्रश्न किया, 'कहा जाता है ?' व्यापारी ने निर्भयतापूर्वक उत्तर दिया, 'चोरी करने।'

व्यापारी के इस उत्तर को सुनकर राजा और प्रधान अभयकुमार ने सोचा– यह कोई विक्षिप्त है। विनोद के लिए उन्होने फिर प्रश्न किया–'चोरी कहा करेगा ? व्यापारी ने उत्तर दिया– 'राजा के महल मे।'

व्यापारी के इस उत्तर ने राजा और अभयकुमार का अनुमान और भी पुष्ट कर दिया कि वास्तव मे यह विक्षिप्त ही है। उन्होने व्यापारी को, अच्छा जाओ कह कर जाने दिया। इस प्रकार चोर कहते हुए भी न पकडे जाने से व्यापारी बडा ही प्रसन्न हुआ। वह जिनदास की प्रशसा करने लगा कि मै अपने आपको चोर बतलाता जाता हू, परन्तु मुझे कोई पकडता ही नही हे। यदि मे उस समय भागता या झूठ बोलता तो अवश्य पकड लिया जाता, परन्तु सत्य बोलने से बच गया।

व्यापारी इसी विचार–धारा मे मग्न राजमहल के पास जा पहुचा । योग ऐसा मिला कि व्यापारी जिस समय राजमहल पहुचा, उस समय राजमहल के पहरेदार नीद मे झूम रहे थे। ऐसा समय पाकर व्यापारी बेधडक महल मे जा घुसा ओर कोष मे से रत्नो के भरे हुए दो डिब्बे चुरा कर चलता बना।

लोटते समय व्यापारी को राजा ओर अभयकुमार फिर मिले। उनके पश्न करने पर व्यापारी ने अपने आपको पुन चोर बताया। राजा ओर कुमार ने पहले वाला ही विक्षिप्त समझ कर हसते हुए प्रश्न किया– कहा चोरी की और क्या चुराया? व्यापारी ने उत्तर दिया– राजमहल मे चोरी करके रत्नो के दो डिब्बे चुरा लाया हू। राजा ने व्यापारी को पहले ही विक्षिप्त समझ रखा

था, इसलिए उसके उत्तर पर भी उन्हे कुछ सन्देह न हुआ और उसे जाने दिया।

व्यापारी अपने घर की ओर चलता जाता था ओर हृदय मे जिनदास को धन्यवाद देता जाता था कि उन्होने अच्छी प्रतिज्ञा कराई जिससे मै बच गया, अन्यथा मेरे बचने का कोई उपाय न था। अब मुझे भी उचित हे कि कभी झूठ न बोल कर अपनी प्रतिज्ञा का दृढतापूर्वक पालन करू। इस प्रकार विचारता हुआ व्यापारी अपने घर आया।

प्रात काल कोषाध्यक्ष को कोष मे चोरी होने की खबर हुई। कोषाध्यक्ष कोष को देखकर और यह जानकर कि चोरी मे रत्नो के दो ही डिब्बे गये है सोचने लगा कि चोरी तो निश्चय ही हुई है, फिर ऐसे समय मे मे भी अपना स्वार्थ–साधन क्यो न कर लू ? राजा को तो मै सूचना दूगा तभी उन्हे मालूम होगा कि चोरी हुई है और चोरी मे अमुक–अमुक वस्तु इतनी गई है।

इस प्रकार विचार कर कोषाध्यक्ष ने कोष मे से रत्नो के आठ डिब्बे निकाल कर अपने घर रख लिये और राजा को सूचना दी कि कोष मे से रात को रत्नो से भरे हुए दस डिब्बे चोरी मे चले गये।

इस सूचना को पाते ही राजा को रात की बात का स्मरण हुआ। वह विचारने लगा कि रात को जिसने अपने आपको चोर बताया था, सम्भवत वही रत्नो के डिब्बे ले गया है। लेकिन उसने तो रत्नो के दो ही डिब्बे चुरा कर लाने को कहा था, फिर दस डिब्बे केसे चले गये? जान पडता है कि आठ डिब्बे बीच मे ही गायब हो गए हे। इस तरह सोच–विचार कर राजा ने अभयकुमार को रात वाले चोर का पता लगाने की आज्ञा दी।

नगर मे घूमते–घूमते, प्रधान अभयकुमार उसी व्यापारी की दूकान पर पहुचा और उसके स्वर को पहचान कर अनुमान किया – रात को इसी ने अपने आपको चोर बतलाया था। अभयकुमार ने व्यापारी से पूछा–'क्या आपने रात को राजमहल मे चोरी की थी ? यदि हा, तो क्या चुराया था ओर चोरी की वस्तु मुझे बतलाइये।' व्यापारी ने चोरी करना स्वीकार करके दोनो डिब्बे अभयकुमार के सामने रख दिये। वह सत्य का महत्व समझ चुका था इसलिए उसे ऐसा करने मे किचित भी हिचकिचाहट न हुई।

रत्नो के डिब्बो को देखकर विश्वास करने के लिए अभयकुमार ने व्यापारी से फिर प्रश्न किया कि क्या यही थे।

व्यापारी ने इस प्रश्न का उत्तर भी 'हा कह कर दिया। कुमार ने डिब्बो सहित व्यापारी को साथ लेकर राजा के सम्मुख उपस्थित किया। राजा कुमार

की चातुरी पर प्रसन्न होकर कहने लगा कि इसने तो दो ही डिब्बे चुराए थे, जो मिल गये, शेष आठ डिब्बो का पता और लगाओ।

अभयकुमार ने अनुमान किया कि डिब्बो मे कोषाध्यक्ष की ही चालाकी होगी। उसने कोषाध्यक्ष को बुला कर कहा कि चोरी गये हुए दस डिब्बो मे से दो डिब्बे तो मिल गये, शेष आठ डिब्बे कहा है? कोषाध्यक्ष घबरा उठा और कहने लगा कि चोरी हुई तब मै तो अपने घर था, ऐसी अवस्था मे मुझे यह क्या मालूम कि शेष डिब्बे कहा है?

अभयकुमार कोषाध्यक्ष की घबराई हुई दशा देख और उसका अस्थिर उत्तर सुनकर ताड गया कि आठ डिब्बो के जाने मे इसी की बेईमानी है। उसने कोषाध्यक्ष को भय दिखाते हुए कहा—सत्य कहो, अन्यथा बडी दुर्दशा को प्राप्त होओगे।

झूठ कहा तक चल सकता है ? कोषाध्यक्ष के होठ भय के मारे चिपक गये और वह कहने लगा— आठ डिब्बे मैने अपने घर मे रख दिये है। मैं अपने कर्त्तव्य और सत्य से च्युत हो गया, इसके लिए क्षमाप्रार्थी हू।

अभयकुमार ने कोषाध्यक्ष को भी आठ डिब्बो सहित राजा के सामने उपस्थित किया। कोषाध्यक्ष की धूर्तता और व्यापारी की सत्यपरायणता देख राजा ने कोषाध्यक्ष को तो बन्दीगृह मे भेजा और व्यापारी को कोषाध्यक्ष नियत किया।

राजा ने व्यापारी को अपराधी होते हुए भी सत्य बोलने के कारण अपराध का कोई दण्ड न देकर, कोषाध्यक्ष नियत किया। इसका प्रभाव लोगो पर क्या पडा होगा, यह विचारणीय बात है। चोरी का अपराध तो व्यापारी और कोषाध्यक्ष का लगभग समान ही था। लेकिन व्यापारी सत्य बोला था और कोषाध्यक्ष झूठ। झूठ के कारण ही कोषाध्यक्ष अपने पद से हटाया जाकर जेल भेजा गया और व्यापारी को सत्य के कारण ही अपराध का दण्ड मिलने की जगह कोषाध्यक्ष पद प्राप्त हुआ। राजा के ऐसा करने से लोगो के हृदय मे सत्य के प्रति कितनी श्रद्धा और झूठ से कितनी घृणा हुई होगी, यह आप स्वय अनुमान कर सकते है।

77 : अंतिम अवस्था

लोग बूढे आदमी को देखते हैं, पर क्या सव को अपनी स्थिति का विचार आता है ? जवानी की मस्ती ऐसा विचार नही आने देती। योवन की कोमल और मधुर प्रतीत होने वाली कल्पनाओ मे यह कठोर ओर नीरस सत्य स्थान नही पाता। असत् के बाजार मे सत् की कोई पूछ ही नही है। लेकिन अन्त मे तो सत् ही सामने आता है।

एक जवान आदमी जवानी के नशे मे अकडता जा रहा था। सामने की ओर एक बूढा लकडी के सहारे आ रहा था। जवान आदमी की टक्कर से वह बूढा गिर पडा। यद्यपि बूढे को गिराने का अपराध जवान का ही था, फिर भी वह बूढे पर नाराज होकर कहने लगा–'क्या जानते नही हो कि यह सडक जवानो के चलने के लिए है। तुमने मेरे चलने मे बाधा पहुचाई हे। क्या मुझे जानते नही? आइन्दा ऐसी हरकत की तो हड्डिया चूर–चूर कर दी जायेगी।'

बूढा दबने वाला नही था । उसने कहा–अकडते क्यो हा? मैं तुम्हे ही नही, तुम्हारी बुनियाद को भी जानता हू।

जवान– मेरी बुनियाद को क्या जानते हो?

बूढा– तुम्हारी बुनियाद दो बूद वीर्य ही तो हे। दो बूद वीर्य से मास का यह लोथ बना, वह बढा ओर तब तुम बाहर आये। यह तो तुम्हारी बुनियाद हे और उस पर भी इतना घमण्ड करते हो?

78 : असलियत

किसी जगह बाजार के बीच मे एक पेड था। एक आदमी ने उस पेड को अपनी अकवार (बाथ) मे लपेट लिया और फिर चिल्लाना शुरू किया–अरे, दोडो। मुझे छुडाओ पेड ने मुझे पकड रखा है।

लोग इकट्ठे हुए। उन्होने कहा– मूर्ख कही के । पेड ने तुझे पकड रखा है या तूने पेड को पकड रखा है ?

आज ससार मे लोगो की यही स्थिति हो रही है। वे कहते है–स्त्री, पुत्र आदि हमे नही छोडते । यह कैसी उलटी बात है । स्त्री–पुत्र आदि पदार्थो ने आपको पकड रखा है अथवा आपकी ममता ने उन्हे पकड रखा है? स्मरण रहे, अगर आप इन्हे नही छोडेगे तो ये आपको छोड कर अवश्य चले जायेगे। ससार मे कितना स्वार्थ भरा हुआ है, यह चीज दो मित्रो की बात सुनने से स्पष्ट हो जायेगी।

दो मित्र थे। उनमे से एक ज्ञानी और धर्मात्मा था और दूसरा ससार की माया मे फसा हुआ था। धर्मात्मा मित्र उससे कहता– 'मित्र। ससार की माया मे इतने रचे- पचे मत रहो। दुनिया की सब चीजे दगा देने वाली हैं' मगर वह उसकी बात पर ध्यान नही देता था।

एक दिन धर्मात्मा मित्र ने कहा –जिससे तुम खूब प्रेम करते हो, उसकी परीक्षा लो। परीक्षा करने पर मेरी बात झूठ निकल जाये तो जो इच्छा हो करना। दूसरे ने यह बात स्वीकार कर ली। धर्मात्मा ने उसे कहा– अपने शरीर की अमुक नस बन्द करके सो जाना। फिर देखना तुम जिसे प्यार करते हो वह तुम्हे कैसा प्यार करती है ?

उसके घर मे दो ही प्राणी थे– वह स्वय आर उसकी पत्नी। उसने अपनी पत्नी से कहा– आज बेसन का हलुवा बनाओ। पत्नी ने बढिया हलुवा बना कर तयार किया। आज पति–पत्नी प्रेमवश शामिल ही भोजन करने बठे।

भोजन कर चुकने के पश्चात् पति ने पेट दुखने का वहाना बनाया। पत्नी ने चूरन–चटनी दी मगर उससे क्या लाभ हो सकता था ? पति झूठ–मूठ तडपने लगा ओर फिर उसने वह नस दवा ली। उसकी नाडिया बन्द हो गईं। पत्नी ने यह हाल देखकर समझ लिया– हस उड गया ! पति की मृत्यु हो गई !

अव पत्नी ने विचार किया– अगर म अभी रोने लगूगी तो सारा मोहल्ला और सगे–सम्वन्धी इकट्ठे हो जायेगे। यह सोचकर उसने सव चीजे एक कमरे मे बन्द कर दीं। इसके बाद उसने सोचा–अब रोऊ! मगर फिर एक बात याद आई। यह रोना–चिल्लाना आज ही तो खत्म होगा नही। अगर चार–पाच दिन भी चलता रहा तो भूखो मर जाऊगी। अत अभी जो हलुआ और मीठा दही पडा है, उसे पहले खा लू! फिर निश्चित होकर रोऊगी । यह सोचकर पत्नी चौके मे गई। उसने खूब ठूस–ठूस कर पेट भरा। फिर रोने की तैयारी करने लगी। उसी समय उसे एक बात और याद आ गई। पति के दातो मे सोने की कीले जडी हैं। उसने यह विचार किया–अब मेरे यहा कोई कमाई करने वाला तो है नहीं। इनके दातो मे सोने की जो कीले लगी हे, उन्हे क्यो न निकल लू। सुना है–मुर्दे के शरीर से खून नहीं निकलता हे ओर न उसे कोई दर्द ही होता है। अत पत्थर से दात तोडकर 4–5 रुपये का सोना निकाल ही लेना उचित है, नही तो वह व्यर्थ चला जाएगा।

पत्नी ने दात तोडने के लिए ज्यो ही पत्थर उठाया कि उसी समय पति आखे मलता हुआ उठ बैठा। पति की यह हालत देखकर पत्नी 'खम्मा–खम्मा' करने लगी–ऐसी दशा तो बेरी की भी न हो ! चलो अलाय–बलाय टली।

पति ने पूछा – क्या हुआ ?

पत्नी– कुछ भी नहीं। जो हो गया, सो हो गया !

पति– जरा खुलासा करके कहो।

पत्नी– बुद्धिमान वीती बातो को याद नही करते।

पति– घर सूना क्यो दिखाई देता हे ? सब सामान कहा गया।

पत्नी– वह कोठे मे डाल दिया हे। पिछली बात भूल जाइए।

पति– ठीक हे, पिछली सभी वातो को भूल जाना ही कल्याणकारी है। मै उन्हे भुलाने का प्रयत्न करुगा। भूल गया तो मेरा उद्धार हो जायेगा।

मित्रो ! ससार की इस स्थिति पर टीका–टिप्पणी करने की आवश्यकता नही है। आप अपने पिछले ममत्वमय जीवन को भूल कर आत्म–कल्याण मे लगेगे तो आपका परम कल्याण होगा।

79 : मृतक–भोज

मृतक भोजन राक्षसी भोजन है। पवित्र ब्राह्मण पहले ऐसा भोजन नहीं खाया करते थे, किन्तु आज कई लोग इस अन्न को खाकर ब्राह्मणत्व से च्युत हो गये है। आज उनमे वह दिव्य तेज कहा है? उनमे वह वीरता आज कहा है, जिसके कारण एक बार सारा ससार चकित था?

गरीब लोग भूखो मरे, पेट भर अन्न भी न पा सके और आप मृत्यु के उपलक्ष्य मे भी लड्डू उडाए। मित्रो! आपको यह शोभा नहीं देता। इस सम्बन्ध मे एक उदाहरण लीजिए।

किसी गाव का पटेल मर गया। उस गाव मे एक बाबाजी हमेशा भिक्षा मागने आया करते थे। इस दिन पटेल का 'औसर' था। बाबाजी भिक्षा मागते–मागते उसी मकान मे पहुचे, जिसमे 'औसर' का भोजन बना था। लोगो ने उन्हे मालपूवा खीर, पूडी और दो–चार शाक दिये। बाबाजी ने सोचा–हमेशा थोडी–थोडी भिक्षा मिला करती थी परन्तु आज मामला ही दूसरा है। आज इतनी भिक्षा मिली है कि दो–चार दिन का काम चल सकता है । इसका क्या कारण है ?

आखिर बाबाजी ने एक आदमी को आवाज दी और पूछा–आज यह भोजन किस उपलक्ष्य मे है ?

उत्तर मिला– महाराज इस गाव का पटेल मर गया है। आज इसका औसर है। पटेल बडा धर्मात्मा, न्यायी और भला आदमी था। उसके मरने से सभी लोग बहुत दुखी हैं ।

बाबाजी – कैसे मर गया ?

आदमी– साप ने उसे डस लिया।

बाबाजी समझ गये , दुनिया बडी ठगोरी है। वे बोले–

> बलिहारी उस परड की जो पटेल को खाया।
> न्यात नी जीमी और हमने मीठा भोजन पाया।।

भाइयो! आप लोग मिलकर उस साप को अभिनन्दनपत्र क्यो नहीं देते?

लोग– अरे महाराज! ऐसे दुष्ट सर्प को भी क्या अभिनन्दन–पत्र दिया जाता है?

बाबाजी – क्यो नही?

लोग– ऐसे पापी को अभिनन्दनपत्र देकर कौन पाप का भागी होगा?

बाबाजी– अभिनन्दन–पत्र देने मे पाप है और खीरमालपूवा उडाने मे पाप नहीं है ! यह कैसी मूर्खता हे?

बाबाजी की बात सुनकर लोगो ने समझा – आज बाबाजी भग के नशे मे मालूम होते हैं। पर वास्तव मे बाबाजी नशे मे नही थे। उनके हृदय से मर्मपूर्ण वाक्य निकल रहे थे। उन्होने फिर कहा– भाइयो! सर्प ने तो दो ही दात मारे हैं। उसने खून भी नही पिया है परन्तु तुम लोग तो पटेल के मरने पर खीर–मालपूवा उडा रहे हो! पटेल के घर वाले हाय–हाय करके रो रहे हैं और तुम हसते–हसते माल गटक रहे हो ! सचमुच ही पटेल के प्रति यदि तुम्हारा आदरभाव है तो कोई ऐसा काम करो , जिससे दूसरो पर उपकार हो ! उसका कोई ऐसा स्मारक बनाओ कि दूसरो पर भी उसके गुणो की छाप पड सके और दूसरे भी वैसा ही गुणी बनने का प्रयत्न करे।

बाबाजी के वाक्यो का उन ग्रामीणो पर अच्छा असर पडा। उन्होने गो–माता की सौगन्ध खाकर ओसर–मोसर न करने की प्रतिज्ञा की।

भाइयो ! क्या आप औसर–मोसर त्यागने की प्रतिज्ञा न लेगे ? आप दयाधर्मी है। दूसरो को दुखी देखकर पसीजने वाले हो ! आपको मोत के उपलक्ष्य मे माल खाना नही सोहता।

80 : समय का मोल

समय की अपेक्षा मत करो । जो अवसर तुम्हे मिला है, उसे प्रमाद मे मत गवाओ। गया समय फिर कभी हाथ नही आता । समय का क्या मूल्य है, यह बात आपको एक उदाहरण से बतलाता हू।

किसी गाव मे एक जोशीजी रहते थे। वे ज्योतिषशास्त्र के बडे विद्वान्, नीति मे निपुण, सत्यशील पालने वाले आत्मनिष्ठ पुरुष थे। विद्वान् अक्सर दरिद्र ही हुआ करते है। जोशीजी भी दरिद्रता से मुक्त नही थे। कहते है– लक्ष्मी और सरस्वती मे वैर है । जहा लक्ष्मी होती है, वहा सरस्वती नही और जहा सरस्वती का वास होता है, वहा लक्ष्मी नही रहती। देखते है कि मूर्खो के पास धन का बाहुल्य होता है और विद्वानो के पास बिल्कुल अभाव। विद्वान् पुरुष लक्ष्मी की उतनी परवाह भी नही करते, फिर भी उसके बिना ससार–व्यवहार नही चलता। इस कारण कुछ इच्छा रखनी पडती है।

जोशीजी किसी के सामने हाथ पसारना नही चाहते थे। जोशिन इस अवस्था मे दुखी थी। जोशीजी की एक पुत्री थी। जब वह विवाहयोग्य हुई तो जोशिन ने जोशीजी से कहा– सारे दिन घर मे पडे रहते हो। घर मे लडकी है, सयानी हो रही है, विवाह करना है। कुछ खर्च की भी फिकर है या दिन–रात पोथी–पन्ना ही पलटते रहोगे? तुम्हारे पीछे मैने जिन्दगी मे कभी सुख नही पाया।

जोशीजी उस समय पुस्तकावलोकन मे मग्न थे। पत्नी की बातो से उनका ध्यान टूटा। उन्होने पत्नी के वाक्यो मे सत्य–अश देखा। विचार किया– पत्नी की बात ठीक है। कुछ धनोपार्जन न किया तो कन्या का विवाह कैसे होगा ? इसके बाद उन्होने सोचा –द्रव्योपार्जन तो करना ही होगा मगर किसी से कुछ मागने से पहले अपनी विद्या की परीक्षा भी तो कर लेनी चाहिए।

जोशीजी ग्रन्थो को टटोलने लगे, पचाग के पन्ने पलटने लगे। पन्ने पलटते–पलटते उनका मुह एकदम खिल उठा।

जोशिन ने कहा – यह अचानक खुशी किस बात की है?

जोशीजी– समझा लो, अब अपनी दरिद्रता दूर हो गई।

जोशिन– कैसे हो गई? न कही गये हो, न आये हो और दरिद्रता दूर ही हो गई! मुझे नन्ही–सी बच्ची समझ कर बहका रहे हो!

जोशी– न आने–जाने से क्या हो गया? मेरी पुस्तको ने रास्ता दिखला दिया है। अब सब दु ख दूर हो जायेगे।

जोशिन– क्यो पागलो जैसी बाते करते हो ! मजूरी तुमसे होती नहीं, काम करते नही, बस पुस्तको से धनवान् बनना चाहते हो ! किसी भोली स्त्री को अपनी बातो से बहकाइए। मैं आपके चक्कर मे आने वाली नही।

जोशी – तू हमेशा ऐसी ही बाते कहा करती है।

जोशिन – अच्छा बतलाइए, दरिद्रता दूर कैसे होगी ?

जोशी – पुस्तक मे ऐसा लिखा है कि अमुक समय मे अमुक नक्षत्र के योग मे मन्त्रजाप के साथ मेरे 'हू' करते ही यदि हाडी मे जवार डाल दी जाये तो उसके मोती बन जाते हैं।

जोशिन– वाह–वाह ! क्या गप्प मारी है ! मै तो पहले से ही जानती हू कि काम न करने का कोई न कोई बहाना चाहिए और नही तो यही सही।

जोशी– तू कैसी मूर्खा है कि मेरी प्रत्येक बात पर अविश्वास ही अविश्वास किया करती है ! क्या मै कभी झूठ बोलता हू ?

जोशिन– हा, यह बात तो मानती हू कि आप कभी झूठ नही बोलते। अच्छी बात है– मैं आपका कहा करूगी।

जोशी– तब ठीक है, तैयारी करो।

जोशिन पडोस मे रहने वाली एक सेठानी के घर गई। सेठानी जोशिन को सदा उदास देखा करती थी। आज उसे प्रफुल्लित देख कर बोली– आज तुम्हारे चेहरे पर प्रसन्नता दिखाई देती है । क्या शुभ समाचार है ?

जोशिन– अब मेरे भाग्य खुलने वाले हें । इसलिए तुमसे एक चीज लेने आई हू।

सेठानी – बडी खुशी की बात है। ले जाओ, जो चाहिए !

जोशिन – थोडी सी ज्वार चाहिए।

सेठानी – ज्वार अपने यहा बहुत है। कहो, कितनी दे दू ?

जोशिन – एक सूप भर दे दो।

सेठानी गरीब ही थी मगर हृदय उसका उदार था। ज्वार को साफ–सूफ करके जोशिन को देती हुई बोली–जोशिनजी, इससे भाग्य कैसे खुल जाएगे ?

जोशिन – जोशीजी अमुक समय मे, अमुक नक्षत्र मे एक मन्त्र की साधना करेगे। जब वे 'हू' कहेगे, तभी मैं ज्वार हाडी मे डाल दूगी। ऐसा करने से ज्वार मोती हो जाएगी।

सेठानी– बहुत अच्छी बात है। ईश्वर तुम्हारा भाग्य खोले । हमे भी तुम्हारी हवेली की कम से कम छाया तो मिलेगी। तुम गाये–भैसे रखोगी, दूध–दही खाओगी तो छाछ हमे भी मिल जायेगी।

जोशिन चली गई। सेठानी ने विचार किया– जोशीजी का घर दूर तो नही, सिर्फ एक टाटी बीच मे है। उस मौके पर अगर मै भी उनके 'हू' कहने पर ज्वार डाल दू तो क्या हानि है ? मोती होगे तो हो जाएगे, नही तो खिचडी बन जायेगी । बिगाड तो होगा नही।

जोशिन घर पहुची। जोशीजी ने कहा– देखो, समय होने वाला है। चूल्हा जलाकर हाडी ऊपर रख दो। मै जब 'हू' कहू उसी वक्त ज्वार डाल देना। क्षण भर की भी देरी मत करना।

जोशिन – एकदम डाल दूगी, देरी क्यो करूगी ?

जोशी – तू बातूनी बहुत है। याद रखना, 'हू' कहने के साथ ही डाल देना। नही तो सब बेकार हो जायेगा।

सेठानी ने सारी कार्रवाई चुपके–चुपके कर ली। इधर जोशिन ने भी चूल्हा जला लिया। जोशी मन्त्र पढने लगे। वही समय, वही नक्षत्र और वही योग आते ही उन्होने 'हू' किया।

'हू' की आवाज सुनते ही सेठानी ने हाडी मे ज्वार डाल दी। पर जोशिन 'हू' आवाज सुनकर पूछने लगी– 'क्या अब डाल दू'? आपने जो समय कहा था, वह आ गया? इस समय डालने से ज्वार मोती बन जायेगी? अच्छा देखना, अब डालती हू। आपके कहने से डालती हू। फिर मत कहना कि मेरा कहा नही किया।

जोशीजी ने अपना माथा ठोका और उदास हो गये । उन्होने सोचा – कितनी बार कहा था कि 'हू' कहते ही ज्वार डाल देना, बाते मत बनाना। फिर भी इसने बातो मे समय खो दिया । क्या मेरे भाग्य मे दरिद्रता ही लिखी है ?

समय होने पर जोशिन ने हाडी नीचे उतारी। देखा तो उसमे खिचडी थी । वह उल्टी जोशीजी पर चिढने लगी – वाह क्या बढिया मन्त्र है और

कैसी उत्तम विद्या है! कही ज्वार के मोती होते हैं? लो, अपने मोती सभाल लो!

बेचारे जोशी को काटो तो खून नही! इधर पत्नी के वाक्यबाणो से बिघ रहे थे, उधर पश्चात्ताप की आग मे जल रहे थे। उल्टा चोर कोतवाल को डाट रहा है।

उधर पडोसिन ने भी हाडी उतारी। उसकी थाली मे उज्ज्वल मोतियो का ढेर लग रहा था। उसकी प्रसन्नता का पार न रहा। वह जोशीजी की विद्या की तारीफ करने लगी। उसने सोचा – यह मोतियो का ढेर जोशीजी के ही प्रताप से हुआ है। कुछ मोती उन्हे भेट करने चाहिए। वह मुट्ठी भर मोती लेकर जोशीजी के घर गई। उसने अत्यन्त आदर से चरणो मे मोती अर्पित कर दिये। वह बोली–महाराज, आपकी विद्या के प्रताप से ही मैंने ये मोती पाये हैं। लोभ के कारण थोडे से ही लाई हू। आप उन्हे स्वीकार कीजिए।

जोशी – मेरे प्रताप से कैसे?

सेठानी ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। फिर जोशिन से कहा – जोशिनजी , आप जोशीजी को जली–कटी सुना रही हो, पर वास्तव मे दोष आपका ही है। देखो, मैने समय पर ज्वार डाली तो वह मोती बन गई कि नही?

जोशीजी अपनी विद्या की सफलता देखकर बहुत प्रसन्न हुए। जोशिन जोशी के चरणो मे गिर पडी और कहने लगी – सचमुच मैं बडी अभागिन हू। मुझे क्या पता था कि जरा सी देर मे इतना फर्क पड जाएगा! अब आप दूसरा मुहूर्त निकालिए। इस बार मैं हर्गिज चूक नही करूगी।

जोशी – 'लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितु क समर्थ ।' भाग्य लिखे को कौन मिटा सकता है? अब मुहूर्त्त मेरे हाथ मे नही है। ऐसा मुहूर्त्त हमेशा नही आया करता। हजारो वर्षो मे कभी ऐसा योग मिलता है।

मित्रो! आपको जो अनमोल अवसर मिला है, वह बहुतो को असख्य–असख्य जन्म धारण करने पर भी नही मिलता। इस अवसर को वृथा प्रमाद मे गवा देने वालो को घोर पश्चात्ताप करना पडेगा। अगर आप पश्चात्ताप की आग मे दग्ध होने से बचना चाहते है तो इस अनमोल अवसर का सदुपयोग कर लीजिए।

81 : श्रद्धा

एक सेठ के दो लडके जगल मे गये। वहा से वे मयूरनी के दो अण्डे उठा लाये। दोनो अण्डे मुर्गी के पास रख दिये । मुर्गी उन अण्डो को अपने पखो के नीचे रखती और उनकी हिफाजत करती।

दोनो लडको मे से एक को पूरा विश्वास था कि मयूरनी के अण्डे मे से मयूर का बच्चा जरूर निकलता है। यह बात प्रत्येक मनुष्य जानता है, परन्तु दूसरे लडके मे विश्वास की कमी थी । उसका चित्त बहुत अस्थिर था। अतएव उसे सन्देह होता –अण्डे मे से मयूर निकलेगा या नही ? वह अण्डे को कभी ऊचा करता, कभी नीचा करता, कभी हिला–डुलाकर देखता कि इसमे बच्चा है या नहीं ? दूसरा लडका अपनी शान्ति मे मस्त था। वह जानता था कि मयूरनी के अण्डे मे से बच्चा निकलेगा अवश्य, पर निकलेगा समय पर ही। अस्थिर चित्त वाले लडके के अण्डे का रस जम न सका। हिलाने–डुलाने से वह पतला पड गया। उसने एक दिन ज्यो ही अण्डा उठाया कि वह फूट गया। दूसरे अण्डे को समय होने पर मुर्गी ने फोडा। भीतर से मयूर का बच्चा निकला। जब वह बडा हुआ तो उसे नृत्यकला सिखलाई गई । एक दिन कही जलसा होने वाला था। वह लडका अपने मयूर को वहा ले गया। मनुष्य पक्षियो का प्रेमी होता ही है, फिर मयूर जैसे सुन्दर पक्षी को कौन प्यार न करेगा। उस मयूर को देख कर सब लोग प्रसन्न हो गये। परन्तु जब उसने अपनी नृत्यकला दिखलाना आरम्भ किया तब तो सब लोगो के मुख से 'वाह' और शाबास–शाबास' की आवाजे निकलने लगी। सब ने उसे पालने वाले लडके को धन्यवाद दिया। यह दृश्य देखकर दूसरा लडका बहुत पछताया और दुखी हुआ।

मित्रो। एक अपनी दृढ श्रद्धा के कारण प्रसन्न हुआ और धन्यवाद का पात्र बना ओर दूसरा अश्रद्धा के कारण दुखी हुआ। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ–प्रवचन पर वीतराग की वाणी पर जो प्रगाढ श्रद्धा रखता है वह अवश्य सुख का भागी होता है।

82 : ऊंची भावना

एक लखेरा गधी पर चूडियो का गौन लादकर वाहर जाया करता था। गधी की चाल सुस्त थी, इसलिए वह उसको टिक–टिक करता हुआ 'चल, मेरी बहिन' 'चल, मेरी काकी' आदि कहा करता था।

लोग मसखरे होते ही हैं । राह चलते मनुष्य को भी वे पागल वनाने की कोशिश करते हैं, तो गधी को मा, बहिन ओर काकी वनाने वाले को कव छोडने लगे –वाह रे वेवकूफो के सरदार! गधी को भी मा–वहिन बना रहा है। तुझे शर्म नहीं आती ?

लखेरे ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया– भाइयो! मेरा धन्धा ओर ही प्रकार का है। राजाओ, रईसो, सेठो ओर साहूकारो के घर की स्त्रियो के हाथो मे मुझे चूडिया पहनानी पडती हें। अगर में स्त्री जाति के प्रति माता–वहिन की भावना न रखू तो मेरा धन्धा तो डूबे सो डूबे ही, मेरा सारा भव भी डूब जाये।

ऐसी भावना वाला चाहे कोई लखेरा हो या ओर कोई, अवश्य ही धन्यवाद का पात्र हे। ऐसी ऊची ओर पवित्र भावना वाले नर रत्न ही अपने जीवन को ऊचा बना सकते हैं।

83 : पाप–पुण्य

एक सेठ थे । सेठ जब दूकान से लौट कर आते तो उन्हें गरम–गरम रोटी–दाल मिलती। सेठजी भोजन करके वापिस लौट जाते। तब सेठानी चूल्हे मे से गोल बाटिया निकालती, उन्हे साफ–सूफ करके घी में डुबा कर चीनी के साथ मजे मे खाया करती थी। सेठजी कभी कहते –तू भी भोजन करने बैठ जा। साथ ही साथ खा ले, तो सेठानी कहती– अजी पहले आप तो जीम लीजिए। मैं पडी चूल्हे मे। सेठ इस उत्तर को सुनकर समझता –मेरी पत्नी बडी पतिभक्ति करने वाली है। देखो न कभी साथ भोजन करने नहीं बैठती मेरे भोजन करने के बाद ही भोजन करती है।

बहुत दिनो तक यही कम चलता रहा। एक दिन कार्यवश सेठानी पडोस मे गई और भोजन का समय हो जाने से सेठजी घर में आ पहुंचे। थोडी देर बैठे तो उन्हे सेठानी की बात याद आ गई। सोचा– सेठानी हमेशा कहा करती कि मैं पडी चूल्हे मे तो देखना चाहिए कि बात क्या है? ज्यों ही उन्होने चूल्हे की राख उठाई कि अन्दर से गोल बाटी निकली। उसे देखकर सेठजी समझ गए कि सेठानी के कहने का आशय क्या है।

सेठजी उसी समय बाटिया खाने बैठ गये । जब वह खा–पी चुके और हाथ–मुह धो चुके, तब सेठानी आई और बोली– भोजन तैयार है। परोसू ?

सेठ– आज पहले तुम्हीं जीम लो।

सेठानी– अजी, मैं पडी चूल्हे में।

सेठ खिलखिला कर हस पडे और बोले– हमेशा तुम चूल्हे मे पडती थी आज मैं ही पड गया।

सेठानी ने चूल्हे की तरफ देखा। उसकी लज्जा का पार न रहा।

भाइयो! जो बहिन मुक्खड होती है वह अपने स्वार्थ के लिए भोजन बनाती है किन्तु दूसरो को सुख–शान्ति एव साता पहुचाने के उद्देश्य से भोजन बनाने वाली बहिन पाप में भी पुण्य का उपार्जन कर लेती है।

84 : यह भी न रहेगी

आज मैं बहुत से भाइयो के चेहरे पर उदासी देखता हू। उस उदासी का कारण क्या है? लोग उदास क्यो हैं ? ये भूखे नही है, सबको समय पर खाने को भोजन मिलता है। ये नगे भी नही हैं, सब के पास पहनने को अच्छे–अच्छे कपडे हैं। फिर उदासी का कारण क्या है? एक ही कारण है और वह यह कि थोडी सी हानि होने से ही ये रज कर बैठते हैं और थोडा सा लाभ होने से ही फूल जाते हैं।

एक बादशाह को मानसिक बीमारी थी। वह दिन–दिन सूखता चला जा रहा था। उसको खाने–पीने की किसी प्रकार की कमी नही थी। फिर भी वह इतना दुबला और तेजहीन दिखाई पडता था, मानो कई दिनो से उसे भोजन नसीब नही हुआ।

बादशाह का वजीर बुद्धिमान था। उसने बीमारी का कारण समझ लिया। अतएव एक दिन बादशाह से निवेदन किया –हुजूर, आप दुबले होते जाते है।

बादशाह– मुझे भी ऐसा जान पडता है, पर मै अपनी बीमारी समझ नही पा रहा हू।

वजीर– मै आपकी बीमारी समझ गया हू । उसे दूर करने के लिए एक मत्रित अगूठी आपको दूगा । उसे पहने रखने से बीमारी दूर हो जायेगी।

बादशाह– बहुत अच्छा।

थोडे दिनो के पश्चात् वजीर ने बादशाह को एक अगूठी दी और कहा –हुजूर, अब आपकी बीमारी चली गई समझिए। अब किसी प्रकार की चिन्ता न होगी।

बादशाह को सन्तोष हुआ। उसने उगली मे अगूठी पहन ली ।

कुछ दिनो बाद खबर आई कि अमुक गाव लुट गया है, शाही सिपाही मारे गये हैं और बहुत हानि हुई है।

इस खबर से बादशाह को बहुत चिन्ता हुई। तब वजीर आया तो बादशाह ने उससे कहा – वजीर, तुम कहते थे कि मेरी सब चिन्ताएं दूर हो गई, पर मुझे इन समाचारो से बडा रंज हो रहा है।

वजीर – आप जरा अगूठी पर नजर डालिए।

अगूठी पर लिखा था – यह भी न रहेगी।

ये शब्द बादशाह को शान्तिदायक हुए। वह समझ गया कि अब की स्थिति है, वह कायम रहने वाली नहीं है।

कुछ दिनो बाद खुशी के समाचार आये। बादशाह हर्ष के मारे फूल उठा। तब वजीर ने अगूठी की तरफ इशारा किया–यह भी न रहेगी के शब्द पढकर बादशाह के हर्ष का उफान शान्त हुआ। अब बादशाह समझ गया कि मेरी बीमारी की सच्ची दवा यही है।

मित्रो ! यही बात आप अपने लिए समझो। विपत्ति आने पर विषाद और सम्पत्ति मिलने पर हर्ष मत करो। प्रत्येक स्थिति में समभाव रखो। संसार मे लिप्त न होओ। अपने अन्त करण को समभाव से भूषित करना कठिन कार्य नही है। थोड़े दिनो के अभ्यास से वह सुगम हो जायेगा।

85 : मच्छीमार साधु

एक राजा को जुआ खेलने का शोक लग गया । उसने समझा—वैसे तो बडे परिश्रम से और बहुत दिनो से खजाना भरेगा, जुए से जल्दी भर जायेगा। उसे सीधे धन कमाने की इच्छा हुई।

राजा के पास बहुत पडित आया करते थे। वे राजा को समझाते, पर वह किसी की न सुनता। पडित आखिर दुनियादार थे। उन्हे राजा का लिहाज रखना पडता था। अतएव वे जोर देकर कह भी नही सकते थे। मगर एक दिन एक मस्त फक्कड आया। उसे राजा की बुरी लत का पता चला। उसने सोचा— यह बहुत बुरी बात हे। राजा बिगड गया तो सारी प्रजा बिगड जायेगी। 'यथा राजा तथा प्रजा' यानी प्रजा का सुधार और बिगाड राजा पर ही निर्भर है। किसी उपाय से राजा को सुधारना चाहिए।

अवसर देखकर उस साधु ने अपने कन्धे पर मछली फसाने का जाल रख लिया और वह जगल मे घूमने लगा। सयोग से राजा भी उधर आ निकला। साधु के कन्धे पर जाल देखकर उसे बडा आश्चर्य हुआ। राजा ने सोचा— यह कौन व्यक्ति है, जिसने साधु का भेष बनाया है पर मच्छीमार का काम करता है। आखिर राजा ने उसे अपने पास बुलाकर पूछा— तुम कौन हो?

साधु— मैं साधु हू।

राजा— साधु होकर मच्छी मारते हो ?

साधु— हा, मास भी खाता हू।

राजा— क्या कहते हो ? साधु होकर मास खाते हो ?

साधु— हा, खाता हू पर मदिरा के साथ मिलाकर ।

राजा— (आश्चर्य से) — मदिरा भी पीते हो ?

साधु— वेश्यागमन का आनन्द मदिरापान किये विना नहीं आता।

राजा— छि छि । साधु होकर वेश्यागमन भी करते हो ?

साधु– जी हॉ, मै चोरी भी करता हू।

राजा– साधु होकर चोरी ! फिर मेरे सामने उसे स्वीकार करते हो ?

साधु – जुआ भी तो खेलता हू। सच पूछिए तो जुए के कारण ही यह सब आदते मुझ मे आ गई हैं।

साधु की बात सुनकर राजा चौक पडा। उसने मन मे सोचा–जुआ तो मै भी खेलता हू! जो काम मै स्वय करता हू, उसके लिए दूसरे को दण्ड किस पकार दे सकता हू ?

साधु की मुस्कान भरी मुखमुद्रा देखकर राजा समझ गया कि यह कोई व्यसनी पुरुष नही है। मुझे शिक्षा देने के लिए ही इन्होने यह दिखावा किया है। अन्त मे राजा साधु के चरणो मे गिर कर बोला– महात्मन्! आपने मुझे सुधारने के लिए इतना कष्ट उठाया है। मै आपका आभारी हू। क्षमा कीजिए।

साधु ने कहा– मुझे प्रसन्नता है कि मेरा प्रयत्न सफल हुआ। मैं ऐसे कष्ट को कष्ट नही समझता। ससार को सुधारना, लोगो को गलत रास्ते से हटाकर सही राह पर लाना साधुओ का कर्त्तव्य ही है।

मित्रो! सतो के समागम की ऐसी महिमा है। अनेक विद्वानो से जो काम नही होता, वह सच्चे सन्त पुरुष के समागम से सहज ही हो जाता है।

86 : शरणागत–प्रतिपाल

मैंने सुना था, सन् 1923 के लगभग दिल्ली मे एक दरबार लगा था। उसमे भारत के तमाम राजा–महाराजाओ ने भाग लिया था। उसमे रतलाम के कुवर भी गये थे। उनकी उम्र बहुत छोटी थी। उनके साथ एक मुशीजी आये थे, जो शायद उस समय रतलाम के दीवान या और कोई ऑफिसर रहे होगे। दरबार मे सब राजाओ के लिए कुर्सिया लगाई गई थी पर रतलाम के कुवर क्योकि बहुत छोटे थे, अतएव उनके लिए कोई कुर्सी नही थी। मुशीजी ने सोचा – कुवर साहब के लिए कोई कुर्सी नही है ओर इधर–उधर बैठना भी ठीक नही है। लौट जाने से रतलाम की प्रतिष्ठा को क्षति पहुचती है। मुशीजी बडे चतुर आदमी थे। आखिर उन्होने कुवर साहब को लाट साहब की गोद मे बिठा दिया।

यह देख लाट साहब चौंक उठे। वे बोले –है, यह क्या किया? तब मुशीजी ने नम्रता से उत्तर दिया–मेने तो आपकी गोद मे इन्हे बिठा दिया हे। अब जैसी आपकी इच्छा हो सो कीजिए।

लाट साहब कुवर को अपनी गोद से फैंक तो सकते नही थे। मुन्शीजी का आशय समझ कर उन्होने एक ओर कुर्सी लगा देने की आज्ञा दे दी।

भाइयो ! यह लोकिक उदाहरण है। जब लाट साहब लोक–लज्जा के कारण शरण मे आये हुए का इतना खयाल करते हें, त्रिलोकीनाथ प्रभु क्या किसी तरह उदासीन रह सकते हें ? क्या प्रभु की शरण मे जाने पर भी कोई चिन्ता शेष रह सकती है ? भगवान् शराणगत–प्रतिपाल हें।

87 : वफादार

एक किसान पर किसी सेठ का कर्ज था। किसान कभी–कभी शहर मे आता, पर उसे डर लगा रहता कि कही सेठजी न मिल जाए। उसके पास कर्ज अदा करने को कुछ भी नहीं था। अतएव वह शहर मे आकर चुपके–चुपके अपना काम करके लौट जाता था।

एक दिन अचानक सेठ ने किसान को देख लिया। सेठ ने कहा–क्यो रे ! आजकल दिखाई ही नही देता। जान पडता है, कर्ज चुकाने की इच्छा नही है।

किसान– नही, सेठ साहब, ऐसी बात नहीं है। मैं आपका कर्ज जरूर चुकाऊगा, पर इस समय मेरे पास नही है। इसलिए लाचार हू।

सेठ – तेरे पास नही है ? मैं सब समझता हू । तेरे पास खेत हैं, बैलो की जोडी है। फिर झूठ क्यो बोलता है ?

किसान – झूठ बोलना मैं नहीं जानता। मेरे पास होता तो कभी का चुका देता।

सेठ – ऐसा झासा किसी ओर को देना। बहुत दिनो मे पकड पाया हू। अब मै नही छोडने का। चल, मेरे घर पर। कर्ज चुकाये बिना हर्गिज नहीं छोडूगा।

यह कह कर सेठ उसे अपने घर ले गया। सेठ ने जहा बिठाया, वही वह बैठा रहा। बैठे–बैठे तीन दिन हो गये। किसी ने रोटी के टुकडे के लिए भी उसे न पूछा। सब अपने–अपने काम मे मस्त थे। तीन दिन बाद अचानक सेठजी की निगाह उस पर पडी। उन्हे ख्याल आया कि तीन दिन से वह यही बैठा है। इसने न कुछ खाया है, न पीया है।

सेठजी समझ गये कि इसके पास देने को कुछ नही है। आखिर उनका दिल पसीज गया ओर उसे जाने की छुट्टी दी। बोले–जाओ, कर्ज जल्दी चुकाने का ध्यान रखना।

किसान घर पहुचा। उसकी स्त्री और बाल–बच्चे भूखे बिलबिला रहे थे। स्त्री ने कहा – घर मे एक दाना भी नही हे। तीन दिन तक कहा चले गये थे ? किसान ने आप–बीती सुना दी। साथ ही कहा– मैं भी तीन दिन का भूखा हू। कुछ हो तो ले आओ।

किसान की स्त्री मर्माहत होकर बोली– लाऊ कहा से ? बच्चो के लिए इधर–उधर से रोटी ले आई थी। मैं स्वय तीन दिनो से भूखी हू। समझती थी, आप आएगे तो कुछ लाएगे। अब मैं क्या करू ?

पति और पत्नी दोनो का साहस चुक गया। भला, इस भूख मे मेहनत–मजदूरी भी कैसी हो सकती है? निराश हो किसान ने कहा–इस जिन्दगी से मौत क्या बुरी है? दोनो जहर क्यो न खा ले?

किसान की पत्नी इस भयानक विचार से घबडा उठी। उसने कहा – नही, ऐसा विचार मत कीजिए। एक बार उन्ही सेठजी के पास जाकर कुछ और मदद माग लेना उचित है।

किसान– मुझे तो अब लाज आती है।

पत्नी– लाज किस बात की ? हजम कर जाने की तो अपनी नीयत है नही। जाकर कहिए– सेठ साहब, हमारे यहा खाने को कुछ नहीं है। खाये बिना काम नही होता। मर जाएगे तो आपका कर्ज सारा डूब जायेगा। जिन्दा रहे तो अगला–पिछला सब चुका देगे।

स्त्रिया लक्ष्मी का रूप होती हैं। उनकी सलाह कई बार इतनी अच्छी होती है कि हतप्रभ मनुष्य के खयाल मे नही आती। किसान अपनी पत्नी की सलाह मानकर सेठ के पास गया और ज्यो की त्यो सारी बात सेठजी से कह दी। सेठ दयालु था। उसने किसान की बात पर विश्वास करके कहा– अच्छा, तू जितना ले जा सके, उतने गेहू बाध कर ले जा।

गेहू लेकर किसान घर पहुचा तो उसकी पत्नी को बडी प्रसन्नता हुई। किसी प्रकार वे अपना काम चलाने लगे । मगर किसान को रात–दिन यही चिन्ता लगी रहती कि सेठ का कर्ज किस प्रकार चुकाया जाये? वर्षा के दिन नजदीक आ गये थे। किसान के पास खेती करने का कोई साधन नही था। उसने स्त्री से कहा– अब चोरी किये बिना सेठ का कर्ज अदा नहीं हो सकता। मैं चोरी करके ही सेठ का कर्ज अदा करूगा।

स्त्री बोली– चोरी करोगे तो पकडे जाओगे। यह काम अपने को नही सोहता।

मगर किसान अपने सकल्प मे दृढ रहा। एक दिन वह चोर का रूप बनाकर चोरी करने निकल पडा।

रास्ते मे 29 चोर कही चोरी करने जा रहे थे। वे इसे देखकर दौडने लगे। तब किसान बोला–भाइयो! डरो मत। मै भी चोर हू। चोरी करने निकला हू। मुझे भी साथ ले लो तो अच्छा हो।

चोरो ने हृष्ट–पुष्ट शरीर वाला मजबूत आदमी देखकर उसे अपने साथ ले लिया। सब मिलकर उसी शहर मे चोरी करने गये, जहा उस किसान का सेठ रहता था। चोरो ने धनवान् की हवेली देखकर सेघ लगाई। अन्दर घुसने का अच्छा रास्ता बन गया।

इसके बाद चोरो के मुखिया ने कहा– जो सबसे पहले अन्दर घुसेगा, उसे सबसे ज्यादा हिस्सा मिलेगा। बोलो, कौन तैयार होता है?

किसान ने कहा – मुझे अपने सेठ का कर्ज चुकाने के लिए धन की विशेष आवश्यकता है। मै पहले जाऊगा।

किसान सेध मे से होकर भीतर घुसा। उसने इधर–उधर नजर दौडाई तो वह घर सेठ का ही मालूम हुआ। वह चट बाहर निकल कर बोला– भाइयो! यहा से चोरी नही कर सकते। यह तो मेरे सेठ का ही घर है।

चोर– पागल! कही चोरी के लिए भी ऐसा विचार किया जाता है ?

किसान– नही, इस घर मे चोरी नही कर सकते।

चोर– चल, हट, हम भीतर घुसेगे।

किसान– हर्गिज नही। जब तक मेरे शरीर मे प्राण है, यहा चोरी नही करने दूगा।

चोरो मे साहस ही कितना? वे चुपचाप वहा से चलते बने।

किसान ने सेठ को आवाज देकर जगाया। सारी कहानी सुनाकर सावधान रहने की बात कहकर चलने लगा। सेठ ने उसका हाथ पकड लिया। किसान बोला– मैने आपकी चोरी नही की है, फिर मुझे क्यो पकडते हो?

सेठ गद्गद् होकर बोला– तू धन्य है। मैंने सारा कर्ज भरपाया। आज तू मेरी रक्षा न करता तो मेरी तकदीर फूट जाती। खैर, अब यह घर तेरा है। तू मेरा भाई है। जब कभी जिस चीज की आवश्यकता हो, निसकोच ले जाया कर।

मित्रो! जिस प्रकार तीस चोरो मे से एक चोर के फूट जाने से 29 चोरो का दाव न लगा और सेठ का धन बच गया उसी प्रकार दिन–रात के तीसो मुहूर्त्त रूप चोर आत्मिक धन को लूट रहे है। अगर उनमे से एक मुहूर्त्त को भी अपना लिया जाये–एक मुहूर्त्त भी सामायिक आदि धर्म–क्रिया मे लगा दिया जाये तो आत्मधन की चोरी को सहज ही बचाया जा सकता है।

88 : पंचों का मकान–शरीर

कलकत्ता भारतवर्ष का सबसे बडा शहर है । उसकी आबादी भी घनी है। वहा लोगो को रहने के लिए मकान तक नही मिलते। ऐसी स्थिति मे हरेक को बडा मकान मिलना मुश्किल है। यहा विवाह आदि कई काम होते रहते हैं । ऐसे अवसरो पर बडे मकान के बिना काम नही चलता । इसी दृष्टि को सामने रखकर किसी जाति के पचो ने मिलकर एक बडा जातीय मकान बनवाया। उस जाति का कोई भी व्यक्ति विशेष–प्रसग पर उसे काम मे ला सकता था। मकान लेने का नियम यह था कि उसे जो लेना चाहे, किरायानामा लिख दे और किराया तय कर ले । लोग इसी नियम के अनुसार मकान लिया करते और भाडा दिया करते थे। कार्य हो चुकने पर मकान पचो को सौप दिया जाता था।

सब मनुष्य सरीखे नही होते। एक मनुष्य ने लडके के विवाह के लिए मकान मागा। मकान उसको नियमानुसार दिया गया। विवाहकार्य समाप्त हो गया। दो चार दिन अधिक हो गये। लोगो ने समझा– अब मकान खाली हो जायेगा। पर जिसने मकान लिया था, उसने मन मे सोचा– मकान बहुत अच्छा है। ऐसा मकान मुझे और कहा मिलेगा? आखिर पचो का मकान है। मैं भी पच हू । मैं मकान खाली नही करूगा।

इस तरह बहुत दिन बीत जाने पर भी जब उसने मकान खाली नही किया तो पचो के पास शिकायत पहुची। पचो ने अपना आदमी भेजकर कहलाया–आपके लिखे अनुसार दिन समाप्त हो चुके हे। अब आप तुरन्त मकान खाली कर दीजिए। परन्तु वह मनुष्य उस आदमी की बात सुनकर आग–बबूला हो गया। वह बोला–जा–जा, पचो से कह दे कि मकान खाली नही होगा। मकान पचो का हे। में भी पच हू। क्या वे अकेले ही पच है?

नौकर ने पचो से यही बात कह दी। पच अचम्भे मे पड गये। कोई रास्ता न देखकर उन्होने अदालत की शरण ली। पुलिस आई। उसने मकान

खाली कर देने का सरकारी हुक्म दिखलाया और कहा– इसी वक्त मकान खाली करो वरना चालान कर दिया जायेगा।

वह आदमी खार खाये बैठा था। पुलिस की बात सुन कर उन पर उबल पडा, मार–पीट करके पुलिस को भगा दिया।

अब मामला जटिल बन गया। पहले पच फिर पुलिस मुद्दई बन गई। आखिर वह आदमी गिरफ्तार कर लिया गया। फौजदारी का मुकदमा चलाया गया।

उस आदमी ने अपने बचाव मे कहा– पुलिस ने मुझे अपने मकान से निकाल कर अत्याचार किया है। मकान पचो का है और मैं भी पच हू। फिर मुझे मकान मे से क्यो निकाला जाता है? मगर सार्वजनिक सम्पत्ति को न्यायालय व्यक्ति की सम्पत्ति कैसे स्वीकार कर लेता? फैसला हुआ तो मालिक बनने की जालसाजी और फौजदारी दोनो मे उसे कडी सजा मिली। मकान–मालिक बनना तो दर किनार, वह बस्ती मे भी नही रह सका।

मित्रो! इस दृष्टान्त को सामने रखकर सोचना चाहिए– यह शरीर पचभूत रूपी पचो का मकान है। हमे पुण्य रूप किराया देने पर कुछ कर लेने के लिए यह मिला है। अतएव इसका मालिक बनने की चेष्टा न करते हुए जल्दी ही शुभ काम कर लेना चाहिए, ताकि पचो को धक्का देकर निकालने की नौबत न आये। अगर आप वृथा स्वामित्व जमाने की चेष्टा करेगे तो अन्तत नरक रूप कारागार का अतिथि बनना पडेगा।

89 : सौ सयाने एक मत

एक वार अकबर ने बीरबल से पूछा– सो सयानो का एक मत और एक मूर्ख के सो मत' कैसे ? बीरबल ने कहा– जहापनाह! इसका उत्तर कल दूगा।

रात्रि मे बीरवल अच्छे–अच्छे सो सयानो के पास गया। उनसे कहा–लाल बाग हौज मे, बिना कुछ बोले, एक घडा दूध डाल आना।

उन्होने पूछा– वह किस काम आएगा ?

बीरबल– बादशाह सलामत होली खेलेगे।

समझदारो ने कहा– ठीक है। आज्ञा का पालन किया जायेगा।

सब समझदारो ने अपने–अपने मन मे सोचा–सो आदमी दूध के घडे हौज मे डालेगे। बादशाह को दूध पीना तो हे नहीं। अगर में उसमे एक घडा पानी डाल दू तो क्या हर्ज है ? इस प्रकार सोच कर सभी ने एक–एक घडा पानी हौज मे डाल दिया।

बादशाह और बीरबल हौज देखने गये। बादशाह ने होज देखकर कहा–यह क्या ? हौज मे तो पानी हे। इसे तो दूध से भरवाने को कहा था न ?

बीरबल – हुजूर, आपने दूध से ही भरवाने का हुक्म दिया ओर मंने भी लोगो को दूध से भरने के लिए कहा था।

वादशाह– अच्छा, उन सब को बुलाया जाये।

आखिर सब समझदार सयाने इकट्ठे हुए। बीरवल ने उनसे कडक कर कहा–मैंने दूध के घडे लाने के लिए कहा था। तुमने होज पानी से क्यो भर दिया ? तुमने बादशाह सलामत की आज्ञा को भग किया हे। तुम्हे भारी दण्ड दिया जायेगा।

सौ समझदारो मे से एक ने उठ कर निर्भयता से कहा–श्रीमान्, आपने हमे दोषी ठहराया और दण्ड देने का विचार भी कर लिया, मगर पहले हमारी अर्ज तो सुन लेते और बाद मे हुक्म फरमाते तो अच्छा था।

बादशाह – बोलो, क्या कहना चाहते हो?

समझदार – हुजूर, मै सिर्फ इस ख्याल से पानी का घडा लाया था कि बादशाह होली खेलेगे तो खेल के लिए दूध क्यो बिगाडा जाये? हा, पीने के लिए यदि दूध मगवाया होता तो हम अच्छे से अच्छा लाकर हाजिर करते। फिजूलखर्ची होते देख हमने किफायतसारी से काम किया है। मेरा ख्याल है कि मेरे और सब साथी भी इसी खयाल से पानी का घडा लाये होगे।

उन सब ने कहा–हा, यही विचार था।

उसने फिर कहा– हुजूर को मालूम हो गया कि हमने सिर्फ किफायतसारी की गर्ज से ही ऐसा किया है। मगर आप हम लोगो को फासी की सजा दे देगे तो आपके राज्य मे किफायत करने वाले लोग कहा से आएगे ?

बादशाह ने सोचा – बात ठीक है।

बीरबल बोले– हुजूर, देखा आपने सौ सयानो का एक मत।

बादशाह बीरबल के इस प्रत्यक्ष उदाहरण से बहुत प्रसन्न हुआ।

मित्रो! आप लोग अगर समझदार हैं तो आपका भी एक ही विचार, एक ही सकल्प और एक ही भावना होनी चाहिए। आपस मे फूट होने से सघ निर्बल और निस्तेज हो जाता है। चक्रवर्ती भरत ने जब अपने भाईयो को अपने अधीन करने का विचार किया था तो उन्होने एकमत होकर ही उसका प्रतिकार किया था।

90 : अस्पृश्यता का अभिशाप

जैनधर्म का विधान है कि तप करने से शूद्र भी ब्राह्मण बन सकता है। हिन्दू शास्त्र से भी इसी मत की पुष्टि होती है। नि सकोच होकर कहा जा सकता है कि आज शूद्रो के प्रति जितनी घृणा की जाती है, पहले उतनी नही की जाती थी। पीछे से लोगो ने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए मनगढत नियम बना लिए है। इन मनगढत नियमो से हिन्दू जाति की भारी क्षति हुई है।

हिन्दू जाति अपने अन्त्यज भाइयो पर इतना जुल्म करती है कि उनकी कहानी सुनकर ही हृदय रो उठता है। 'चाद' पत्रिका के अछूताक मे टामस नामक एक भारतीय ईसाई की आत्मकथा छपी है। इसे पढकर हृदय हिल उठता है और अन्तरात्मा पुकारने लगती है। ससार मे अपनी सभ्यता का सिक्का जमाने वाली हिन्दू जाति आज किस प्रकार निष्ठुर होकर अपने ही भाइयो पर अत्याचार पर तुली हुई है।

टामस भारतीय ईसाई थे। बडे हसमुख और प्रसन्नचित्त व्यक्ति थे। जाति–भाई होने के कारण ईसाइयो पर तो उनकी कृपा रहती ही थी, मुसलमानो पर भी वे बडे मेहरबान थे। सिर्फ हिन्दुओ पर बहुत क्रुद्ध रहते थे और उन्हे देखकर नाक–भौह सिकोडा करते थे। वे रामपुरा मे तहसीलदार थे। हिन्दुओ के मामले मे आवश्यकता से अधिक सख्ती से काम लिया करते थे।

उनके पास कई क्लर्क थे। उनमे एक ब्राह्मण पडित भी था। वह लिखता है–टामस अपने अदने से अदने मुसलमान क्लर्क को प्रेमदृष्टि से देखते थे, पर मै उनका रीडर था। बडी सावधानी से काम करता था, तो मुझ पर वक्र दृष्टि रखते थे। कभी थोडी सी भूल हो जाती तो साहब मुझे डाटते–फटकारते पर मुसलमान मुशी से बडी गलती हो जाने पर भी वे केवल मीठी फटकार बतलाते। उनके इस दुरगे व्यवहार से मेरा दिल जल उठता।

मैं मन ही मन सोचता— मुझ पर इतनी शनिदृष्टि क्यो रहती है? पर कारण पूछने की हिम्मत न हुई।

एक बार मेरी स्त्री बीमार पडी। दवा—दारू का प्रबन्ध करने के लिए छुट्टी की आवश्यकता पडी। मैंने छुट्टी मागी तो साहब ने बुरी तरह झिडक दिया। क्रोध के मारे मेरा सारा शरीर भन्ना उठा। आखे लाल हो गई परन्तु करता क्या, उनका मातहत जो ठहरा? पर निश्चय कर लिया कि आज कारण पूछ कर ही रहूगा।

अदालत बन्द होते ही मैं साहब के बगले पर गया। साहब कुर्सी पर बैठे थे। मै चुपचाप खडा हो गया। साहब बोले— पण्डित, क्या है?

मैंने नम्रता से कहा— हुजूर, कुछ प्रार्थना करना चाहता हू।

साहब रुखाई से बोले— मैं समझ गया। तुम लोगो को छुट्टी के सिवाय और भी कुछ काम है? मैं छुट्टी नही दे सकता।

मैंने कहा— नही, मै कुछ और ही निवेदन करना चाहता हू।

टामस— बोलो।

मैंने कहा— हुजूर कहीं नाराज न हो जाए।

टामस— नाराज होने की क्या बात है ? बोलो।

मैंने कहा— जब आपको देखता हू, हिन्दुओ पर अप्रसन्न ही देखता हू। मै जैसा काम करता हू आपभली भाति जानते हैं। मेरे साथी मुसलमान का भी काम आप देखते हैं। मैंने आपसे पहले कभी छुट्टी नही मागी। मेरी पत्नी इस समय बीमार है। सहानुभूति मिलनी दूर रही, मुझे झिडकिया मिल रही है। मै जानना चाहता हू कि हिन्दुओ पर आपकी अप्रसन्नता क्यो है?

कहने को तो कह गया, पर प्राण कापने लगे। उनकी तरफ देख न सका। नीची निगाह करके खडा हो गया। इतने मे साहब बोले— पण्डित, हिन्दुओं से मुझे बडी घृणा है। उन्हें देखकर मेरा खून खोल उठता है। हिन्दुओ जैसी पापी और भयकर कौम दुनिया मे दूसरी नहीं है। तुम लोग ईसाइयो और मुसलमानो को नीच मानते हो, पर वे तुम जेसे नीच नहीं हैं। हो सकता है कि वे दूसरो को सताया करते हों, पर अपने भाइयो के प्रति सुख—दु ख मे सहानुभूति रखते हैं। एक तुम्हारी कौम है, जो आपस मे प्रेम करना जानती ही नही। वह अपनो को ही सताती है। अपने भाइयो पर वह और अधिक निर्दयता—क्रूरता करती है— फिर भी दावा करते हो कि हमारी कौम ऊची है?

मै इसी देश मे इसी जाति मे पैदा हुआ हिन्दू था। मुझे ईसाई किसने बनाया? तुमने और केवल तुमने। तुमने मुझे राम और कृष्ण की गोद से

उठाकर ईसा की गोद मे फेक दिया। अब तुम मेरे कौन हो? हिन्दू जाति मेरी कौन होती है? मैं तुमसे घृणा न करूगा तो क्या उनसे घृणा करूगा, जिन्होने दुख मे मेरे प्रति सहानुभूति दिखलाई और पढालिखा कर आदमी बनाया?

पडित, तुम मेरी बात को न समझोगे। अच्छा, एक बात बताओ। तुम जिस बैंच पर बैठे हो, यदि इस पर कोई भगी या बसोर आ बैठे तो तुम क्या करोगे?

पण्डित–हुजूर, यह भी कोई पूछने की बात हे? अव्वल तो मैं अपने पास उसे बैठने ही न दूगा। अगर बैठ जायेगा तो उसकी मरम्मत किये बिना न रहूगा?

साहब– आखिर तुम उन बेचारो से घृणा क्यो करते हो? क्या वे मनुष्य नही हैं? क्या उन्हे भी तुम्हे उत्पन्न करने वाले भगवान ने उत्पन्न नही किया है?

पण्डित– भगवान ने तो सारी सृष्टि उत्पन्न की है, पर भगवान ने उन्हे नीच जाति मे जन्म दिया है। उनका आचार–विचार भी अपवित्र होता है।

साहब– सब तो ऐसे नही होते । कई शूद्रो का आचार–विचार पवित्र होता है। ऊची जाति के हिन्दुओ मे कोन से सभी शुद्ध आचार–विचार वाले होते है। उनके कई कृत्य तो शूद्रो से भी गये–बीते होते हैं।

पण्डित– कुछ भी हो, उच्च्च जाति वाले शूद्रो से हजार दर्जे अच्छे हैं।

साहब– यही तो तुम्हारी अध–परम्परा हे। तुम सब लोग अपने ही हाथो अपने धर्म–शास्त्रो पर हडताल फेरते हो। मनुस्मृति मे साफ कहा है कि जो ब्राह्मण ब्राह्मणधर्म का पालन नही करता, वह ब्राह्मण नही हे। शूद्र भी सुकृत्य करके ब्राह्मण बन सकता हे। अच्छा बताओ, तुम्हारे मदिर मे कोई शूद्र ठाकुरजी के दर्शन करने जाना चाहे तो तुम उसे जाने दोगे?

पण्डित– यह बिलकुल असम्भव है। इससे मन्दिर अपवित्र हो जायेगा और ठाकुरजी का अपमान होगा। अछूत लोग स्वय मदिर बनाकर प्रसन्नता से ठाकुरजी के दर्शन कर सकते हैं।

साहब– वहा ठाकुरजी का अपमान नही होगा?

साहब की बातो से में हतप्रभ हो गया। मुझसे कोई उत्तर न बन पडा। साहब फिर बोले– तुम लोग ऐसे पोचे विचारो के कारण अछूतो पर घोर अत्याचार करते हो। वे दिन–रात तुम्हारी सेवा करते है, फिर भी तुम उनसे घृणा करते हो, उन्हे जली–कटी सुनाते रहते हो। कुत्ता घरभर मे फिर जाये तो कुछ नही, अछूत तुम्हारे मकान की एक भी सीढी पर पाव नही रख

सकता। वे तुम्हारे कुए से पानी नही भर सकते, तुम्हारे मन्दिरो की तरफ दृष्टि नही डाल सकते। कितने अत्याचार उनकी सेवा के पुरस्कार है? जानते हो, तुम्हारी इस हृदयहीनता से उनके हृदय पर कितनी गहरी चोट लगती है और इससे तुम्हारी भी कितनी हानि हुई है?

पण्डित– जी नही।

साहब– अच्छा सुनो। किसी गाव मे एक बसोर रहता था। उसका टूटा–फूटा झौपडा गाव से बिलकुल बाहर था। उसके झौपडे से ही जगल लगा हुआ था। तुम समझ सकते हो कि उस बेचारे के जीवन के दिन कितनी भयपूर्ण अवस्था मे बीते होगे?

बसोर का परिवार बहुत छोटा था। उसमे तीन आदमी थे– पति, पत्नी और उनका आठ वर्ष का लडका। फिर भी उन्हे दोनो वक्त भरपेट रोटी नसीब नही होती थी। बसोर गाव मे बाजा बजाने जाता था और उसकी पत्नी दाई का काम करती थी। इस सेवा के बदले उन्हे वर्ष का बधा हुआ धान्य मिलता था और वह भी कितनी ही बार करुणा करने पर।

एक बार की बात सुनो। गर्मी के दिन थे। गाव मे मालगुजार के बेटे की शादी थी। बसोर को वहा बाजा बजाने के लिए जाना पडा। उसे आशा थी कि यहा से अच्छी आमदनी होगी। बेचारा दिनभर धूप मे बैठा–बैठा बाजा बजाता रहा पर उसकी आशा घातक बन गई। बेचारे को लू लग गई। शाम होते–होते बुखार चढ आया। घर आकर चटाई पर आ गिरा। सवेरा हुआ। बसोर मालगुजार के यहा न पहुँचा। बस, उसका चपरासी यमदूत के समान उसके घर आ पहुचा और गरज कर बोला–क्यो रे कमीने! तेरा इतना दिमाग! अब तक बाजा लेकर न आया।

बसोर को उस वक्त भी बुखार चढा था। दर्द के मारे उसका सिर फटा जा रहा था। आखे लाल हो रही थी। बडी दीनता से चपरासी से कहा–सरकार! मै मारे बुखार के मरा जा रहा हू। मुझ मे चलने की हिम्मत नही है।

बसोर की बात सुनते ही चपरासी को क्रोध चढ आया। बिगड कर बोला–साले मै खूब जानता हू। तू एक नम्बर का बदमाश है। शराब पी गया। अब बहाना बनाता है । चलता है कि नही?

बसोर और उसकी पत्नी ने बहुत प्रार्थनाए की पर चपरासी न माना। बसोर आखो मे आसू भर कर उसके पीछे–पीछे चला। उसने मालगुजार को अपना दुखडा सुनाया। मालगुजार ने नोकर को आज्ञा दी– इस बदमाश को गाव मे किसने बसाया है? इसे यहा से निकाल बाहर करो और

निकालते—निकालते इतना मारो कि यह भी याद रखे कि किसी के साथ बदमाशी कैसे की थी।

अब बसोर क्या करता ? जान पर खेल कर बाजा बजाता रहा। दियाबत्ती होते—होते लडखडाता हुआ घर लौटा। द्वार पर पहुचते ही उसे चक्कर आ गया, गिर पडा। आधी रात होते—होते उसकी जीवन—ज्योति सदा के लिए बुझ गई। उसकी पत्नी निराश्रित हो गई। बालक अनाथ हो गया।

प्रात काल हुआ। विधवा बसोरिन ने बिलखता हृदय लेकर द्वार खोला। फिलहाल उसके सामने पति के शव को ठिकाने लगाने का सवाल था। पास मे पैसा नही। सारा गाव उसे अस्पृश्य —अपवित्र समझता है। पति का शव ठिकाने कैसे लगेगा? उस गाव के दूसरे कोने मे एक बसोर और रहता था। विधवा पति के पास अपने अज्ञानी बालक को बिठला कर उसके पास गई। वह उससे बोला— बहिन, मैं भी तुम्हारे समान दु खी हू। मै अकेला आदमी क्या करू? तुम मालगुजार के यहा जाओ। अच्छा, मै भी चलता हू। शायद उसे दया आ जाये और कुछ बन्दोबस्त कर दे।

बसोरिन उसके साथ मालगुजार के घर पहुची। मालगुजार दालान मे बैठा हुक्का गुडगुडा रहा था। उसे देखते ही बसोरिन चीख मार कर रो उठी। बोली— सरकार, मैं लुट गई। विधना ने मेरा सुहाग छीन लिया। मालगुजार पशु के समान था। उसके हृदय मे दया का एक कण भी नही था। वह बिगड कर बोला—लुट गई तो मैं क्या करू? मैं तो तेरा सुहाग लोटा नही सकता। राड सबेरे—सवेरे अपशकुन करने आ गई।

साथ वाले बसोर ने कहा— सरकार, आप सच कहते हे। कोई किसी का सुहाग नही लोटा सकता। दया करके ऐसा प्रबन्ध कर दीजिए कि उस बेचारे की लाश ठिकाने लग जाये।

इस पर मालगुजार और भी तीखा होकर बोला— मेने क्या तुम्हारे बाप का कर्ज खाया हे? जाओ, अपनी राह लो।

बसोर हाथ जोडकर कातर स्वर मे कहने लगा—सरकार, ऐसा न कहिए। आप ही हमारे माई—बाप हें। हम आपके राज्य मे रहते हे। आप ही हमारी न सुनेगे तो कौन सुनेगा?

पर उस पाषाण—हृदय पर इस कातरोक्ति का कुछ भी प्रभाव नही पडा। वह गरज कर बोला— सीधी तरह जाते हो कि नही? परन्तु बसोरिन न मानी। विलाप करते—करते लेट गई और बोली—पिता, में आपकी बेटी हू। मुझ पर दया कीजिए।

अब तो मालगुजार का गुस्सा और ज्यादा भडक उठा। कहने लगा– हाय,हाय, सबेरे–सबेरे ऐसा अपशकुन। कोई है, इन सालो को मार–मार कर अभी हटा दो।

टामस बोले–पडित, यह है तुम्हारी हिन्दू जाति की उच्चतर करतूत। हिन्दू अपनी सेवा करने वालो के साथ ऐसा निष्ठुर व्यवहार करते है। पर तुम्हारे समाज की गौरव–गाथा यही समाप्त नही हो जाती। आगे और सुनो।

पति के मरने से बसोरिन बडी दुखी हो गई। अब पुत्र ही उसका एक मात्र आधार था। वही उसकी आखो का तारा और आशाओ का केन्द्र था। उसका नाम दमरू था। माता के लाड–प्यार से वह कुछ स्वच्छन्द हो गया था। रोटी खाई नही कि बाहर चला जाता। माता भी उससे कुछ न कहती थी।

मालगुजार के घर के पिछवाडे बेर के कई पेड लगे थे। मीठे–मीठे बेर खाने के लालच से दमरू वहा पहुच जाया करता था। मालगुजार का एक सात–आठ वर्ष का बालक भी बेर बीनने आया करता था। बच्चे छूआछूत का भेद नही समझते। दमरू पेड पर चढ जाता और डालिया हिलाकर पडापड बेर बरसाता। मालगुजार का लडका बेर बीनता। बाद मे दोनो बाट कर खाते। धीरे–धीरे दोनो मे बडा प्रेम हो गया। एक दिन मालगुजार ने दोनो को देख लिया। उसे बडा क्रोध आया । अपने लडके को दो चपत लगाकर कहा–खबरदार, अब इस नीच के साथ मत रहना। दमरू से कहा खबरदार, आगे इधर न आना नही तो चमडी उधडवा लूगा। मालगुजार के इतना कहने पर भी दोनो मिलते रहे।

गाव मे एक छोटा सा मदिर था। एक दिन मालगुजार के लडके ने दमरू से कहा – आज मन्दिर मे जलसा होगा। प्रसाद मे पेडे बटेगे। तुम भी मेरे साथ चलो। पेडे का नाम सुनते ही दमरू नाच उठा। उस बेचारे को नहीं मालूम था कि मेरे जाने से मन्दिर अपवित्र हो जायेगा। ताली पीटता हुआ वह मन्दिर मे जा पहुचा। उसे देखते ही मन्दिर मे हलचल मच गई। यह हलचल देख दमरू भौचक्का–सा खडा रह गया। पुजारी पागल हो उठा। बोला–कलयुग मे कमीनो के हौसले इतने बढ गये है। यह कहकर वह दमरू पर टूट पडा। उसे पशु की तरह पीटा। हिन्दू लोग अहिसा की दुहाई दिया करते हैं। वे छोटे–मोटे कीडो पर अवश्य दया करते हैं पर उनके हृदय मे मनुष्य रूपधारी अछूतो के लिए दया का एक भी कण शेष नही है।

प्रसाद के बदले मार खाकर दमरू रोता–विलखता घर पहुचा। माता अपने लाल की यह दशा देख अस्थिर हो गई। गोद मे लेकर स्नेहपूर्वक पूछा–क्या हुआ ? दमरू ने सब हाल सुनाया। माता बोली– बेटा, उधर कभी मत जाना।

मन्दिर मे जाने की भरपूर सजा दमरू को मिल चुकी थी, फिर भी लोगो को इससे सन्तोष न हुआ। उन्होने मालगुजार के पास जाकर शिकायत की । बसोरिन बुलाई गई । लोग क्रोध से पागल हो रहे थे। अछूत स्त्री होने के कारण बसोरिन पर हाथ नही उठाया, केवल गालिया देकर रह गये।

बसोरिन अब अपने लडके पर पूरी नजर रखने लगी। बहुत दिन बीत गये। एक दिन आख बचाकर वह फिर बाहर निकल गया। खेलते–खेलते उसे प्यास लगी। कुए पर दो चार स्त्रिया पानी भर रही थी। दमरू वहा जा पहुचा। पानी मागने पर स्त्रिया उसे गालिया देने लगी। अपने–अपने घडे पटक दिये । बेचारा दमरू भौचक रह गया। भय के मारे उसके प्राण काप उठे। वह घर की तरफ भाग खडा हुआ।

गाव भर मे हो हल्ला मच गया। मालगुजार के यहा बसोरिन की बुलाहट हुई। वह जाकर बोली–सरकार, मेने उसे बहुत समझाया, पर वह मानता नही। नादान बालक है। इस बार माफ कीजिये। अब कही बाहर नही जाने दूगी।

मालगुजार ने कडक कर कहा–राड, अब तेरा होसला बहुत बढ गया है। मरम्मत हुए बिना न मानेगी। और उसने अपने चपरासी को इशारा करके कहा–मार इस राड को, गाव भर मे ऊधम मचा रखा है। कोई हर्ज नही, बाद मे नहा लेना। बसोरिन बहुत गिडगिडाई पर चपरासी ने कुछ भी ध्यान नही दिया।

बसोरिन रोती–पीटती घर आई। उस दिन से बसोरिन बहुत सावधान रहने लगी। उसके मन मे सदैव यह भय बना रहता था कि बच्चा दो बार अपराध कर बैठा है। अब कही फिर अपराध कर बेठा तो न जाने क्या हाल होगा। वह मनाया करती– हे भगवान्, तुम्ही मेरे बच्चे पर दया रखना।

भगवान ने उसकी कातर वाणी सुन ली। कुछ ही दिनो के बाद उस गाव मे दो मिशनरी मेमे आई। बसोरिन ने भी उनका उपदेश सुना। उनकी दयालु प्रकृति से बसोरिन को बडी आशा बधी। उसने मेमो को अपना दुखडा सुनाया। मेमो की आखे भर आई। उन्होने कहा– मसीह दुखियो का दुख दूर करने आया था। तुम हमारे साथ चलो। मसीह तुम पर दया करेगा।

बसोरिन बडी प्रसन्नता के साथ अपने बेटे को लेकर उनके साथ चली गई। अब उसने नये ससार मे प्रवेश किया, जहा न कोई बडा, न कोई छोटा, न ऊचा और न नीचा था। सभी बराबर थे। सभी को सब के दु ख–सुख की चिन्ता थी। वहा बसोरिन को कोई खरी–खोटी सुनाने वाला न था। अब वह अच्छे कपडे पहनती थी, अच्छा भोजन पाती थी। सचमुच ही उस दुखिया पर मसीह ने दया की। अच्छा पडित! बतलाओ, इन दो आदमियो के ईसाई हो जाने से तुम्हारी क्या हानि हुई?

पण्डित– वे अपनी इच्छा से ईसाई हो गये तो कोई क्या करे? इससे मेरी और हिन्दू जाति की हानि ही क्या है?

साहब– ठीक है, उनसे किसी ने ईसाई होने के लिए नही कहा था। पर तुम्हारे हिन्दू समाज ने ऐसा निर्मम व्यवहार किया था कि उनके सामने ईसाई या मुसलमान हो जाने के सिवाय जीवन–रक्षा का और कोई उपाय ही नही था। अगर अछूतो के साथ तुम्हारा ऐसा ही व्यवहार रहा तो वह दिन दूर नही, जब सब अछूत हिन्दू–धर्म की शरण त्याग कर अन्य धर्मो के आश्रय मे जा बसेगे।

साहब ने फिर कहा– पण्डित, एक बात और बतलाओ। वही ईसाई हुआ दमरू तुम्हारी बराबरी मे आ बैठे तो तुम उससे घृणा करोगे या नही ?

पण्डित– मै घृणा क्यो करूगा? कोई भी ईसाइयो से घृणा नही करता।

साहब ने हसकर कहा – बलिहारी है तुम्हारी बुद्धि की ! पहले उससे घृणा करते थे, क्योकि वह हिन्दू था और तुम्हारे ठाकुरजी को श्रद्धा के साथ मस्तक झुकाता था और अब घृणा नही करोगे, क्योकि वह हिन्दू नही है और तुम्हारे ठाकुरजी से घृणा करता है। कैसी मूर्खता है? क्यो आखे रहते अन्धे हो गये हो?

साहब– महात्मा ईसा की शीतल छाया मे दमरू की यथेष्ट उन्नति हुई और टामस नाम लेकर वह तुम्हारे सामने तहसीलदार के रूप मे तुम्हारा स्वामी बना बैठा है।

मित्रो! इस उदाहरण से मिलने वाली शिक्षा स्पष्ट है। हिन्दुओ नेत्र खोल कर देखो।

91 : माया की महिमा

दो मित्र थे । दोनो शामिल रहते थे। एक दिन दोनो ने परस्पर प्रतिज्ञा की कि किसी भी अवस्था मे हम एक दूसरे को नही भूलेगे। कोई केसा ही ऋद्धिशाली हो जाये अथवा केसा भी गरीब रहे, एक दूसरे को बराबर याद रखेगा और सहायता करेगा। उस समय दोनो की स्थिति समान थी, अतएव यह प्रतिज्ञा करने मे किसी को कोई कठिनाई नही थी।

कुछ समय बाद एक मित्र को कोई बडा औहदा मिल गया। अधिकार भी मिल गया और धन भी प्राप्त हो गया। दूसरा मित्र ज्यो का त्यो गरीब ही रहा।

गरीब मित्र ने सोचा– मेरा मित्र सब प्रकार से सम्पन्न हो गया हे, लेकिन मुझे कभी स्मरण ही नहीं करता। सचमुच गरीब को गरीब के सिवाय कोई नही पूछता। कहावत–

माया से माया मिले, कर–कर लम्बे हाथ।
तुलसीदास गरीब की, कोई न पूछे बात।।

गरीब मित्र ने सोचा– मेरा मित्र मुझे नही पूछता तो न सही, में अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसे नही भूल सकता। में स्वय उसके पास जाकर मिलूगा।

यह सोचकर गरीब अपने धनी मित्र के पास गया। उसने पूर्ववत् स्नेह के साथ अपने मित्र का अभिवादन किया। मगर धनी मित्र उसकी ओर चकित दृष्टि से देखने लगा और बोला – मेंने पहचाना नही, कोन हो तुम?

गरीब ने सोचा– आगे की बात तो दूर ही रही, यह तो मुझे पहचानता भी नहीं है । प्रकट मे उसने कहा–मेंने सुना था कि मेरा मित्र अन्धा हो गया। सोचा, जाकर देख आऊ , क्या हाल हे? बिलकुल अन्धा हो गया है या

थोड़ा– बहुत सूझता भी है? यहा आकर देखा कि मित्र तो एकदम ही अन्धा हो गया है।

धनी मित्र ने कहा– यह कैसे कह रहे हो?

गरीब ने उत्तर दिया– आप मुझे बिलकुल भूल गये। अब आपकी वे आखे नही रही, जो पतिज्ञा करते समय थी। अब मैं यहा से भागता हू, वर्ना मैं भी अन्धा हो जाऊगा।

माया से पभावित होकर लोग अन्धे हो जाते है ।

92 : अर्थ का अनर्थ

कई वार वक्ता लोग कथा के वाहरी वर्णन को वडे अलकारो से सजाते है पर सार–भूत वर्णन को वहुत सूक्ष्मरूप देते हे, इसलिए श्रोता उस कथा के सार को समझ ही नही सकते। कई जगह ऐसा भी होता हे कि श्रोता ही अर्थ का अनर्थ कर देता है। वक्ता कहता कुछ ओर हे ओर श्रोता कुछ ओर ही समझता है।

एक पण्डितजी रामायण की कथा बाच रहे थे। उन्होने कहा– 'सीता–हरण हो गया– पर एक श्रोता ने समझा 'सीता को हरणिया हो गया' यानी सीता मृगी (हरिणी) बन गई।

कथा रोज बचती थी। वह श्रोता हमेशा उत्सुक रहता कि देखे सीता हरिणी से वास्तविक सीता कब बनती है। वहुत दिनो बाद कथा समाप्त होने के अवसर तक भी हरिणी बनी हुई सीता की वास्तविक सीता होने की बात न सुनी, तब उस श्रोता से न रहा गया। वह बोल ही उठा–'पण्डितजी सीता हरिणी तो हो गई पर फिर सीता हुई या नही?'

पण्डितजी ने अपने सिर पर हाथ लगाकर कहा– फूटे नसीव तुम्हारे और हमारे शामिल ही । मेंने कहा था क्या ओर तुमने समझा क्या।'

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर

– एक परिचय –

स्थानकवासी जैन परम्परा मे आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा एक महान् क्रातिकारी सत हुए है। आषाढ शुक्ला अष्टमी सवत् 2000 को भीनासर मे सेठ हमीरमलजी बाठिया स्थानकवासी जैन पौषधशाला मे उन्होने सथारापूर्वक अपनी देह का त्याग किया। उनकी महाप्रयाण यात्रा के बाद चतुर्विध सघ की एक श्रद्धाजलि सभा आयोजित की गई जिसमे उनके अनन्य भक्त भीनासर के सेठ श्री चम्पालाल जी बाठिया ने उनकी स्मृति मे भीनासर मे ज्ञान–दर्शन चारित्र की आराधना हेतु एक जीवन्त स्मारक बनाने की अपील की। तदन्तर दिनाक 29 4 1944 को श्री जवाहर विद्यापीठ के रूप मे इस स्मारक ने मूर्त रूप लिया।

शिक्षा–ज्ञान एव सेवा की त्रिवेणी प्रवाहित करते हुए सस्था ने अपने छह दशक पूर्ण कर लिए है। आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा के व्याख्यानो से सकलित, सम्पादित ग्रथो को 'श्री जवाहर किरणावली' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। वर्तमान मे इसकी 32 किरणो का प्रकाशन सस्था द्वारा किया जा रहा है इसमे गुफित आचार्यश्री की वाणी को जन–जन तक पहुचाने का यह कीर्तिमानीय कार्य है। आज गौरवान्वित है गगाशहर–भीनासर की पुण्यभूमि जिसे दादा गुरु का धाम बनने का सुअवसर मिला और ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा की कालजयी वाणी जन–जन तक पहुच सकी।

सस्था द्वारा एक पुस्तकालय का सचालन किया जाता है जिसमे लगभग 5000 पुस्तके एव लगभग 400 हस्तलिखित ग्रथ हैं। इसी से सम्बद्ध वाचनालय मे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक– कुल 30 पत्र–पत्रिकाये उपलब्ध करवाई जाती हैं। प्रतिदिन करीब 50–60 पाठक इससे लाभान्वित होते हैं। ज्ञान–प्रसार के क्षेत्र मे पुस्तकालय–वाचनालय की सेवा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और क्षेत्र मे अद्वितीय है।

महिलाओ को स्वावलम्बी बनाने हेतु सस्था द्वारा सिलाई, बुनाई, कढाई प्रशिक्षण केन्द्र का सचालन किया जाता है, जिसमे योग्य अध्यापिकाओ द्वारा महिलाओ व छात्राओ को सिलाई, बुनाई, कढाई व पेन्टिग कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है। इससे वे अपने गृहस्थी के कार्यों मे योगदान दे सकती हैं और आवश्यकता पडने पर इस कार्य के सहारे जीवन मे स्वावलम्बी भी बन सकती हैं।

सस्था के सस्थापक स्वर्गीय सेठ श्री चम्पालाल जी बाठिया की जन्म जयन्ती पर प्रत्येक वर्ष उनकी स्मृति मे एक व्याख्यानमाला का आयोजन किया जाता है जिसमे उच्च कोटि के विद्वानो को बुलाकर प्रत्येक वर्ष अलग–अलग धार्मिक, सामाजिक विषयो पर प्रवचन आयोजित किए जाते है।

उपरोक्त के अलावा प्रदीप कुमार जी रामपुरिया स्मृति पुरस्कार के अन्तर्गत भी प्रतिवर्ष स्नातकस्तरीय कला, विज्ञान एव वाणिज्य सकाय मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियो को नकद राशि, प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है एव स्नातकोत्तर शिक्षा मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने वाले एक विद्यार्थी को विशेष योग्यता पुरस्कार के रूप मे प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है।

विद्यापीठ द्वारा ठण्डे, मीठे जल की प्याऊ का सचालन किया जाता है। जनसाधारण के लिए इसकी उपयोगिता स्वय–सिद्ध है। इस प्रकार अपने बहुआयामी कार्यों से श्री जवाहर विद्यापीठ निरन्तर प्रगति–पथ पर अग्रसर है।